राजस्थान भारती प्रकाशन

राजस्थानी व्रतकथाएँ



सम्पादक तथा अनुवादक

मोहनलाल पुरोहित





प्रकाशक

सादूल राजस्थानी रिसर्च इन्स्टीट्यूट

बीकानेर

प्रकाशक
सादूल राजस्थानी रिसर्च इन्स्टीट्यूट
बीकानेर (राजस्थान)

प्रथम संस्करण
सन् १९६१
मूल्य ३) ५० नया पैसा

मुद्रक
संगीत प्रेस, हाथरस (उ० प्र०)

अनुक्रमणिका

परिशिष्ट

दो शब्द

भारतीय लोक-जीवन में व्रत और अनुष्ठान का अपना एक विशेष महत्त्वपूर्ण स्थान रहा है। यहाँ ऐसा कोई घर नहीं मिलेगा, जहाँ किसी न किसी प्रकार का व्रत अथवा अनुष्ठान विधिवत् सम्पन्न न होता हो। वैदिक संहिता, ब्राह्मण, गृह्यसूत्र, पुराण आदि तो इस विषय में विशेष उल्लेखनीय हैं। पौराणिककाल में ये व्रत और अनुष्ठान बड़े ही लोकप्रिय एवं अधिक महत्त्व प्राप्त करने लगे थे। प्रत्येक पुराण में प्रायः इनका विशद् वर्णन हमें देखने एवं पढ़ने को मिलता है।

*व्रत शब्द का अर्थ होता है—'किसी बात का पक्का संकल्प, प्रतिज्ञा, आराधना, भक्ति, पुण्य के साधन, उपवासादि नियम विशेष, व्यवस्था-विधि, निर्दिष्ट अनुष्ठान-पद्धति, यज्ञ, अनुष्ठान एवं कर्म।

वैसे व्रत शब्द का अर्थ भोजन करना भी होता है। किसी पुण्य तिथि आदि के उपलक्ष में अथवा किसी निश्चित कामना के वशीभूत होकर स्वेच्छापूर्वक सुख-सम्पत्ति, पुण्य, संतान आदि की प्राप्ति के लिए नियमित रूप से पूर्ण विधान के साथ उपवास या भोजन करना व्रत कहलाता है। निर्जल, निराहार, केवल फलाहार, दुग्ध-पान, एकान्न भोजन, एक ही समय का भोजन आदि अनेक प्रकार के नियम इन व्रत एवं अनुष्ठानों में हमें देखने को मिलते हैं। इस प्रकार के व्रत एक दिन के लिए या अनेक दिनों के लिए भी होते हैं।

संस्कृत-शब्दार्थ-कौस्तुभ, पृ० १०८४

व्रत का निरुक्त में सामान्य अर्थ 'कर्म' बतलाया गया है। यह कर्ता को शुभ अथवा अशुभ कर्मों से बाँध लेता है, अतः इसे व्रत कहा गया है। वैसे यदि देखा जाय तो व्रत का प्रधान उद्देश्य आत्मशुद्धि तथा परमात्म-चिन्तन से है। संसार में नाना-प्रकार के झँझटों में फँसे रहने के कारण परमात्मा का चिन्तन एवं भगवद्-भजन का अवसर हमें नहीं के बराबर ही मिलता है। व्रत के दिन यह इस प्रकार का अवसर आप से आप सुलभ हो जाता है। व्रत में उपवास का विधान रखा जाता है। केवल अन्न आदि के परित्याग से ही उपवास की पूर्ति नहीं हो जाती। उपवास का शाब्दिक अर्थ है 'उप समीपे वासः' समीप में रहना अर्थात् अपने इष्टदेव के पास रहना। क्योंकि सच्चा उपवास तो परमात्मा का चिन्तन करते हुए उनके साथ तन्मय होकर रहना है। इसके लिए अन्न-पान का त्याग भी आवश्यक बतलाया गया है। कारण, निराहार रहने से प्राणी विशेष की विषय-वासनाएँ स्वयं अपने आप ही निवृत्त हो जाती हैं।

भारतवर्ष का संसार के देशों में अपनी निजी संस्कृति एवं सभ्यता को लेकर विशेष स्थान रहा है। यह देश मूल में धर्म-भीरु रहता आ रहा है। यहाँ के लगभग सभी कार्यों में धर्म का पुट अथवा यों कह सकते हैं कि धर्म की यहाँ प्रधानता रही है। अतः ऐसी स्थिति में यहाँ के उत्सव, जयन्तियाँ, त्यौहार, व्रत, अनुष्ठान आदि सभी का धार्मिक स्वरूप ग्रहण कर लेना कोई आश्चर्यजनक नहीं माना जा सकता। व्रत विशेष रूप से धार्मिक अनुष्ठान की कोटि में ठहराए जा सकते हैं। अतः इनके लिए कुछ विधि-विधान, नियम भी पालने होते हैं।

व्रत करने का वैसे तो स्त्री-पुरुष तथा सभी प्रकार के वर्णाश्रम वालों को अधिकार है। फिर भी बालिकाओं के लिए

भिन्न प्रकार के व्रत बतलाए गए हैं, तो सौभाग्यवती युवतियों के लिए विशेष प्रकार के एवं विधवाओं के लिए विशेष नियमों से आचरण करने की व्यवस्था वाले व्रत बतलाए गए हैं। कुछ व्रत ऐसे भी हैं जिन्हें बालिकाएँ, सौभाग्यवतियाँ एवं विधवाएँ आदि सभी को एक-सा करने का अधिकार है।

यह हम पूर्व ही उल्लेख कर चुके हैं कि हमारा देश धर्म-प्रधान देश रहा है। धर्म और व्रत का सम्बन्ध बड़ा ही गहरा है। ऐसा शायद ही कोई धर्म होगा जिसमें व्रत के आचरण को लेकर उसके महत्त्व पर प्रकाश न डाला गया हो। व्रत का ठीक-ठीक निर्णय करने के लिए जितना आग्रह हमारे धर्म में दिखाया गया है, उतना हम समझते हैं किसी अन्य धर्म में शायद ही होगा। अतः ये व्रत और अनुष्ठान हमारे धर्म-शास्त्र के शाश्वत अंग प्रायः बन गए हैं।

प्रस्तुत पुस्तक राजस्थानी व्रतकथाओं को लेकर है।

प्रथम सोलह कथाओं का हिन्दी में अनुवाद किया गया है, शेष कथाओं का अनुवाद समयाभाव के कारण नहीं हो सका। पाठक देखेंगे हमने अपनी ओर से हर प्रकार का प्रयास किया है कि सभी प्रकार की व्रतकथाएँ इस संग्रह में स्थान पा सकें। इसी दृष्टिकोण से हमने जैन-समाज की भी व्रतकथाओं को नमूने के तौर पर यहाँ स्थान देना अपना कर्तव्य एवं उत्तरदायित्व समझा है।

राजस्थान में प्रचलित सात वारों की व्रत-कथाएँ भी हमने इसमें ली हैं। इस विषय में हमारे कुछ साथियों का ऐसा आग्रह रहा-ये कथाएँ हिन्दी भाषा में रहें तो ठीक रहेगा। अपने विद्वान् साथियों के आग्रह को टालना हमने किसी भी प्रकार से उचित

नहीं समझा । अतः 'सात वारों' की कथाएँ हमने हिन्दी रूपान्तर में दी हैं । अतिरिक्त कुछ प्रसिद्ध व्रतकथाएँ हमने श्रद्धेय पं० श्री झावरमल जी शर्मा द्वारा सम्पादित भी ली हैं । श्री पंडित जी के हम बड़े ही आभारी हैं ।

राजस्थानी संस्कृति,भारतीय संस्कृति का एक अभिन्न अंग है । पाठक देखेंगे, हमारी इन व्रत कथाओं में भी भारतीय व्रतकथाओं के सभी तत्त्व विद्यमान हैं.फिर भी राजस्थान की अपनी विशेषता, उसके भौगोलिक, ऐतिहासिक, सामाजिक, राजनीतिक कारणों को लेकर रही है । अतः भाषा की दृष्टि से एवं स्थानीय विशेषताओं के कारण ये व्रत-कथाएँ भारतीय लोकसाहित्य के एक विशेष अध्ययन एवं पठन-पाठन का विषय बन जाती हैं । अभिप्रायों का जहाँ तक प्रश्न है, वे तो राजस्थानी व्रतकथाओं के बड़े ही अनोखे एवं विचित्र हैं । मेरा अपना ऐसा ख्याल है, कुछ अभिप्राय तो ऐसे हैं जिन्हें अपने ही किस्म के कारण 'टाइप' की संज्ञा दी जा सकती है ।

व्रत एवं त्योहार क्यों हैं ? इनका उद्‌गम कैसे रहा । आज हमारी सभी सभ्य किंवा असभ्य कहलाने वाली जातियों में, यहाँ तक कि आदिवासियों में भी किसी न किसी रूप में व्रत अथवा त्योहार इतनी लोकप्रियता और आदर से क्यों देखा जा रहा है ? यह सब एक शोध के विद्यार्थी के लिए विचारणीय प्रश्न है । हम यहाँ इस विषय में इतनी गहराई में न जाकर उन्हीं विद्वानों पर इसे छोड़ देते हैं । फिर भी यह तो निर्विवाद सत्य है कि प्रत्येक जाति के व्रत और त्योहार उस समाज और जाति विशेष का इतिहास, उसकी सभ्यता, संस्कृति के दर्पण और उसकी परम्परा के परिचायक हैं । व्रतों और त्योहारों को देखकर इस बात का सहज ही में अनुमान लगाया जा सकता है कि उस जाति में कितना ओज और शौर्य है । इनके आधार पर

ऐतिहासिक स्मृति तो बनी रहती है साथ ही ये जीवन के निर्माण में भी सहायक सिद्ध होते हुए प्रतीत होते हैं।

राजस्थान के निवासी अपनी संस्कृति, प्राचीन सभ्यता और आचार-विचार को इतनी शताब्दियों के परिवर्तन के उपरान्त भी आज तक क्यों कायम रख सके ? इस पर गहराई से विचार करने पर हमें इसके मूल में व्रतों और त्योहारों का तत्त्व छिपा हुआ दृष्टिगोचर होता है। अस्तु

अंत में इतना और निवेदन करना चाहते हैं कि इस संग्रह को प्रस्तुत करने में जिन-जिन विद्वान् साथियों का सहयोग हमें प्राप्त रहा है-हम उन सभी के प्रति कृतज्ञ हैं। श्रद्धेय श्री अगरचंद जी नाहटा के हम बड़े ही आभारी हैं। लेखक ने श्री अभय जैन ग्रंथालय एवं श्री नाहटा जी के व्यक्तिगत संग्रह का हृदय खोलकर उपयोग किया है। श्री अनूप संस्कृत लाइब्रेरी एवं वहाँ के विशेष अधिकारी महोदय श्री बाबूराम जी सक्सेना के अमूल्य सहयोग को लेखक नहीं भूल सकता। आपने अपना अमूल्य समय देकर हमारे कार्य को आगे बढ़ाया है। भाई श्री मुरलीधर जी व्यास तो विशेष धन्यवाद के पात्र हैं। आपके अमूल्य सुझाव एवं सहयोग के बिना इस संग्रह का प्रस्तुत होना भी सम्भव नहीं हो सकता था।

इस पुस्तक की भाषा का जहाँ तक प्रश्न है, कथाएँ सम्भवतः सभी इलाकों की ली गई हैं। अतः भाषा का एकीकरण, उसकी बरतनी, उसकी शैली आदि में हमने किसी भी प्रकार का हेर-फेर अपनी ओर से नहीं किया है-उसे मूल रूप में रखना उचित समझा है।

मोहनलाल पुरोहित

प्रकाशकीय

श्री सादूल राजस्थानी रिसर्च-इन्स्टीट्यूट बीकानेर की स्थापना सन् १९४४ में बीकानेर राज्य के तत्कालीन प्रधान मन्त्री श्री के० एम० पणिक्कर महोदय की प्रेरणा से, साहित्यानुरागी बीकानेर-नरेश स्वर्गीय महाराजा श्री सादूलसिंहजी बहादुर द्वारा संस्कृत, हिन्दी एवं विशेषत: राजस्थानी साहित्य की सेवा तथा राजस्थानी भाषा के सर्वाङ्गीण विकास के लिये की गई थी।

भारतवर्ष के सुप्रसिद्ध विद्वानों एवं भाषाशास्त्रियों का सहयोग प्राप्त करने का सौभाग्य हमें प्रारम्भ से ही मिलता रहा है।

संस्था द्वारा विगत १६ वर्षों से बीकानेर में विभिन्न साहित्यिक प्रवृत्तियां चलाई जा रही हैं, जिनमें से निम्न प्रमुख है—

१. विशाल राजस्थानी-हिन्दी शब्दकोश

इस सम्बन्ध में विभिन्न स्रोतों से संस्था लगभग दो लाख से अधिक शब्दों का संकलन कर चुकी है। इसका सम्पादन आधुनिक कोशों के ढंग पर, लंबे समय से प्रारम्भ कर दिया गया है और अब तक लगभग तीस हजार शब्द सम्पादित हो चुके हैं। कोश में शब्द, व्याकरण, व्युत्पत्ति, उसके अर्थ और उदाहरण आदि अनेक महत्वपूर्ण सूचनाएं दी गई हैं। यह एक अत्यन्त विशाल योजना है, जिसकी सन्तोषजनक क्रियान्विति के लिये प्रचुर द्रव्य और श्रम की आवश्यकता है। आशा है राजस्थान सरकार की ओर से, प्रार्थित द्रव्य-साहाय्य उपलब्ध होते ही निकट भविष्य में इसका प्रकाशन प्रारम्भ करना सम्भव हो सकेगा।

२. विशाल राजस्थानी मुहावरा कोश

राजस्थानी भाषा अपने विशाल शब्द भंडार के साथ मुहावरों से भी समृद्ध है। अनुमानत: पचास हजार से भी अधिक मुहावरे दैनिक प्रयोग में लाये जाते हैं। हमने लगभग दस हजार मुहावरों का, हिन्दी में अर्थ और राजस्थानी में उदाहरणों सहित प्रयोग देकर सम्पादन करवा लिया है और शीघ्र ही इसे प्रकाशित करने का प्रबन्ध किया जा रहा है। यह भी प्रचुर द्रव्य और श्रम-साध्य कार्य है।

यदि हम यह विशाल संग्रह साहित्य-जगत को दे सके तो यह संस्था के लिये ही नहीं किन्तु राजस्थानी और हिन्दी जगत के लिये भी एक गौरव की बात होगी ।

३. आधुनिक राजस्थानी रचनाओं का प्रकाशन

इसके अंतर्गत निम्नलिखित पुस्तकें प्रकाशित हो चुकीं हैं:—

१. **कळायण**, ऋतु काव्य । ले० श्री नानूराम संस्कर्ता ।

२. **आभै पटकी**, प्रथम सामाजिक उपन्यास । ले० श्री श्रीलाल जोशी ।

३. **वरस गांठ**, मौलिक कहानी संग्रह । ले० श्री मुरलीधर व्यास ।

'राजस्थान-भारती' में भी आधुनिक राजस्थानी रचनाओं का एक अलग स्तम्भ है, जिसमें भी राजस्थानी कवितायें. कहानियां और रेखाचित्र आदि छपते रहते हैं ।

४. 'राजस्थान-भारती' का प्रकाशन

इस विख्यात शोधपत्रिका का प्रकाशन संस्था के लिये गौरव की वस्तु है । गत १४ वर्षों से प्रकाशित इस पत्रिका की विद्वानों ने मुक्त कंठ से प्रशंसा की है । बहुत चाहते हुए भी द्रव्याभाव, प्रेस की एवं अन्य कठिनाइयों के कारण, त्रैमासिक रूप से इसका प्रकाशन संभव नहीं हो सका है । इसका भाग ५ अंक ३–४ **'डा० लुइजि पिओ तैस्सितोरी विशेषांक'** बहुत ही महत्वपूर्ण एवं उपयोगी सामग्री से परिपूर्ण है। यह अंक एक विदेशी विद्वान की राजस्थानी साहित्य सेवा का एक बहुमूल्य सचित्र कोश है । पत्रिका का अगला ७वां भाग शीघ्र ही प्रकाशित होने जा रहा हैं । इसका अंक १–२ राजस्थानी के सर्वश्रेष्ठ महाकवि पृथ्वीराज राठोड़ का सचित्र और वृहत् विशेषांक हैं । अपने ढंग का यह एक ही प्रयत्न है ।

पत्रिका की उपयोगिता और महत्व के संबंध में इतना ही कहना पर्याप्त होगा कि इसके परिवर्तन में भारत एवं विदेशों से लगभग ८० पत्र-पत्रिकाएं हमें प्राप्त होती हैं । भारत के अतिरिक्त पाश्चात्य देशों में भी इसकी मांग है व इसके ग्राहक हैं । शोधकर्त्ताओं के लिये 'राजस्थान-भारती' अनिवार्यतः संग्रहणीय शोध-पत्रिका है । इसमें राजस्थानी भाषा, साहित्य, पुरातत्व, इतिहास, कला आदि पर लेखों के अतिरिक्त संस्था के तीन विशिष्ट सदस्य डा० दशरथ शर्मा, श्री नरोत्तमदास स्वामी और श्री अगरचंद नाहटा की वृहत् लेख सूची भी प्रकाशित की गई है ।

५. राजस्थानी साहित्य के प्राचीन और महत्वपूर्ण ग्रन्थों का अनुसंधान, सम्पादन एवं प्रकाशन

हमारी साहित्य-निधि की प्राचीन, महत्वपूर्ण और श्रेष्ठ साहित्यिक कृतियों को सुरक्षित रखने एवं सर्वसुलभ कराने के लिये सुसम्पादित एवं शुद्ध रूप में मुद्रित करवा कर उचित मूल्य में वितरित करने की हमारी एक विशाल योजना है। संस्कृत, हिंदी और राजस्थानी के महत्वपूर्ण ग्रंथों का अनुसंधान और प्रकाशन संस्था के सदस्यों की ओर से निरंतर होता रहा है, जिसका संक्षिप्त विवरण नीचे दिया जा रहा है—

६. पृथ्वीराज रासो

पृथ्वीराज रासो के कई संस्करण प्रकाश में लाये गये हैं और उनमें से लघुतम संस्करण का सम्पादन करवा कर उसका कुछ अंश 'राजस्थान-भारती' में प्रकाशित किया गया है। रासो के विविध संस्करण और उसके ऐतिहासिक महत्व पर कई लेख राजस्थान-भारती में प्रकाशित हुए हैं।

७. राजस्थान के अज्ञात कवि जान (न्यामतखां) की ७५ रचनाओं की खोज की गई। जिसकी सर्वप्रथम जानकारी 'राजस्थान-भारती' के प्रथम अंक में प्रकाशित हुई है। उनका महत्वपूर्ण ऐतिहासिक 'काव्य क्यामरासा' तो प्रकाशित भी करवाया जा चुका है।

८. राजस्थान के जैन संस्कृत साहित्य का परिचय नामक एक निबंध राजस्थान-भारती में प्रकाशित किया जा चुका है।

९. मारवाड़ क्षेत्र के ५०० लोकगीतों का संग्रह किया जा चुका है। बीकानेर एवं जैसलमेर क्षेत्र के सैंकड़ों लोकगीत, घूमर के लोकगीत, बाल लोकगीत, लोरियाँ, और लगभग ७०० लोक कथाएँ संग्रहीत की गई हैं। राजस्थानी कहावतों के दो भाग प्रकाशित किये जा चुके हैं। जीणमाता के गीत, पाबूजी के पवाड़े और राजा भरथरी आदि लोक काव्य सर्वप्रथम 'राजस्थान-भारती' में प्रकाशित किए गए हैं।

१०. बीकानेर राज्य के और जैसलमेर के अप्रकाशित अभिलेखों का विशाल संग्रह 'बीकानेर जैन लेख संग्रह' नामक वृहत् पुस्तक के रूप में प्रकाशित हो चुका है।

११. जसवंत उद्योत, मुंहता नैणसी री ख्यात और अनोखी आन जैसे महत्वपूर्ण ऐतिहासिक ग्रंथों का सम्पादन एवं प्रकाशन हो चुका है।

१२. जोधपुर के महाराजा मानसिंहजी के सचिव कविवर उदयचन्द भंडारी की ४० रचनाओं का अनुसन्धान किया गया है और महाराजा मानसिंहजी की काव्य-साधना के सम्बन्ध में भी सबसे प्रथम 'राजस्थान भारती' में लेख प्रकाशित हुआ है।

१३. जैसलमेर के अप्रकाशित १०० शिलालेखों और 'भट्टि वंश प्रशस्ति' आदि अनेक अप्राप्य और अप्रकाशित ग्रंथ खोज-यात्रा करके प्राप्त किये गये हैं।

१४. बीकानेर के मस्तयोगी कवि ज्ञानसारजी के ग्रंथों का अनुसन्धान किया गया और ज्ञानसागर ग्रंथावली के नाम से एक ग्रंथ भी प्रकाशित हो चुका है। इसी प्रकार राजस्थान के महान विद्वान महोपाध्याय समयसुन्दर की ५६३ लघु रचनाओं का संग्रह प्रकाशित किया गया है।

१५. इसके अतिरिक्त संस्था द्वारा—

(१) डा० लुइजि पिग्रो तैस्सितोरी, समयसुन्दर, पृथ्वीराज और लोकमान्य तिलक आदि साहित्य-सेवियों के निर्वाण-दिवस और जयन्तियां मनाई जाती हैं।

(२) साप्ताहिक साहित्य गोष्ठियों का आयोजन बहुत समय से किया जा रहा है, इसमें अनेकों महत्वपूर्ण निबंध, लेख, कविताएं और कहानियां आदि पढ़ी जाती हैं, जिससे अनेक विध नवीन साहित्य का निर्माण होता रहता है। विचार विमर्श के लिये गोष्ठियों तथा भाषणमालाओं आदि के भी समय-समय पर आयोजन किये जाते रहे हैं।

१६. बाहर से ख्याति प्राप्त विद्वानों को बुलाकर उनके भाषण करवाने का आयोजन भी किया जाता है। डा० वासुदेवशरण अग्रवाल, डा० कैलाशनाथ काटजू, राय श्रीकृष्णदास, डा० जी० रामचन्द्रम्, डा० सत्यप्रकाश, डा० डब्लू० एलेन, डा० सुनीतिकुमार चाटुर्ज्या, डा० तिबेरिओ-तिबेरी आदि अनेक अन्तर्राष्ट्रीय ख्याति प्राप्त विद्वानों के इस कार्यक्रम के अन्तर्गत भाषण हो चुके हैं।

गत दो वर्षों से महाकवि पृथ्वीराज राठोड़ आसन की स्थापना की गई है। दोनों वर्षों के आसन-अधिवेशनों के अभिभाषक क्रमशः राजस्थानी भाषा के प्रकाण्ड

विद्वान् श्री मनोहर शर्मा एम० ए०, बिसाऊ और पं० श्रीलालजी मिश्र एम० ए०, हूंडलोद थे।

इस प्रकार संस्था अपने १६ वर्षों के जीवनकाल में, संस्कृत, हिन्दी और राजस्थानी साहित्य की निरंतर सेवा करती रही है। आर्थिक संकट से ग्रस्त इस संस्था के लिये यह सम्भव नहीं हो सका कि यह अपने कार्यक्रम को नियमित रूप से पूरा कर सकती, फिर भी यदा कदा लड़खड़ा कर गिरते पड़ते इसके कार्यकर्त्ताओं ने 'राजस्थान-भारती' का सम्पादन एवं प्रकाशन जारी रखा और यह प्रयास किया कि नाना प्रकार की बाधाओं के बावजूद भी साहित्य सेवा का कार्य निरंतर चलता रहे। यह ठीक है कि संस्था के पास अपना निजी भवन नहीं है, न अच्छा संदर्भ पुस्तकालय है, और न कार्यालय को सुचारु रूप से सम्पादित करने के समुचित साधन ही हैं; परन्तु साधनों के अभाव में भी संस्था के कार्यकर्त्ताओं ने साहित्य की जो मौन और एकान्त साधना की है वह प्रकाश में आने पर संस्था के गौरव को निश्चित ही बढ़ा सकने वाली होगी।

राजस्थानी-साहित्य-भंडार अत्यन्त विशाल है। अब तक इसका अत्यल्प अंश ही प्रकाश में आया है। प्राचीन भारतीय वाङ्मय के अलभ्य एवं अनर्घ रत्नों को प्रकाशित करके विद्वज्जनों और साहित्यिकों के समक्ष प्रस्तुत करना एवं उन्हें सुगमता से प्राप्त करना संस्था का लक्ष्य रहा है। हम अपनी इस लक्ष्य पूर्ति की ओर धीरे-धीरे किन्तु दृढ़ता के साथ अग्रसर हो रहे हैं।

यद्यपि अब तक पत्रिका तथा कतिपय पुस्तकों के अतिरिक्त अन्वेषण द्वारा प्राप्त अन्य महत्वपूर्ण सामग्री का प्रकाशन करा देना भी अभीष्ट था, परन्तु अर्थाभाव के कारण ऐसा किया जाना सम्भव नहीं हो सका। हर्ष की बात है कि भारत सरकार के वैज्ञानिक संशोध एवं सांस्कृतिक कार्यक्रम मन्त्रालय (Ministry of scientific Research and Cultural Affairs) ने अपनी आधुनिक भारतीय भाषाओं के विकास की योजना के अंतर्गत हमारे कार्यक्रम को स्वीकृत कर प्रकाशन के लिये १५०००) रु० इस मद में राजस्थान सरकार को दिये तथा राजस्थान सरकार द्वारा उतनी ही राशि अपनी ओर से मिलाकर कुल ३००००) तीस हजार की सहायता, राजस्थानी साहित्य के सम्पादन-प्रकाशना

हेतु इस संस्था को इस वित्तीय वर्ष में प्रदान की गई है; जिससे इस वर्ष निम्नोक्त ३१ पुस्तकों का प्रकाशन किया जा रहा है।

१. राजस्थानी व्याकरण—	श्री नरोतमदास स्वामी
२. राजस्थानी गद्य का विकास (शोध प्रबंध)	डा० शिवस्वरूप शर्मा अचल
३. अचलदास खीची री वचनिका—	श्री नरोत्तमदास स्वामी
४. हमीरायण—	श्री भंवरलाल नाहटा
५. पद्मिनी चरित्र चौपई—	,, ,, ,,
६. दलपत विलास—	श्री रावत सारस्वत
७. डिंगल़ गीत—	,, ,, ,,
८. पंवार वंश दर्पण—	डा० दशरथ शर्मा
९. पृथ्वीराज राठोड़ ग्रंथावली—	श्री नरोतमदास स्वामी और श्री बदरीप्रसाद साकरिया
१०. हरिरस—	श्री बदरीप्रसाद साकरिया
११. पीरदान लाल़स ग्रंथावली—	श्री अगरचंद नाहटा
१२. महादेव पार्वती वेलि—	श्री रावत सारस्वत
१३. सीताराम चौपई—	श्री अगरचंद नाहटा
१४. जैन रासादि संग्रह—	श्री अगरचंद नाहटा और डा० हरिवल्लभ भायाणी
१५. सदयवत्स वीर प्रबंध—	प्रो० मंजुलाल मजूमदार
१६. जिनराजसूरि कृतिकुसुमांजलि—	श्री भंवरलाल नाहटा
१७. विनयचंद कृतिकुसुमांजलि—	,, ,, ,,
१८. कविवर धर्मवर्द्धन ग्रंथावली—	श्री अगरचंद नाहटा
१९. राजस्थान रा दूहा—	श्री नरोत्तमदास स्वामी
२०. वीर रस रा दूहा—	,, ,, ,,
२१. राजस्थान के नीति दोहे—	श्री मोहनलाल पुरोहित
२२. राजस्थानी व्रत कथाएं—	,, ,, ,,
२३. राजस्थानी प्रेम कथाएं—	,, ,, ,,
२४. चंदायन—	श्री रावत सारस्वत

२५. भड्डली—	श्री अगरचंद नहाटा और म:विनय सागर
२६. जिनहर्ष ग्रंथावली	श्री अगरचंद नाहटा
२७. राजस्थानी हस्त लिखित ग्रंथों का विवरण	,, ,,
२८. दम्पति विनोद	,, ,,
२९. हीयाली–राजस्थान का बुद्धिवर्धक साहित्य	,, ,,
३०. समयसुन्दर रासत्रय	श्री भंवरलाल नाहटा
३१. दुरसा आढा ग्रंथावली	श्री बदरीप्रसाद साकरिया

जैसलमेर ऐतिहासिक साधन संग्रह (संपा० डा० दशरथ शर्मा), ईशरदास ग्रंथावली (संपा० बदरीप्रसाद साकरिया), रामरासो (प्रो० गोवर्द्धन शर्मा), राजस्थानी जैन साहित्य (ले० श्री अगरचंद नाहटा), नागदमण (संपा० बदरीप्रसाद साकरिया) मुहावरा कोश (मुरलीधर व्यास) आदि ग्रंथों का संपादन हो चुका है परन्तु अर्थाभाव के कारण इनका प्रकाशन इस वर्ष नहीं हो रहा है।

हम आशा करते हैं कि कार्य की महत्ता एवं गुरुता को लक्ष्य में रखते हुए अगले वर्ष इससे भी अधिक सहायता हमें अवश्य प्राप्त हो सकेगी जिससे उपरोक्त संपादित तथा अन्य महत्वपूर्ण ग्रंथों का प्रकाशन संभव हो सकेगा।

इस सहायता के लिये हम भारत सरकार के शिक्षा विकास सचिवालय के आभारी हैं, जिन्होंने कृपा करके हमारी योजना को स्वीकृत किया और ग्रान्ट-इन-एड की रकम मंजूर की।

राजस्थान के मुख्य मंत्री माननीय मोहनलालजी सुखाड़िया, जो सौभाग्य से शिक्षा मत्री भी हैं और जो साहित्य की प्रगति एवं पुनरुद्धार के लिये पूर्ण सचेष्ट हैं, का भी इस सहायता के प्राप्त कराने में पूरा-पूरा योगदान रहा है। अतः हम उनके प्रति अपनी कृतज्ञता सादर प्रगट करते हैं।

राजस्थान के प्राथमिक और माध्यमिक शिक्षाध्यक्ष महोदय श्री जगन्नाथसिंहजी मेहता का भी हम आभार प्रगट करते हैं, जिन्होंने अपनी ओर से पूरी-पूरी दिलचस्पी लेकर हमारा उत्साहवर्द्धन किया, जिससे हम इस वृहद् कार्य को सम्पन्न करने में समर्थ हो सके। संस्था उनकी सदैव ऋणी रहेगी।

इतने थोड़े समय में इतने महत्वपूर्ण ग्रन्थों का संपादन करके संस्था के प्रकाशन-कार्य में जो सराहनीय सहयोग दिया है, इसके लिये हम सभी ग्रन्थ सम्पादकों व लेखकों के अत्यन्त आभारी हैं।

अनूप संस्कृत लाइब्रेरी और अभय जैन ग्रन्थालय बीकानेर, स्व० पूर्णचन्द्र नाहर संग्रहालय कलकत्ता, जैन भवन संग्रह कलकत्ता, महावीर तीर्थक्षेत्र अनुसंधान समिति जयपुर, ओरियंटल इन्स्टीट्यूट बड़ोदा, भांडारकर रिसर्च इन्स्टीट्यूट पूना, खरतरगच्छ वृहद् ज्ञान भण्डार बीकानेर, एशियाटिक सोसाइटी बंबई, आत्माराम जैन ज्ञानभंडार बड़ोदा, मुनि पुण्यविजयजी, मुनि रमणिक विजयजी, श्री सीताराम लालस, श्री रविशंकर देराश्री, पं० हरिदत्तजी गोविंद व्यास जैसलमेर आदि अनेक संस्थाओं और व्यक्तियों से हस्तलिखित प्रतियां प्राप्त होने से ही उपरोक्त ग्रंथों का संपादन सम्भव हो सका है। अतएव हम इन सबके प्रति आभार प्रदर्शन करना अपना परम कर्त्तव्य समझते हैं।

ऐसे प्राचीन ग्रन्थों का सम्पादन श्रमसाध्य है एवं पर्याप्त समय की अपेक्षा रखता है। हमने अल्प समय में ही इतने ग्रन्थ प्रकाशित करने का प्रयत्न किया इसलिये त्रुटियों का रह जाना स्वाभाविक है। गच्छतः स्खलनंक्वपि भवत्येव प्रमादतः, हसन्ति दुर्जनास्तत्र समादधति साधवः।

आशा है विद्वद्वृन्द हमारे इन प्रकाशनों का अवलोकन करके साहित्य का रसास्वादन करेंगे और अपने सुझावों द्वारा हमें लाभान्वित करेंगे जिससे हम अपने प्रयास को सफल मानकर कृतार्थ हो सकेंगे और पुन: मां भारती के चरण कमलों में विनम्रतापूर्वक अपनी पुष्पांजलि समर्पित करने के हेतु पुनः उपस्थित होने का साहस बटोर सकेंगे।

निवेदक
लालचन्द कोठारी
प्रधान-मन्त्री
सादूल राजस्थानी-इन्स्टीट्यूट
बीकानेर

बीकानेर,
मार्गशीर्ष शुक्ला १५
संवत् २०१७
दिसम्बर ३, १९६०

राजस्थानी व्रतकथाएँ

राजस्थानी व्रत कथाएँ

१–अथ वैसाख महातम री कथा लिखते

श्री नारद उवाच—श्री नारद जी नै राजा अंबरीक पूछै है नै नारद जी कहै छै–तौ सारीखौ राजा धर्मावंत कोई नहीं। आ धर्मकथा तूं हीज पूछै। और तौ कथा अनेक धर्म-अधर्म री छै पण सांभळ। एक कथा तौनै वळै कहूँ राजा तूं सुण। तोनै वैसाख महातमरी कथा कहूँ हूँ। श्री नारद उवाच—एक सतयुग मंध्यै एक ब्राह्मण हुतौ, सो श्री परमेसर परायण हुतो। तिण ब्राह्मण फिर फिर तीर्थ यात्रा कीधी। ब्रह्मचारी थकौ तपस्या करै छै–सो तिण रौ तेज तपस्या रै बळ करतै डीलरी क्रांति सूर्य सारीखी छै। एकण दिन तीरथां नूं जावतौ थौ सो उठै रोही-उजाड़ आई,

---

वैशाख के महात्म्य की कथा

नारद जी से राजा अंबरीक पूछते हैं और नारद जी कहते हैं, तुम्हारे समान धर्मात्मा राजा और कोई नहीं। यह धर्म-कथा तुम ही पूछते हो। और तो धर्म और अधर्म की अनेकों कथाएँ हैं; लेकिन सुनो! एक कथा तुम्हें फिर और कहता हूँ, हे राजन् तुम सुनो ! तुम्हें वैशाख महात्म्य की कथा कहता हूं। श्री नारद जी कहते हैं—सतयुग में एक ब्राह्मण था वह श्री भगवान् का बड़ा भक्त था। उस ब्राह्मण ने घूम-घूम कर तीर्थ-यात्राएँ कीं। ब्राह्मण होकर तपस्या करता है—उसका तेज तपस्या के बल से महान् है और शरीर की कांति सूर्य के तेज के समान है।

एक दिन (वह) तीर्थों को जा रहा था सो वहीं (रास्ते में) बयावान जंगल आगया। उस घनघोर जंगल में एक बड़ का पेड़ है।

तिण रोही में एक वटरौ वृत्त छै। तिण नीचै पांच प्रेत बैठा छै। सो उवै किसड़ा कहै, डील मां काळा भूत छै, दांत तौ मोटा छै, केस तौ ऊभा छै, बास भूंडी मुँह मांह आवै छै। पेट छै सो वासं स्यूं लाग रह्यौ छै। भूख प्यास रा मारिया पडिया छै। तिण समै ब्राह्मण चलायौ आवै छै। प्रेत, आदमी आवतौ देखनै साम्हौ आवै, दौडिया। तरै ब्राह्मण प्रेता साम्हौ जोयौ। तरै प्रेत साहमां दौड़ता देख्या। तरै ब्राह्मण ऊभौ रहियौ, देखतै प्रेत जोइ रह्या। ब्राह्मण री तपस्या रौ तेज सबळ छै। तरै अळगौ ऊभो रह्यौ। तरै उवै पांचे जणा बोलाया, थै कुंण छौ? तरै ब्राह्मण बोलियौ, हूँ ब्राह्मण। तीर्थ गमन करन जाऊं छूं। पण थै कुंण छै? थांहरौ काहु विरतांत छै? तरै प्रेतां कह्यौ-म्हैं पिसाच योनि प्रेत छां। म्हौ भूंडी कमाई कीधी छै तिण सूं म्हैं भूख, तिरस रौ संकट सहां छां। संकट मांहै मरां छां, म्हांरी गत

उसके नीचे पांच प्रेत (भूत) बैठे हैं। वे कैसे कहे जांय—शरीर में काले-काले। उनके दांत बड़े-बड़े, केश (बाल) उनके खड़े हैं और मुंह में से उनके बड़ी बुरी तरह की दुर्गन्ध आती है। उनका जो पेट है वह पीठ से लग रहा है। वे भूख-प्यास के मारे पड़े हैं। उस समय ब्राह्मण चला आ रहा है। प्रेतों ने आदमी को आता देखकर उसके सामने आये, दौड़े। तब ब्राह्मण ने प्रेतों के सामने देखा। उसने प्रेतों को दौड़ते हुए देखा। तब ब्राह्मण को वहीं खड़ा देखकर प्रेत उसे देखते रहे। ब्राह्मण की तपस्या का तेज बड़ा प्रबल है। अतः वह अलग दूर खड़ा रहा। तब वे पाँचों बोले—आप कौन हैं? तब ब्राह्मण बोला—'मैं ब्राह्मण हूँ तीर्थ यात्रा करने जाता हूँ लेकिन आप लोग कौन हैं? आपका क्या परिचय है?' तब प्रेतों ने कहा—हम पिशाच योनि के प्रेत हैं। हमने बुरे कर्म किए हैं, इसलिए हम भूख-प्यास का संकट सहन करते हैं। संकट से मर रहे हैं—हमारी कोई गति नहीं है। आज

काई न छै। सो आज म्हैं राज रौ दरसण पायौ छै सो माहरौ निसतारौ आज थै करौ। म्हैं बहुत राजी हुआ। म्हानूं सुख हुवौ। काया म्हारी बळती थी, सो सुख हुवौ। मांहरी मत भली हुई छै। म्हानूं सारी खबर पडण ढूक गई। सो ब्राह्मण परमेश्वर छै, नै म्हैं भलाई दरसण थांहरौ पायौ। सो म्हांरौ उद्धार हुसी। तरै ब्राह्मण बोलियौ–थै किसा पाप कीधा, तिण सूं थै प्रेत जोन पाई, सो थै बतावौ। तरै पहलौ प्रेत बोलियौ, म्हैं पंचा देशमें पूर्व जन्म ब्राह्मण मारियौ, एक ब्राह्मण री हित्या लागी, तिण सूं प्रेत जोनि पाई। पछै दूसरौ प्रेत बोलियौ, म्हैं गुरू मारियौ थौ, सो गुरू–हत्या लागी, तिण सूं प्रेत जोनि पाई। पछै तीसरौ प्रेत बोलियौ–हूँ पारकी निंद्या हीज करतौ, कूडहीज बोलतौ, कूडा कलंक देतौ, कूड़ी साख भरतौ, लोकांरौ मन भांजतौ, सो तिण पाप थी जोनि प्रेतरी पाई। पछै चोथौ प्रेत बोलियौ, हूं गुरूणी

हमने आपके दर्शन लाभ किए हैं अतः हमारी मुक्ति आप करें। हमें (आपके दर्शनों से) बड़ी खुशी हुई। हमें बहुत सुख हुआ। हमारी आत्मा जल रही थी, उसे सुख मिला। हमारी बुद्धि स्वच्छ हुई। हमें सब प्रकार का ज्ञान होने लगा है। आप ब्राह्मण परमेश्वर का रूप हैं हमारा सौभाग्य है जो हमने आपके दर्शन किए। अतः हमारा (अब) उद्धार होगा।

ब्राह्मण तब बोला—आपने कौन से पाप किए थे, जिससे प्रेत योनि आपने प्राप्त की; वह मुझे बतावें। तब पहला प्रेत बोला–मैंने पंचाल देश में पूर्व जन्म में एक ब्राह्मण को मारा था– एक ब्राह्मण की हत्या मुझे लगी,उसी कारण प्रेत योनि मुझे प्राप्त हुई। पीछे दूसरा प्रेत बोला– मैंने गुरू को मारा था, सो गुरु हत्या मुझे लगी, उसी कारण प्रेत योनि प्राप्त हो सकी। फिर तीसरा प्रेत बोला–मैं दूसरे व्यक्तियों की निन्दा ही किया करता था, झूठ बोला करता था, झूठे कलंक दिया करता, झूठी

सूं भूंडौ हालतौ, कुकरम कीधौ, तिण सूं प्रेत जोनि पाई। पछै पाचमौ प्रेत छै सो बोलियौ, म्हे अस्त्री हत्या कीधी, आ अस्त्री मुई, तिण सूं प्रेत योनि पाई। तरै ब्राह्मण बोलियौ, दया कर नै कहै छै–थे साच बोलिया, आपरौ दुख कह्यौ। तरै विचारियौ–इणां रौ उद्धार करणौ। तरै ब्राह्मण है। छै–प्रेतां थे म्हैं साथै आवौ। तरै प्रेत ब्राह्मण रै साथै हुवा चालिया जाय छै। रोही उद्यांन पड़ी छै। उठै रोही रै मांहि चालिया जाय छै। तठै प्रेत आठ वळै उठिया, सो ब्राह्मण नूं खांण नूं दौडिया। पछै नैडा आया, तरै ब्राह्मण कह्यौ, थे कुंण छौ ? तरै प्रेत कह्यौ, 'म्हैं प्रेत छां।' म्हैं थां नूं भखण नूं आया था, पण थांरी तपस्या रौ तेज छै, इसौ सूरज रौ ही तेज न छै तिणसूं म्हैं थिकत मौन हुआ छां। थांहरौ दरसण सूं म्हांरा पाप मूचित होय गया। दृष्टि निरमळ हुई छै म्हांरी दूरम दूर होय गई छै। हाथ जोड़

गवाही दिया करता, लोगों का मन तोड़ा करता (हतोत्साह करता) सो उसी पाप के कारण प्रेत की योनि प्राप्त की। फिर चौथा प्रेत बोला मैं गुरू पत्नी से दुर्व्यवहार करता, कुकर्म किए, इस कारण प्रेत की योनि प्राप्त की। फिर पांचवां जो प्रेत है वह बोला, मैंने स्त्री हत्या की थी। वह स्त्री मर गई, इस कारण प्रत की योनि प्राप्त की।

ब्राह्मण तब दया करके बोला। कहता है–आप लोग सत्य बोले, अपना दुःख कहा। तब सोचा–इनका उद्धार करना चाहिए। तब ब्राह्मण कहता है–प्रेत लोग ! आप मेरे साथ आवें। तब प्रेत ब्राह्मण के साथ होकर चले जा रहे हैं। बयावान जंगल पड़ा है। वहां उस जंगल में चले जा रहे हैं। वहां आठ प्रेत और फिर उठे। वे ब्राह्मण को खाने को दौड़े। जब नजदीक आए, तब ब्राह्मण ने कहा, 'आप कौन हैं ?' तब प्रेतों ने कहा, हम प्रेत हैं। हम लोग आपको खाने के लिए आये थे, लेकिन आपकी तपस्या का तेज है–ऐसा तेज तो सूर्य का भी नहीं। हम

आगै ऊभारहि कहै छै, 'सामी, नारायण! थांहरौ दरसण कियां म्हैं निरमळ हुआ छां। म्हांनै भली बुद्धि ऊपनी। तरै ब्राह्मण कहै, थै प्रेत कैन प्रकार करने हुआ ?

पहिली तौ प्रेत जाति कही, पछै आपरा नाम कह्या, पछै आपरा पापरा नाम कह्या सो ब्राह्मण सुणिया। हिवै आपरा पाप कहै छै, ब्राह्मण सुणै छै। प्रेत कहै छै। एक प्रेत कहै-म्हें पहले-जन्म अधर्म कियौ, गरीब नै खौसतौ, लड़तौ, अतीत अभ्यागत सूं लड़बौ करतौ, घर मैं आवण न देतौ, तरै प्रेत की जोनि पाई। पाछैं दूजौ कहै छै, हूँ चोरी जारी करतौ-पाछौ न हुतौ तिण सूं प्रेत जन्म पायौ। पछै तीजौ प्रेत कहै छै, हूँ समरण-भजन, कथा कीरतन करतौ तिणनूं उथापतौ, तिण सूं प्रेत जन्म पायौ। तरै चौथो प्रेत बोलियौ हूँ निंद्यक छौ, आगलारी निंद्या करतौ, तिणसूं कर प्रेत जोनि पाई। पछै पांचमौ प्रेत बोलियौ, हूँ पहली

उसे देखकर चकित मौन हो रहे। आपके दर्शनों से हमारे पाप छूट गये। हमारी दृष्टि निर्मल हुई-हम बहुत दूर की देख सकते हैं (हमें भविष्य आदि का ज्ञान हो गया है) हाथ जोड़कर, आगे खड़े होकर कहते हैं-हे स्वामी ! हे नारायण !! आपके दर्शन करने से हम निर्मल हुए हैं। हमें अच्छी बुद्धि उत्पन्न हुई।

तब ब्राह्मण ने कहा-आप प्रेत किस कारण से हुए। पहले तो प्रेतों ने अपनी जाति बतलाई, फिर अपने नाम बताये, सो सभी ब्राह्मण ने सुने। अब अपने पाप कहते हैं। एक प्रेत कहता है-मैंने पहले जन्म में अधर्म किए-गरीबों को लूटा-खसोटा करता, उनसे लड़ता, अतिथि-अभ्यागतों से लड़ता रहता, उन्हें घर में नहीं आने देता, इसलिए प्रेत-योनि प्राप्त की। तब दूसरा कहता है-मैं चोरी-जारी किया करता, इस कार्य से कभी मुँह नहीं मोड़ा, इसलिए प्रेत का जन्म पाया। तब तीसरा प्रेत कहता है—मैं उस व्यक्ति को कष्ट दिया करता जो भक्तवत्

जन्म नास्तीक हतौ। कोई भली बुरी बात करतौ तिण नूं हूँ नास्तीक करतौ। तिणसूं-म्हैं प्रेत जन्म पायौ। पछै छठौ प्रेत कहै छै-म्हैं घर किण ही रौ भलौं न चाहतौ, बुरौ चितवंतौ, तिण सूं प्रेत जोनि पाई। पछै सातमौं प्रेत कहै छै, म्हैं भलौ काम कोई कीन्हो नहीं, तिणसूं प्रेत जन्म पायौ। पछै आठवां प्रेत कहे छै-म्हैं पूर्व जन्म ब्राह्मण संताया, तिण पाप सूं प्रेत जन्म पायो।

तरै ब्राह्मण कह्यौ, थै काहू खावौ छौ? थै ३० रोई मैं रहो छौ, किण भांति जीवौ छौ, पग उभरांणा छौ, कांटा घणा, सो थै उभरांणा फिरौ छौ। तरै प्रेत बोलिया-म्हें खावां-पीवां सो आप आगै कासूं कहा छां, पण कह्यौ हीज चाहिजै।

तरै प्रेत कहे छै-जिणरा घर मैं बुहारौ झाड़ौ न द्यै, चौको पोतौ न दीजै, पाणी न छांणै, दोपहर हांडी चढ़ावै, तिण रै घरमैं भोजन म्हें करां छां। जिण री हांडी अथवा ढाकणी खांडी होवै,

---

भजन, कीर्तन, कथा आदि किया करता। इसी कारण प्रेत का जन्म पाया। तब चौथा प्रेत बोला—मैं निंदक था। हर किसी की निंदा करता, इस कारण प्रेत की योनि पाई है। इसके बाद पांचवाँ प्रेत बोला—मैं पहले जन्म का नास्तिक था। कोई (व्यक्ति) अच्छी अथवा बुरी बात करता, तो उसे मैं नास्तिक कहकर काट दिया करता। इस कारण मैंने प्रेत का जन्म पाया। इसके बाद छठा प्रेत कहता है—मैं किसी के भी घर का भला नहीं चाहता था; बुरा ही सोचा करता इस कारण प्रेत की योनि पाई है। फिर सातवां प्रेत कहता है—मैंने अच्छा कोई काम किया नहीं, इस कारण प्रेत का जन्म पाया, इसके बाद आठवां प्रेत कहता है—मैंने पूर्व जन्म में ब्राह्मणों को सताया; इस पाप के कारण प्रेत जन्म पाया।

तब ब्राह्मण ने कहा—आप लोग क्या खाते हैं? आप लोग जंगल में रहते हैं, किस प्रकार जीवित रहते हैं। आपके पैरों में जूती तक नहीं हैं

तिण रै घरां रौ म्हें खावां पीवां छां। जिण रा घर मैं देवता न पूजै, सिनान कदेई न करै, मांचौ बिछायौ रहण देवै, आथण तांई बिछायौ रहे नै उठावै नहीं, तिणरै घर मैं म्हें खावा-पीवां छां। उवांरै घरां म्हें रहां छां, उठै म्हांरौ वासौइज छै। वासण इसणक न धोवै, यूं ही खावैं, यूं हीज पीवै, महा-असुभ असुच स्थान मांहे म्हें रहां छां। सो इसी बात म्हें लाज मरां छां। भिठ म्हांरौ खाधौ पीधौ भिठ छै। इतरी बात कही प्रेत हाथ जोड़ने ऊभा रह्या, पछै प्रेत कहै छै-म्हांरौ उद्धार थां सूं होसी, तरै प्रेत पणौ छूट सी।

तरै ब्राह्मण कहै-हे वैशाख रौ मास आयौ छै, सो हूँ रेवा जी में स्नान करन जाऊं छूं, सो थे इठैईज उभा रहौ, उधार कर सूं। थे पापरी बात साची कही, थोहरौ नाम जाणु छूं सो थांहरी वीनती मधूसूदन जी सूं कर सूं। तरै उवै प्रेत आठेई उठै ऊभा

यहाँ कांटे बहुत हैं; आप बिना जूती के उघाडे पैरों कैसे भटका करते हैं। तब प्रेत बोले-हम लोग जो कुछ खाते-पीते हैं, वह आपके सामने किस प्रकार वर्णन कर सकते हैं ? लेकिन फिर भी आप से तो कहना ही चाहिए !

तब प्रेत कहते हैं-जिस घर में झाड़ु आदि न दिया जाय, (चूल्हे) को नीपा-पोता न जाय, पांनी जहां छानकर नहीं पीया जाय, दुपहर को जाकर रशोई बनावे-हम उन्हीं के घरों में जाकर भोजन करते हैं। जिसकी हाँडी अथवा उसकी ढकनी (भोजन बनाने का मिट्टी का पात्र) खांडा (थोड़ी बहुत टूटी हो) तो उसके घर में हम खाते पीते हैं। जिसके घर में देवताओं की पूजा न हो, स्नान घर के व्यक्ति कभी भी न करते हों, खाट जहाँ हर समय बिछाई ही रहे, संझा तक बिछौना बिछा रहे, उसे उठावे नहीं, उसके घर में हम खाते पीते हैं। उन्हीं लोगों के घर में रहते हैं-वहीं हमारा निवास स्थान रहता है। बर्तनों को धोवे,

रह्या नै पांच, प्रेत साथै हालिया। पछै रेवाजी गया। वैशाष मैं रेवाजी नहाया–सूर्य मैं खरास छै, ब्राह्मण डाभरा पूतला आठ बणाया, स्तोत्र भणनै ऊवां प्रेतांरा नाम ले श्री रेवाजी में स्नान कराया उवांरी प्रेत देह छूटी ने बैकुंठ प्राप्ति हुवा। नारद जी कहै–राजा अमरीखनै–बैशाख मास इसड़ो छै, प्रेतांरी देह छूटी माधौजी मधूसूदन जी स्तोत्र भणै, कथा सांभळै नै सांभळावै, तित्तरा पापरौ खय होवै नै वैकुंठ प्राप्ति हुवै। नारद जी राजा अमरीखनै स्तोत्र सुणावै छै, कहै–हे राजा मासा मांहैं वैसाख बड़ौ मास छै, तिणरौ व्रत करै। तिकौ श्री मधुसूदन जी मूरति री सेवा करै नै सनान-संपाडौ कीजै, पछै दान–पुन कीजै, तिण वैसाख रा महातम सूं पूर्वला भवरा पाप मुचित होय, जिण सूं संसारा पाप छूटै, उण वैसाख सूं परम पद पावै, जिण नहाया प्रेत देह छूटी

मांजे नहीं, वैसे ही भोजन करले, वैसे ही पानी पीले, बुरा और अपवित्र स्थान जो है, वहीं हम रहते हैं। सो इस बात से हम लाज मरते हैं। हमारा खाना पीना भ्रष्ट है। इतनी बात कहकर प्रेत हाथ जोड़ कर खड़े रहे। फिर प्रेत कहते हैं–हमारा उद्धार आप से ही होगा, तभी हमारी प्रेत–योनि छूट सकेगी।

ब्राह्मण तब कहता है–बैशाख का महीना आया है, अतः मैं रेवाजी में स्नान करने जाता हूं, आप लोग यहीं ठहरे रहें, मैं आपका उद्धार करूंगा। आप लोगों ने पाप की बात (मुझे) सत्य रूप से कही, आपका नाम जानता हूं, अतः आपकी विनती मधुसूदन जी से करूंगा। तब वे आठों प्रेत वहीं ठहरे रहे और पांच प्रेत साथ चले। इसके बाद रेवाजी गए। वैशाख में रेवाजी में नहाए–सूर्य में तेज है–ब्राह्मण ने कुश के आठ पूतले बनाये मंत्र पढ़, उन प्रेतों का नाम ले उन्हें रेवाजी में स्नान करवाये, इससे उनकी प्रेत देह छूटी और वे वैकुण्ठ को प्राप्त हुए। नारद कहता है–राजा अमरीक को; वैशाख मास ऐसा है, प्रेत की देह छूटी,

नै देव जोनि पाई, सो इसौ वैसाख मास छै, तिण पुन्य सूं वैकुंठ प्राप्ति होवै।

इति श्री पदम पुरांणे वैसाख महात्मे पंचमोध्याय।

(२)

राजा आ कथा सुण नारद जी नै पूछतौ हुओ—महाराज हूँ पूर्व लै जन्म कुण थो सो विरतांत कहौ। तरै श्री नारद जी बोलियौ-हे राजा, पूखली जात पूछि जै नहीं; कोई भलौ मांनै, कोई बुरौ मांनै।

तरै राजा कहै छै—महाराज, बुरै मांनण रो किसो काम छै। राज-मोंनुं कहौ हूँ 'पुन्य किसै सुं राजा हुऔ; इतरी लिखमी रो धणी हुऔ छुं। तरै नारद बोलियौ-राजा तुं पूर्वलै भव जात रो सोनार थो। थारी असतरी वेस्या थी। सो तुंसो अति सरूप थी। तुं सोनार थो। थारै माया घणी थी, अर उवा वेस्या बड़ी

माधव जी मधुसूदन जी का स्रोत पढ़े, कथा सुने, व कथा सुनाए, उतने ही पापों का क्षय हो बैंकुण्ठ की प्राप्ति हो। राजा अम्बरीक को नारद जी स्रोत सुनाते हैं। कहते हैं—महीनों में वैशाख का महीना सबसे बड़ा है, उसका व्रत किया करो। इसलिए श्री मधुसूदन जी की मूर्ति की सेवा करे, एवं स्नान आदि करे, पीछे दान पुण्य करे, इस वैशाख के महात्मय से पूर्वजन्म के पाप छूट जायँ, इससे संसार के पापों से छुटकारा पावे (मिले), इसी वैशाख से परमपद को प्राप्त हो, जिसके नहाने से प्रेत देह से छुटकारा हो देव योनि प्राप्त हुई, सो इस प्रकार का वैशाख का महीना है—उस पुण्य से बैंकुण्ठ की प्राप्ति हो।

इस प्रकार श्री पदम पुराण की वैशाख महात्म का पाँचवाँ अध्याय समाप्त—

राजा बोला। राजा यह कथा सुनो, (राजा) नारद जी से यह कथा पूछता हुआ कहने लगा—महाराज, मैं पूर्वजन्म में कौन था, वह वृतान्त

धर्मात्मा थी। सो वेस्या देह रै आवती कथा एक चित होय नै सुण ती, दाण-पुन्य करती, गरीब गुरबा नूं पइसौ देती, नै धरमरी ईंछना करती। यूं करता वैसाख रौ मास आयौ। तरै न्हावण रौ मतौ कियौ। तरै वेस्या सोनार बोलायौ; सोनार रौ नाम देवा हुतौ। वेस्या पचास मुहर सौंपी कह्यौ, तूं श्री ठाकुरां री मूरत मधुसूदन जी री घड़ल्याय ज्यु, हूँ बैसाख न्हावुं। ठाकुरां री पूजा करूं पछै पूनिम रै दिन ब्राह्मण नूं दांन देस्युं। तरै सोनार ठाकुरां री मूरत घड़ी। घणी फूटरी घड़ ल्यायौ, चोरी न कीधी। मूरत घड़तां मन ढांम राखियौ, जितरौ सूपियौ, तितरी तोल लै आयौ। वेस्या रै जद वैसाख पूनिम आई, तद मूरत ले आयौ। तरै वेस्या उरी लीधी-लेनै रेवाजी में स्नान करण नूं गई। तरै सोनार कह्यौ, थे कहो तो

कहें। तब श्री नारद जी बोले—हे राजन् पूर्वजन्म की जाति नहीं पूछनी चाहिए, किसी को भला लगे और किसी को बुरा लगे। तब राजा कहते हैं—महाराज, इसमें बुरा मानने जैसी क्या बात है? आप मुझे कहें—मैं कौनसे पुण्य से राजा बना, इतनी लक्ष्मी का मालिक बना। तब नारद भक्त बोला—राजा, तू पूर्वजन्म में जाति का सुनार था। तुम्हारी स्त्री वेश्या थी, वह तुम से कहीं अधिक सुन्दर थी। तुम सुनार थे, तुम्हारे पास धनदौलत बहुत था और वह वेश्या बड़ी धर्मात्मा थी। अतः वेश्या मन्दिर में आती, कथा (भगवद्-कथा) एकचित् होकर सुना करती, दान-पुण्य किया करती, गरीबों को पैसा दिया करती और धर्म की नीति पर चलती।

ऐसा करते-करते वैशाख का महीना आया। तब वेश्या ने सुनार को बुलाया-उस सुनार का नाम देवा था। वेश्या ने उसे पचास मुहरें दीं और कहा—तुम श्री भगवान मधुसूदन जी की मूर्ति बनाकर लाओ,

स्नान नूं हुंई आवूं । तरै वेस्या कह्यौ, साथै आव। तद सोनार साथै गयौ । नदी में स्नान कीधी । वेस्या रै घरै आयौ, नै सेवा पूजा प्रभात री कीन्ही । कथा सांभल नै ठाकुरा रौ दरसण कर्‌यौ । एक मन थकै ठाकुरा मधुसूदन जी री सेवा कीन्ही । वे घणा दिन उठै हीज रह्या। अंतकाळ वेस्या रौ नै सोनार रौ सरीर छूटौ, सो वे वैसाख रा पुन्य करने राज पायौ, उव वेस्या-राजा थारै अस्त्री हुई । सो वैसाख रौ महातम छै । इसो वैसाख रौ महीनो छै-जिण सूं पुण्य-अधोगत न जायै । इतरौ राजा नै विरतंत सुणायौ, पछै नारद जी उठ गंगा सिनान करण नै गया । राजा पण वैसाख रौ महातम सुण गंगा जी असनान करियौ-वैसाख राज उजमियौ, वैसाख री महिमा सुण राजा सर्वलोक नै वैसाख झलायौ । तिण सूं राजा अयोध्या समेत बैकुंठ प्राप्ति हूऔ ।

मैं वैशाख नहाऊँगी, भगवान की पूजा करने के उपरान्त पूर्णिमा के दिन ब्राह्मणों को दान दूँगी । तब सुनार ने भगवान की मूर्ति बनाई । बड़ी ही सुन्दर बनाकर (घड़कर) लाया, उसने (सोना नहीं चोरा) चोरी नहीं की । मूर्ति बनाते समय मन एकचित रखा, जितना (सोना) सौंपा गया था, उतना ही तोल में लेकर आया । वह वेश्या के पास, जब पूर्णिमा आई, तब मूर्ति लेकर आया । तब वेश्या ने उसे अपने पास रखी, लेकर रेवा जी में स्नान करने गई । तब सुनार ने कहा— आप कहें तो मैं भी स्नान करने चलूँ ? तब वेश्या ने कहा मेरे साथ ही चले चलो । तब सुनार साथ गया । नदी में स्नान की । वेश्या के घर आया और सुबह की सेवा पूजा की । कथा सुनकर भगवान का दर्शन किया । एक-चित से भगवान मधुसूदन जी की सेवा की । वह कई दिनों तक वहीं (वेश्या के यहाँ) रहा । अन्त में वेश्या और सुनार का शरीर समाप्त हो चला (दोनों मर गए) । उसने वैशाख के पुण्य करने के कारण राज्य पाया और वह वेश्या, राजन्, तुम्हारी स्त्री बनी ।

धन दै, महिला दै, अस्त्री सुन्दर मिलै। अस्त्री न्हावै तौ मनकामना पावै सही।

इति पदम पुराणै वैसाख महात्मे अष्टमोध्याय।

इण ऊपरा बात छै:—

नारद जी, ब्रह्माजी नै इतिहास कहै छै। एक नगरी सोवन नामे, तठै देवीदास राजा राज्य करै छै। तिणरै एक पुत्री छै, सो रूपवंत छै। तिणरी सगाई कीधी। तिणरै बींद चंवरी मांहै वैसै नै मर जावै। बींद इकबीस-मूवा। तरां स्वयंबर परण नू कीधौ। तठै उणरौ रूप देखनै असी वळै लड़ी मूवा। पछै एक ऋषि कर्दम नाम, तिण कन्या रौ पूर्व जन्म कह्यौ, सो कहे छै। साहूकार री अस्त्री हुंती, घर रा धणी रै कहै मैं न हालती, घर हूं भाजी, तिण करनै पाप लागौ। तिण सूं मरै नै पछै ब्राह्मण साथे

यह वैशाख का ही महात्मय है। इस प्रकार का वैशाख का महीना है—जिससे पुण्य व्यर्थ नहीं जाता।

इतना वृतान्त राजा को सुनाया—फिर नारद जी उठकर गंगा-स्नान करने गये। राजा ने भी वैशाख का महात्मय सुनकर गंगा जी की स्नान की, वैशाख राज को धारण किया, वैशाख की महिमा सुनकर, तमाम लोगों को वैशाख करने का आदेश दिया। इस कारण राजा अयोध्या सहित वैकुण्ठ को प्राप्त हुआ। (यह वैशाख) धनदौलत देने वाला है, स्त्री सुख देने वाला है, (इसके करने) स्त्री सुन्दर प्राप्त होती है। और यदि कोई स्त्री वैशाख नहावे, तो उसकी निश्चय ही मनो-कामना सफल हो।

पद्म पुराण के वैशाख महात्मय का आठवाँ अध्याय समाप्त।

इसी पर एक और कथा है—नारद जी ब्रह्मा जी को इतिहास कहते हैं। एक नगरी जिसका नाम सोवन, वहाँ देवीदास राजा राज करता है। उसके एक लड़की है, वह बड़ी ही सुन्दर है। उसकी सगाई

नरबदा जी सिनान करण गई। तिणसूं राजा रै पुत्री हुई। हिवे तूं वैसाख रौ व्रत रौ सिनान करै नै वैसाख ऊजमैं तो बींद मरता रहै। तरै कन्या वैसाख रौ सिनान संभायौ, व्रत संभायौ, वरस बारै व्रत कीधौ, सिनान कीधौ, तिण सूं कर कन्या रै मनकामना सिद्ध हुई। वैसाख उजवण री विध बारै घड़ा लीजै, बारै पिछोड़ी, बारै कथारी, बारै पोथी ब्राह्मण नू जीमावै। अतीत जीमावै। मनछा भोजन देणौ। पीपल तथा खेजड़ी सींचणी। तुळछी सींचणी। एक टंक पईसा चार गेहूँ, सालि, चणा, ज्वार, जव, घृत पईसा आठ लेणौ। सिनान प्रात करणी। मध्यांन सिनान करणी। संध्या सिनान करणी। मधुसूदन जी री मूरती री सेवा करणी। पाटम्बर दांन देणौ। महीनौ तांई धर्मवरै री रोटी काढ़णी, किण ही ब्राह्मण तथा अभ्यागत नै देणी। पहिली

की गई। उसका पति जैसे ही भँवर के समय विवाह वेदि पर बैठता मर जाता। इक्कीस पति (इस प्रकार) मर गए। तब विवाह के लिए स्वयंवर रचा। तब उसके सौन्दर्य को देखकर असी (वर) फिर लड़-झगड़कर मर गए। फिर एक कर्दम नाम के ऋषि ने उसका पूर्वजन्म बताया। वह कहता है—(पूर्वजन्म में यह) साहूकार की स्त्री थी, अपने पति के कहने के अनुसार नहीं चला करती, घर से (घर छोड़कर) भाग गई थी, उसी कारण पाप लगा है। इस कारण (इसके पति) मरते हैं। इसके उपरान्त ब्राह्मण के साथ नर्बदा स्नान करने के लिए गई, इसी कारण राजा के यहाँ पुत्री होकर जन्मी है। अब तूं वैशाख के व्रत करे और वैशाख का उजाना करे, तो तुम्हारे पति जो मर रहे हैं—बच सकते हैं।

कन्या ने तब वैशाख का स्नान करने का व्रत धारण किया, बारह वर्ष तक (इस प्रकार वैशाख का) व्रत किया, स्नान की, इस कारण कन्या की मनोकामना सिद्ध हुई।

रोटी देनै पछै कथा सुणणी। इसी तरै उत्तमाई राखणी, तौ वैसाख रौ मास वैकुंठ दाता छै। इतरा तीर्थ गया रौ पुन्य होवै, गंगाजी, गया जी, जगननाथ, बद्री जी, कुरुखेत्र, पिराग जी, नेमखार मीश्रक, अयोध्या, मथुरा, जमुना, द्वारिका जी, नर्वदा, गोदावरी, ग्रहण कासी रौ एता एक-अनेक तीर्थ गया रौ पुन्य होय। अनेक व्रत कीयां रौ पुन्य एक वैसाख न्हायां बहुत पुन्य होवै। गर्दभ री जोनि स्वान, काग, एती जोनि न पावै। प्रथम तौ आवागमण न आवै, तो उत्तम कुल पावै, धन पावै, अछी सरूप

वैशाख के उजाने की विधि – बारह घड़े लेने चाहिए, बारह टुकड़े पिछोड़ी (लठ्ठा–कपड़ा) बारह की कथा की पुस्तकें ब्राह्मणों को देनी चाहिए। अतीतों को भोजन करावे। उनको उनकी इच्छा अनुसार भोजन देना। पीपल और सभी के पेड़ को नियमित रूप से पानी सींचना। एक ही समय चार पैसों के तोल के गेहूं, चावल, चने, ज्वार, जौ, और घी, मेवा, पैसा आठ (भर तोल का) लेना। स्नान सुबह भी करनी। दुपहर को भी स्नान करनी, संझा को भी स्नान करनी। मधुसूदन जी की मूर्ति की सेवा करना। पाटंबर दान में देना। महीने भर तक धर्म के नाम पर रोटी निकालना, किसी ब्राह्मण अथवा गरीब को देदेना। पहले रोटी देना, फिर यह कथा सुनना। इस प्रकार उतमत्ता रखते रहना, तो यह वैशाख का महीना वैकुण्ठ को देने वाला है। इसके करने से इतने तीर्थों का पुण्य होता है—गया जी का पुण्य, गंगा जी का पुण्य, जगन्नाथ जी का पुण्य, बदरीनाथ जी का पुण्य, कुरुक्षेत्र का पुण्य, प्रयाग जी का पुण्य, नेमरवार मीश्रक का पुण्य, अयोध्या, मथुरा, यमुना, द्वारिका का पुण्य। गोदावरी, नर्वदा में ग्रहण में नहाने का पुण्य तथा काशी में ग्रहण में नहाने का पुण्य इस प्रकार अनेकों तीर्थों के जाने अथवा नहाने का पुण्य लाभ वैशाख के एक मात्र नहाने से होता है। अनेकों व्रतों के करने का पुण्य केवल

पावै। अस्त्री-भरतार सुन्दर पावै, अस्त्री री मनकामना सिद्ध होवै, पुत्र मिलै, सुख मिलै। पछै देवलोक प्राप्ति हुवै। इसी कथा ब्रह्माजी नारद जी सूं कही, नै नारद जी राजा अंबरीक नै सुणाई। सुण नै राजा वैसाख झालियौ, वैसाख रै पुन्य सूं अयोध्या समेत वैकुंठ पुहतौ। आ कथा सुणनै वैसाख न्हावै तिकौ देव परायण होय वैकुंठ देवै स्वर्गलोक वासौ करै, आवगमण न आवै।

श्लोक वैसाख कथा—

चैत्र नारदो ब्रह्म सक्षियं जमलोके भवे नास्ते।
हरि लोके च प्राप्तियं ॥१॥

एक वैशाख के नहाने से पुण्य होता है।

इसके नहाने से गधे की, कुत्ते की और कौवे की योनि नहीं पावे। पहले तो आवागमन ही न हो, और यदि हो तो, उत्तम कुल की प्राप्ति हो, धन-दौलत पावे, सुन्दर स्त्री प्राप्त हो, स्त्री को सुन्दर पति मिले, स्त्री की मनोकामना सिद्ध हो, उसे पुत्र प्राप्ति हो, सुख लाभ हो और फिर देवलोक को प्राप्त हो। इस प्रकार ऐसी कथा ब्रह्मा जी ने नारद से कही और नारद जी ने राजा अम्बरीक से कही। कथा सुनकर राजा ने वैशाख नहाने का व्रत धारण किया। वैशाख के पुण्य से अयोध्या सहित बैकुण्ठ में पहुँचा। इस कथा को सुनकर जो वैशाख नहाता है, वह देवताओं में लीन होकर बैकुण्ठ को प्राप्त हो और उसका स्वर्ग में ही निवास हो। उसका आवागमन फिर कभी न हो।

क्षैव नारदो ब्रह्म सक्षियं जमलोके भवे नास्ते।
हरि लोके च प्राप्तियं ॥१॥

२–अथ श्री नृसिंह चवदश व्रतरी कथा

हेमाचल परबत री गुफा माहे हीरणकुसब तपस्या कीवी, अन पांण छोड़ि दियो। सो ईसी तपस्या कीवी सुं सारा देवता नुं कसट दीयो। देवता प्रथी रा समस्त देवलोक गया। दैतरी तपस्या बल सुं अगनि प्रगट हुई, तिण अग्न सुं तिनलोक तपण लागा। सु सर्व देवता आपरा ठीकाणा छोड़ गया। सु जायनै श्री ब्रह्मा जी कनै जाय पुकारयां। पुकार नै कह्यौ हीरण्यकसिप ईसडो नेहचौकर तपस्या कोवी छै नै कहै छै—जनम जनम ईसडी तपस्या कर श्री परम पदवी लेउं नै और भाति री और नवी सीसट वणाउं। सुं इण बात रो श्री ब्रह्माजी नु चीता उंपनो। सु देवता समस्त नुं साथे लेर आया। देखै, उपरा उदेही मांस भखगई। ओदेही खोदी, मांहे देखै तो सांकल हाडरी दीसै।

श्री नृसिंह चवदश व्रत की कथा

हिमालय पहाड़ की गुफा में हिरण्यकशिपु ने तपस्या की—उसने अन–जल छोड़ दिया। उसने ऐसी (कठोर) तपस्या की–जिसने तमाम देवताओं को कष्ट दिया। सभी पृथ्वी के देवता देवलोक को गए। दैत्य की तपस्या के बल से अग्नि प्रकट हुई—उस अग्नि से तीनों लोक तप्तायमान होने लगे। इसलिए सभी देवताओं ने अपने–अपने स्थान छोड़ दिए। उन्होंने जाकर श्री ब्रह्माजी से पुकार की। पुकार कर उन्होंने कहा—हिरण्यकशिपु ने इस प्रकार जमकर तपस्या की है और वह कहता है कि मैं जन्म-जन्मातर ऐसी-ऐसी ही तपस्या करके, उत्तम पद को प्राप्त करके नई सृष्टि का निर्माण करूंगा। इस बात की ब्रह्मा जी को बड़ी ही चिन्ता हुई। वे सभी देवताओं को साथ लेकर वहाँ गए। देखा, तो ऊपर की देह को कीड़े–मकोड़े लगकर खागए हैं। उस देह को

तदे श्री ब्रह्मा जी कमडल रा जल सु' छुडक्यो, तब सावचेत हुवो। ऊंचो जोय देखै तो ब्रह्मा जी उभा है। श्री ब्रह्मोवाच। श्री ब्रह्माजी कहै–रे पुतर तु' मांगै सु' देवा तो सु' प्रस्न हुवा, थे वडी तपस्या कीवी। तदे हीरण्यकसीप बोल्यो, पिताजी! थे तुठीआछौ तो मोनु इसडो वर देवौ–अस्तर सस्त्र सु' मरू' नहीं। रात्र दिन थाहरी सीसट सु' मरू नहीं। तदे श्री ब्रह्मा जी वरदांन दीयो। वर देकर ब्रह्मलोक पधारीया। हीरण्यकसप आपरै लोक आयो। जायनै इन्द्र जी सू' जीतनै इन्द्रासण उरो लीयो नै देवता नु दुख दीयो–नै कयो थारो ठाकुर कठै छै, बोहोत जोरै चाले। सु' कीताक दीन्हा पाछै हीरणकसप कै पुत्र श्री प्रहलाद जी हुंवा, सु प्रहलाद जी नु' पोसाल गुरां शुक्राचार्य जी कै पढनु बैसाणै। सु' पढै नहीं। श्री रामजी को ध्यान करै, कहै। और पढवौ

खोदा गया। अन्दर से देखा–हाड की सांकल दिखाई दी। तब श्री ब्रह्मा जी ने कमंडल के जल से छींटे दिए—तब (वह) जाकर सचेत हुआ। उसने ऊपर को देखा तो उसे ब्रह्माजी खड़े दिखाई दिए। श्री ब्रह्माजी ने कहा—हे पुत्र! तुम मांगो वही तुम्हें दें। तुम से हम बड़े ही प्रसन्न हैं। तुमने बड़ी ही अच्छी तपस्या की है। तब हिरण्यकशिपु बोला— यदि आप प्रसन्न हुए हैं तो मुझे ऐसा वरदें कि न मैं अशस्त्र से मरूँ और न शस्त्र से मरूँ। रात में मरूँ नहीं, दिन में मरूँ नहीं, तुम्हारी सृष्टि में मरूँ नहीं। तब श्री ब्रह्माजी ने वरदान दिया। वर देकर वे ब्रह्म लोक (स्वर्ग लोक) को चले गए। हिरण्यकशिपु अपने स्थान पर आया। उसने आकर इन्द्र को युद्ध में जीतकर उसका सिंहासन स्वयं ले लिया। देवताओं को बड़ा ही कष्ट दिया और कहा कि भगवान कहाँ हैं? बड़े घमण्ड से (वह) रहने लगा। बहुत दिनों के बाद हिरण्यकशिपु के एक प्रहलाद नाम का पुत्र हुआ। प्रहलाद जो को पढ़ने के लिए गुरू शुक्राचार्य के पास भेजा। वह वहाँ पढ़ता ही नहीं।

मिथ्या है–श्री गोविन्द रो ध्यान सत है। सु सुक्राचार्य जी मालुम कीवी, तदै हीरणकसप कन्वर प्रहलाद नै यैकंत ले जाय समझावतो हुवो प्रहलाद जी नु घणी सासना दीवी। क्रोध कर कयो हाथ मै खडग छै। कहै रे बालका, थारो ठाकुर कठै छै, तूं मोनुं बताय। तरै प्रहलाद जी कह्यो-मोमैं, तोमैं, खडग मैं, खंभ मैं, सरब मैं, चराचर मैं श्री भगवान विराज्या छै। तरै हीरण्यकसप खडग हाथ मैं सुं देवण रो करी, तिण सुं खंभ फाड़ नै श्री नारायण नृसिंह रूप होय प्रगट्या नै गरज करी। तिण सुं सारो वीरमांड धुजो-देवता, दैत समस्त धुजा, इसो सरूप देख डरचा। ओह सरूप सगला नुं भखजावसी। तदै हीरणकसप गदारो भव दीखायो। तरै श्री नृसिंह जी हरिण्यकसप की चोटी पकडी। गोद माहे संभ्या समै नखा सुं उद्र फाडनैं

श्री राम जी का ध्यान करता–और कहता–यह पढ़ना मिथ्या है (झूठ है) श्री गोविन्द का ध्यान लगाना सत्य है। तब यह बात शुक्राचार्य को मालूम हुई। उन्होंने प्रहलाद को अकेले में लेजाकर समझाते हुए उसे नाना–प्रकार से डराया–धमकाया, क्रोध में आकर कहा—हाथ में (मेरे) यह तलवार है। हे बालक, बताओ ! तुम्हारा भगवान कहाँ है ? तुम मुझे वह दिखाओ। तब प्रह्लाद जी ने कहा—मुझ में, तुम में, तलवार में, खंभे में, सब में चर और अचर में श्री भगवान बिराजते हैं। तब हिरण्यकशिपु ने अपने हाथ में जो तलवार थी उससे मारने की सोची। इस पर खंभे को चीरकर श्री नारायण भगवान ने नृसिंह रूप धारण करके गर्जना की। इससे सारा ब्रह्माण्ड हिल उठा—देवता और दैत्य सभी धूज गये; ऐसा स्वरूप देखकर वे डर गए। यह स्वरूप तो सबको ही भक्षण कर जायगा। इस पर हिरण्यकशिपु ने उन्हें अपनी गदा दिखाई। तब नृसिंह जी ने हिरण्यकशिपु की चोटी पकड़ी। संझा के समय उसे अपनी गोद में रख कर उसका पेट फाड़ कर उसकी आँतें

गला माहे आंतडा घालीया । दैतरा लोहीरा छांटा आपरै सरीर मैं लागा, सो छांटा सोभाय मान है । श्री नृसिंह जी सिहासण उपरा विराज मान है । श्री देवता फुल बरखात हुआ जय-जय सबद हुवा । श्री माहादेव जी श्री ब्रह्मा जी, श्री नारद जी समस्त देवता असतुत करै है । श्री भगवान सामा उभा है, सर्व देवता कहै, मेह इसडो दर्सण कदे कीयो नहीं । श्री लिखमीजी पण डरै, सु नेडा आवै नहीं-इसडो सरूप दरसणमैं कदेही आयो नहीं । तरै बीरमा जी प्रहलाद जी सुं कहीं-थे कनै जावो । ओ सरूप थारै वास्तै धरायौ, मारौ वर साचौ कीयौ । तदे प्रहलाद जी नंजीक जाय पगे लागा, तदे श्री नृसिंह जी प्रहलाद जी रै माथै हाथ दे चाटता हुआ । बळै श्री नृसिंहदेव जी दैतरो पेट ढंढोलता हुआ । तदे प्रहलाद जी कयो महांप्रभु ! दैतरी देही

अपने गले में डाल लीं । दैत्य के खून के छींटे अपने शरीर पर लगे—वह बड़े ही सुहाबने लग रहे हैं ।

श्री नृसिंह जी सिहासन पर विराजमान हैं । श्री देवता लोग फूल बरसाते हुए जय-जय के शब्द करने लगे । श्री महादेव जी, ब्रह्माजी और श्री नारद जी सभी देवता स्तुति करते हैं । श्री भगवान सामने खड़े हैं—सभी देवता कहते हैं, हमने ऐसा दर्शन कभी भी किया नहीं । श्री लक्ष्मी जी डरती हैं । वह भी पास में आ नहीं रही हैं, ऐसा स्वरूप भगवान का कभी देखने में आया नहीं । तब ब्रह्मा जी ने प्रहलाद से कहा—आप पास में आवें । यह स्वरूप (भगवान ने) आपके लिए ही धारण किया है और मेरा वरदान सत्य किया है । तब प्रहलाद जी-ने नजदीक जाकर नृसिंह भगवान के पाँव स्पर्श किए-तब भगवान उनके सिर पर हाथ रख कर उसे चाटने लगे । फिर नृसिंह भगवान दैत्य का पेट टटोटलने लगे । तब प्रहलाद जी ने कहा—हे महाप्रभु ! दैत्य के शरीर को स्पर्श न करें । श्री नृसिंह जी

आभडो मता। श्री नृसिंहदेव जी कहै। प्रहलाद जी हूँ इणरा पेट माहि तो सारीखो भगत फेरू नीसरै। श्री नृसिंह जी कहै थारा पीता रै सिघासण बैठो। प्रहलाद जी कहै–मारै कोई राज सु काम नहीं, मोनु राजरा चरणारविंद की भगति देवो। मारै मस्तक उपर हाथ दिया, सु ब्रह्मा ईन्द्र रुद्र कै माथै हाथ नहीं–सु राज मारै माथा उपरै हाथ दिया। प्रहलाद जी अर्ज करी, हो देवो का देव! हुँ आगले भव कूण थो काहु सुकर्त कीनो, राज रो दर्शण हुंवो। सु राज मोनु कथा कहो। तदे श्री नृसिह जी कहै–कासी नगरी मैं सुभदा नाम वीरामण थारो पीता–जीकण कै चार पुत्र था। सु तो पींडत छा। कीरयावंत छा–देवता री पुजा करता, च्यार मैं येक थे छा। सु पीतारो माल वेस्या सु खायो; भीष्ट हूवो। एकण दीन तु न बेस्या माहो–माहे लडीयो। सु दिन तो लड़ता पूरो हुवो राते च्यार पोहर मनावण हुवा। सु ओ दिन

ने कहा–हे प्रहलाद, मैं इसके पेट में देख रहा हूं कि तुम्हारे समान मेरा दूसरा भी कोई भक्त पैदा हो! श्री नृसिह जी ने कहा–अपने पिता के आसन पर (तुम) बैठो। प्रहलाद जी ने कहा–मुझे राज्य–भार से कोई सरोकार नहीं। मुझे तो भगवान आप अपने चरणों में रखें–विमल भक्ति प्रदान करें। जैसी आपकी कृपा मुझ पर रही है (जैसा मेरे सिर पर आपने हाथ रखा) वैसी तो ब्रह्मा, इन्द्र और रुद्र पर भी नहीं। अतः आपने मुझ पर बड़ी ही कृपा की। प्रहलाद जी ने अर्ज की। हे देवों के देव, मैं पहले जन्म में कौन था? मैंने कौन सा सुकृत (सद्कार्य) किया, जिससे मुझे आपके दर्शन लाभ हुए–वह कथा आप मुझे कहें।

तब श्री नृसिह कहने लगे–काशी नगरी में एक सुभदा नाम का ब्राह्मण तुम्हारा पिता था, जिसके चार पुत्र थे। वह बड़ा पण्डित था, क्रियावान था। देवताओं की पूजा किया करता—उसके चार पुत्रों में से एक तुम थे। तुमने अपने पिता का माल वेश्या को खिलाया। भ्रष्ट होगया।

बैसाख सुद चोदस रो थो। सु रात्र दीन भुखा त्रीखा रह्या, सु थानु ं बरत रो फळ हुवो। तिकण फळ सु दर्शण हुवो, परम पदवी जाय बैठ रयो। तद प्रहलाद जो अरज करै, 'महाराजा, देवा का देव, चौदह लौक रा नाथ, राज ओ वरत अजाणै कीयो तिकारो फळ पायो। आप ईश्वर को दर्सण पायो। प्रहलाद जी कहै, इसा मोटा वरतरी री विधान कही जै। श्री नृसिंह देव कहै वैसाख सुद १४ कै दिन प्रभाते उठजे, सीनान कीजै। श्री नृसिंह देव सु अरज कर व्रत नेमिजे। श्री नृसिंह देव री मुरत सुवर्ण री घडाई जे, चौक माडी जै। उपरां सिघासण हर्ष प्रीत सु ं पुजा मंडल उद्यापन करै तदि मंडल माडीजे। सरधा हुवै जठा तांई व्रत कीजे। श्री नृसिंह जी भक्त प्रहलाद जी सु ं कहै तिकण घणा अघोर पाप कीया हुवै तिकण रा समस्त पाप कटै, वैकुंठ जावै।

एक दिन तुम और वेश्या दोनों भीतर ही भीतर लड़ते रहे। दिन भर तो तुम लोग लड़ते ही रहे,और रात्रि के चारों प्रहर (तुम लोगों) मनाने में व्यतीत हुए। वह दिन वैशाख शुक्ला चौदस का था। अतः रात-दिन भूखे प्यासे रहे, इसलिए तुम लोगों को व्रत का फल मिला। उसी फल से यह दर्शन हुए हैं—परम पदवी को तुम प्राप्त हुए हो। तब प्रहलाद जी अर्ज करते हैं—हे महाराज, देवों के देव, चौदह भुवनों के स्वामी, मैंने हे भगवन्, अजान में यह व्रत किया, उसका फल मुझे मिला। आप जैसे परम पिता के दर्शन प्राप्त किए। प्रहलाद जी कहते हैं—ऐसे बड़े व्रत का विधि-विधान (हमें भगवन्) कहिए। श्री नृसिंह भगवान् कहने लगे- वैसाख शुक्ला चौदस के दिन सुबह बहुत जल्दी उठकर स्नान करे। श्री नृसिंह भगवान् से प्रार्थना करते हुए, इस व्रत को नियम-पूर्वक करने का व्रत ले। श्री नृसिंह भगवान की मूर्ति सोने की घड़वाए, चौक पूरे। उसके ऊपर सिंहासन (रखे) बड़े हर्ष और प्रेम से पूजा आदि करने के बाद उस पर मांडने, मांड़ने चाहिए। श्रद्धा हो, भगवान में दृढ़

राते मुरत आगै चढावो हूवै, मूरत सूधो बीरामण नु दीजै। श्री नृसिंह जी प्रहलाद जी सु कही, वरत रै पुन्य रो पार नहीं। सारी प्रिथी दोळी परक्रमा देवो तिर्थ समस्त करो, भांवै श्री नृसिंह जी चतुर्दशी रो वरत करो। तिके मानवी घणी सरधा सु वरत करसी, सु परम गति पावसी, मनवांचित फल पावसी। समस्त देवता उभा वीरमाजी माहादेव जी नारदजी समस्त उभा दर्शन करै छै। श्री नृसिंह जी कहै ब्रह्माजी, थाको वर साचो कीयो, संतारी सहाय करीयेक। श्री नृसिंह जी वर दीन्हौ, प्रहलाद जी थारी कथा हरख प्रीत सु गावसी, वैसाख सुद चवदस रो वरत करसी सु मनोवांछित फळ पावसी। समस्त देवता उभा अस्तुति करै। श्री नृसिंह देव नमः। इति श्री नृसिंह चतुर्थी व्रत कथा संपूर्ण। श्री रामानुजाय नमः ॥ ———

विश्वास हो, तब तक इस व्रत को करता रहे। श्री नृसिंह भगवान प्रहलाद से कहते हैं—जिस व्यक्ति ने बहुत बड़े पाप किए हों, उसके सारे पाप कट जाते हैं और वह वैकुण्ठ को चला जाता है। रात्रि में पूजा के उपरान्त मूर्ति के आगे प्रसाद चढ़ाए, और फिर वह मूर्ति मय-प्रसाद के ब्राह्मण को देदेनी चाहिए। श्री नृसिंह भगवान ने कहा—व्रत के पुण्य का कोई पार ही नहीं है। चाहे तमाम पृथ्वी के चारों ओर उसकी परिक्रमा लगावो, चाहे सारे ही व्रत करो और चाहे श्री नृसिंह चतुर्दशी का व्रत करो। जो व्यक्ति बड़ी श्रद्धा और भक्ति से यह व्रत करेगा, वह परमगति को प्राप्त होगा। उसे अपने मन के अनुसार इच्छित फल की प्राप्ति होगी। सभी देवता, ब्रह्माजी, महादेवजी, नारद जी, खड़े दर्शन करते हैं। श्री नृसिंह जी कहते हैं—ब्रह्माजी, मैंने आपका वरदान सच किया, संतों की सहायता की। नृसिंह जी ने वरदान दिया—प्रहलाद जी, जो व्यक्ति आपकी कथा हर्ष और प्रेम से गायेगा, वैशाख शुक्ला चौदस का व्रत करेगा, उसे मनवांछित फल प्राप्त होगा। सभी देवता खड़े प्रार्थना करते हैं। ———

३-अथ श्री काजली तीजरो कथा लिखते

एकण समीयै राजा जुजष्ठर जी बैठा छै। कुन्ती जी, द्रोपदी जी, बीजी ही अस्त्रियां घणी ऊभी छै। जितरै श्री कृष्णजी महाराज पधारिया। तरै द्रोपदी जी श्री ठाकुरां नै कहै छै, महाराज म्हां नु कोई पुण्य बताओ। कोई व्रत करावो तिणरै प्रताप सूं अस्त्री भरतार नै अति वल्लभ हो व घरै लिखमी घणी होइ। घर मांहे अत, धन घणो होवै। घणा कुंटबांरी धणीयांणी होवै। जिण व्रत किया सूं इतरा थोक हुवै, सो राज म्हांनै किरपा करि नै बतावो। तरै श्री कृष्ण जी कहै छै। एक दिख परजापत, श्री ब्रह्माजी रो बडो बेटा थो। तिणरी बेटी साठ हुई। नै केईक तो बेटी कासिबजी नू परणाई। केईक बेटी

कथा काजली तीज की

एक समय राजा युधिष्ठिर बैठे हैं। कुंती, द्रोपदी और बहुत सी स्त्रियाँ खड़ी हैं, इतने में (उस समय) श्री कृष्ण महाराज पधारे। जब द्रोपदी श्री भगवान से कहती है—महाराज मुझे कोई पुण्य बतावें। कोई व्रत करवायें, जिसके प्रभाव से स्त्री अपने पति को बड़ी प्यारी लगे व घर में लक्ष्मी का आगमन हो ! घर में अन-धन बहुत हो। बड़े परिवार वाली वह (स्त्री) हो। जिस व्रत के करने से ऐसा सब हो सके, ऐसा व्रत महाराज ! कृपया मुझे बतावें।

तब श्री कृष्ण कहते हैं—एक बार दिख-प्रजापति जो ब्रह्मा जी का पुत्र था, उसके साठ पुत्रियाँ हुईं। कितनी पुत्रियाँ तो (उसने) कासिब जी को विवाह दीं। कई पुत्रियाँ धर्मराज को विवाह दीं। कई तेरह पुत्रियाँ चन्द्रमा को विवाह दीं। कितनी ही पुत्रियाँ अगन को

धरम राजा नै परणांई। केईक तेरह बेटी चन्द्रमा नै परणाई। केईक बेटी अगन नै परणाई। केईक बेटी पीरां नुं परणाई। केईक बेटी भूतां नै परणाई। नै एक बेटी तिणरौ नांव सती छै, सो श्री महादेव जी नै परणाई। नै एक दिन देवतां नै जिग्य होतो थौ, तठै सरब देवता भेळा हूवा छै। तरै श्री ब्रह्मा जी आय बैठा छै। श्री महादेव जी पिण आय बैठा, बीजा ही देवता रिखेस्वर आया था। तरै श्री ब्रह्मा जी नै महादेवजी बैठा बात करै छै। तरै ब्रह्मा जी रौ बेटो बडो दिख परजापत ही आयौ। तरै देवता सुह उठ नै दिख परजापत नै नमस्कार कीयौ, आदर मांन दियौ। नै महादेव मोनुं आदर नहीं दीयौ। नै नमस्कार ही न कीयौ। सो दिख परजापत मुंहढ़ा मांह सुं कुवचन कहण लागो। जो इण महादेव सुं म्हारी बेटी परणाई, सो म्हें म्हारा पिता

विवाह दीं। कितनी बेटियाँ पीरों को विवाह दीं। कितनी पुत्रियाँ भूतों को विवाह दीं। और एक पुत्री जिसका नाम सती है–उसे महादेवजी को विवाह दी।

एक दिन देवताओं का यज्ञ हो रहा था। वहाँ सभी देवता इकट्ठे हुए। तब श्री ब्रह्माजी आकर बैठे हैं। श्री महादेव जी भी आकर बैठे हैं— दूसरे देवता लोग, ऋषि लोग आकर बैठे हैं।

उस समय श्री ब्रह्मा जी और महादेव जी बातें करते हैं। तब ब्रह्माजी का बड़ा बेटा दिख–प्रजापति भी (वहाँ) आया। उन सभी देवताओं ने उठकर दिख–प्रजापति को नमस्कार किया–उसे आदर सम्मान दिया। और महादेव जी ने आदर सत्कार नहीं दिया और न नमस्कार ही किया। इसलिए दिख–प्रजापति मुँह में से बुरे बचन कहने लगा। मैंने जो इस महादेव जी को अपनी कन्या विवाही, वह तो मैंने अपने पिता ब्रह्मा के कहने से विवाही थी। नहीं तो मैं इस अघोरी

ब्रह्माजी कह्या सूं परणाई। नहींतर हूँ इण अघौरी नै कदै परणाऊं नहीं। इण महादेव नै सिव कहै छै, सो ओ तो बड़ौ असिव छै। नै इणां अधरमी नै कदै बेटी परणाऊं! अघौरी छै–इण मैं कांई सुध नहीं। घणी भांग धतूरौ खाय, आक नींब खाय, मसांण मांहै सोवै, मसांण मांहैं रहै, मसांण री राख लगावै। नागौ उवाडौ रवै। इणनुं खबर कांई नहीं, सदा असुच रवै। ओ अग्यानी–इण मांहै ग्यांन कोई नहीं। जो इण मैं ग्यान होतो तो यूं जांण तो–बडो छै, म्हारौ सुसरौ छै। उठनै इणनुं घणौ आदर सनमान देऊं, नमस्कार करूं। दिख परजापत महादेवजी री निंद्या घणी कीवी। कुवचन घणा कह्या, तरै सगळां ही देवतां दिख परजापत नै बरजियौ। पण दिख वरजियौ मांनै नहीं। तरै महादेव जी जिग पूरौ करनै उठिया, सो कैळास पधारिया।

को कभी भी कन्या नहीं देता। इस महादेव को (लोग) शिव कहते हैं–लेकिन यह तो वड़ा ही अशिव है। मैं ऐसे अधर्मी को कभी पुत्री देने का था? यह अघोरी है–इसे कोई ज्ञान नहीं है। (यह) बहुत सारी तो भाँग और धतूरा खाता है–आक और नींब खाता है–मशानों में सोता है, मशानों में ही रहता है, और मशान की ही राख लगाता है। नंगा और उघाड़ा रहता है। इसे कोई खबर नहीं–हमेशा अशुद्ध रहता है। यह अज्ञानी है–इस में ज्ञान नाम की कोई वस्तु है ही नहीं। इसमें यदि ज्ञान होता तो इसे समझना चाहिए था—मैं वड़ा हूँ, इसका ससुर हूँ। उठ कर इसे वहुत सा आदर सम्मान दूं—नमस्कार करूं। दिख प्रजापति ने महादेव जी की वहुत निंदा की। वहुत ही बुरे शब्द कहे, तब सभी देवताओं ने दिख प्रजापति को रोका। लेकिन दिख मनाने पर भी माना नहीं। तब महादेव जी यज्ञ समाप्त होने पर उठे–वे कैलाश को आए अन्य देवता भी सभी उठे। सभी अपने–अपने स्थान गये (अपने–अपने निवास पर सभी गये) श्री महादेवजी ने इस अपमान

देवता पण सारा ही उठिया, आप आपरै ठिकाणै गया। श्री महादेवजी तो मन मांहै क्यु ही आंणियौ नहीं–नेम बड़ा। नै महासती नै पण काई बात कही नहीं। आप तो पार ब्रह्म सूं ताळी लगाई छै। नै दिख परजापत रै मन मांहै गुसौ घणौ छै। जो हूँ जिग करूं नै सारांई देवता नुं नैतरूं, नै महादेवजी नुं पांत बारै काढ़ूँ। तरै विचार जिग करूं नै सारा ही देवतां नै तैड सूं। नै जिग माहै महादेव रौ सेषनाग है सो छै सो सरब काढ देसूं। नै महादेवजी रा औगुण घणा कहै छै। सो दिख परजापत वळै ही जिग करणौ मांडियौ छै। देवता सगळा ही बुलाया छै, जो सकोई साथ देवता रो जिग ऊपर आवजौ। नै देवतां नै दिख कहाड़ियौ–जो हूँ महादेवजी नै देवतां मांह सूं परहौ काढ़ूँ छूं। जिकोई देवता महादेवजी री हिमायत करै,

---

के लिए मन में किसी प्रकार का विचार नहीं रखा–वे अटल नियम के जो ठहरे !! और न उन्होंने इस विषय में कोई बात महासती (पार्वती) से कही। उन्होंने ब्रह्मा का ध्यान किया।

लेकिन दिख प्रजापति के मन में बड़ा ही क्रोध है। मैं यज्ञ करूँ, तमाम देवताओं को बुलाऊँ (निमंत्रित करूँ) लेकिन महादेव जी को 'देवता–समाज' से बाहर रखूँ। ऐसा विचार कर यज्ञ करूँगा, तमाम देवताओं को निमंत्रित करूँगा और यज्ञ में महादेव जी को शेषनाग है–वे सो हैं, उन्हें सबको निकाल दूँगा। इस प्रकार महादेव जी के बहुत से अवगुणों को कहता है।

दिख–प्रजापति ने दुबारा यज्ञ प्रारम्भ किया है। तमाम देवता को बुलवाये हैं-सो तमाम देवताओं का समूह यज्ञ के कार्य पर आना। और देवताओं को दिख ने कहला दिया—मैं महादेव जी को देवताओं की समाज में से निकाल कर दूर करूँगा।

सो महादेवजी कनै जावौ। नै महादेवजी री हिमायत करै सो महादेवजी कनै जावौ। नै महादेवजी री हिमायत न करै, सो वैगा आवज्यो। तरै सारा ही देवता बिमांण बैस-बैस नै कैळास ऊपर होय नै, जिग जावै छै। सो सती-बैठी देखै छै। बिमांण मांहै बैठा, बहिन बहनोई जाय छै। वळै विमांण में बैठा बहिन भांणैजा जावै छै। पण सती नु ं कोई बतळावै नहीं-कोई बोलै नहीं। तरै सती कहै छै-सदाई बिमांण नीसरता, तरै मोनै राम-राम करता, म्हों सू ं बात बिगत करता हिमरकै कोई बोलै नहीं, बतळावै नहीं, सो कांसू ं जाणि जै। जितरै श्री महादेवजी ध्यान करनै, आंख खोली। तरै सती कनै जाये नै कहण लागा, आज सकोई बिमांण बैठ-बैठ नै जावै कठै छै। तरै श्री महादेवजी बोलिया-सती, थारा बाप रै जिग मांडियौ छै। सो उण देवातांनु ं बुलाया छै। सो सारा ही-देवता उठै जाय छै।

यदि कोई देवता उनकी तरफदारी करता हो, तो वह (देवता) महादेव जी के पास जा सकता है-और जो देवता महादेव जी की तरफदारी न करता हो, वे मेरे यहाँ अति शीघ्र आने की कृपा करें। सभी देवता तब विमान में बैठकर कैलाश के ऊपर से होकर यज्ञ पर जाते हैं। सती बैठी तब देखती है। विमान में बैठे बहन और बहनोई जाते हैं। फिर (दूसरे) विमान में बहन और भानजे बैठे जा रहे हैं। लेकिन सती को कोई बुला नहीं रहा है-उससे कोई बात नहीं कर रहा है।

तब सती कहती हैं-हमेशा जब विमान निकला करते थे तो मुझ से (ये लोग) राम-राम किया करते थे, मुझ से बात-चीत किया करते-इस बार तो कोई बोलता तक नहीं है, बतलाते भी नहीं हैं, यह किस प्रकार जाना जाय !! तब महादेव जी ने कुछ सोचकर (ध्यान लगाकर) अपनी आँख खोली। सती तब पास जाकर कहने लगी-आज ये सभी लोग विमान में बैठ-बैठ कर कहाँ जाते हैं? इस पर श्री महादेवजी बोले-

तरै सती कहै छै–आपां ही जिग ऊपर जावस्यां। तरै सतीनुं महादेव जी कहै छै, थारौ बाप तो म्हौं सूं बैर राखै छै। म्हौंने थारै बाप घणा कुबचन कह्या, तोही हूँ बोलियौ नहीं। नै जिग मांहै म्हांरौ हिसौ छै, सो थारौ बाप कहै छै, हिसौ हूँ परहौ काढ़सूं। सो आपां तो विगर बोलाया कोई जावां नहीं।

तरै सती कहै छै–बापरै घरै नै सासरै, पीहर बिना बुलाया ही जाईजै। तरै श्री महादेवजी कहै छै–आतो बात साची कही। पण आगै गया, आदर मांन न पाईजै।

तो युंही गया काहुँ होय। सामी जिकै उठै बैठा होसी, सो उळटी हासी करै। म्हैं तो विगर बोलाया कोई जावां नहीं, नै म्हैं तोनै पण मनहा करां छौं। तूं पण मति जायै। नै तूं जाणसी–

सती, तुम्हारे पिताने यज्ञ रचा है। उसने देवता बुलवाये हैं। इसलिए सभी देवता वहाँ जाते हैं।

सती ने तब कहा—अपन भी यज्ञ पर चलेंगे। तब सती से महादेव जी कहते हैं—तुम्हारा पिता तो मुझ से दुश्मनी रखता है। तुम्हारे पिता ने मुझे कितने ही बुरे वचन कहे, तब भी मैं बोला नहीं। और यज्ञ में मेरा हिस्सा है, सो तुम्हारा पिता कहता है, मैं हिस्सा निकाल बाहर करूँगा। अतः अपन तो बिना बुलाए नहीं जायेंगे।

सती तब कहती है—बाप के घर पर, सुसराल और पीहर में बिना बुलाये भी जाना हो सकता है। महादेव जी ने कहा—तुमने यह बात तो ठीक ही कही, लेकिन आगे इस प्रकार जाने पर मान नहीं प्राप्त होता। अतः ऐसे ही जाने से क्या लाभ? अतिरिक्त इसके वहाँ जो लोग बैठे होंगे, हँसी और करेंगे। मैं तो बिना बुलाये नहीं जाऊँगा और मैं तुम्हें भी जाने के लिए मना कर रहा हूँ। तुम भी मत जाना।

मोनै म्हारा बाप रै जातां मनहा करै छै सु थारौ बाप तोनै प्यारो छै। पण परणाई तौ म्हौंने छै। थारां बाप तो म्हौंसू बैर राखै छै। सो तोनै कुण आदर-सनमांन देसी।

पछै श्री महादेवजी तौ ध्यान करण नु बैठा। पण सती रौ मन आकुल-व्याकुल करै छै, विचारै छै, जो हूँ बाप रै एकलीहीज जाऊं। वळै मनमैं पाछौ विचारी छै। इतरै सती रौ मन उपडियौ सो उठनै हालती हुई। तरै श्री महादेवजी रा गण था सो दौडिया, पहुँच नै कहै छै-राज रै श्री महादेव जी सारीखौ भरतार नै राज अकेलाहीज पाळा बाप रै क्यु पधारौ छौ। तरै सती नै ऊभी राखी नै सांडियौ असवारी नै लेनै आया छै। छत्र चंवरा ले आया छै। पछै सती नै असवार करनै,

---

तुम जानोगी-मुझे मेरे पिता के यहाँ जाने को रोक रहे हैं—सो तुम्हें अपना पिता तो प्यारा है ही ! लेकिन तुम्हें मेरे साथ विवाही गई है। तुम्हारा पिता मुझ से वैर रखता है, तो तुम्हें कौन आदर सम्मान देगा !

इसके उपरान्त श्री महादेवजी तो अपना ध्यान लगाने बैठ गए। लेकिन सती का मन आकुल-व्याकुल हो रहा है-वह विचार करती है, मैं अपने पिता के यहाँ जाऊँ ! अकेली ही चली जाऊँ !! फिर मन में दुबारा विचार करती है। इतने में सती का मन चलायमान हुआ, अतः वह उठकर चलती बनी। तब महादेव जी के जो गण थे वे सब भागे। वे पहुँच कर कहते हैं-आपके महादेव जी के समान पति हैं, आप अकेली और पैदल ही अपने पिता के यहाँ क्यों जारही हैं ? तब सती को वहीं खड़ी रख बैल सवारी के लिए लाये हैं। छत्र-चँवर आदि ले आये है। फिर सती को सवारी करवा कर, सिर पर छत्र धारण करवाकर, मुँह के आगे चँवर डौलाते हुए, नृत करते जाते हैं। बाजे बजते हैं। इस प्रकार सती को उसके पिता के घर ले गए।

माथै छत्र धार नै चमर मुंहड़ा आगै करता नृत करता जावै छै। बाजत्र बजावै छै। इण भांत सती नुं बाप रै लेगया।

आगै जिग होय छै। देवता बैठा वेद भणै छै–होम होइ रह्यौ छै। दिख प्रजापत नै दिखरी बहू छेहड़ा–छेहड़ी बांधिया छै, बाजौट ऊपर बैठा छै। होम होय छै, आहुत दीजै छै। माथै मुकट दोनुं जणां रै बांधिया छै–होम रै कुंड आगै बैठा छै। जितरा मांहैलो सती सुं एकही कोई बोलै नहीं। थोड़ौ सो आ–उकार बहिणा दियौ, पण बीजौ कोई बोल्यौ नहीं। आय, बैस किण ही कह्यौ नहीं। तरै सती नुं रीस चढ़ी, घणौ क्रोध चढ़ियौ। तरै सती कहै छै–फिट रे बाप तोनै ! तू बड़ौ अधरमोछै-तें महादेव सुं बैर करनै हिसो जग मांहसुं परहो कीयौ, सो थारौ जिग पूरौ पड़ै नहीं। तूं महादेव जी मांहै काहुं समझै ?

वहाँ (देखा तो) यज्ञ हो रहा है। देवता बैठे वेद पढ़ रहे हैं–होम हो रहा है। दक्ष प्रजापति और उसकी स्त्री ने गठ–जोड़ा बाँधे हुए हैं—वे एक पाटे पर बैठे हैं। होम हो रहा है–आहुति दी जा रही है। दोनों के सर पर मुकुट बाँधा हुआ है–होम के कुण्ड के आगे बैठे हैं। इनमें से सती से कोई बोल भी नहीं रहा है। थोड़ा बहुत आदर–सत्कार बहनों ने दिया, दूसरा कोई बोलता ही नहीं है। आवो, बैठो, ऐसा किसी ने भी नहीं कहा । तब सती को बड़ी नाराजी हुई–उसे क्रोध चढ़ा, उस पर सती कहती है—'हे पिता,तुम्हें धिक्कार है ! तुम बड़े ही अधर्मी हो–तुमने महादेव जी से बैर रख कर, उनका हिस्सा यज्ञ में से बाहर किया–अतः तुम्हारा यज्ञ पूरा नहीं पड़ सकेगा। तुम महादेव जी को क्या समझ सकते हो ? (अर्थात् तुम्हें इतना ज्ञान कहाँ जो महादेव जी के महिमा, उनके महत्व को समझ सको)। मुझे महादेव जी हमेशा ही दाक्षायनी कह कर पुकारते हैं। लेकिन मेरा यह शरीर पिता

मोनै महादेवजी सदा ही दाख्यायनी कह बतळावै छै। पण ओ सरीर माहरौ बाप सुं पैदा हुई छै तो यो सरीर हुँ कोई राखु नहीं। तरै सती-जिग मांहै, होम रा कुंड थौ तिण मांहै कूद पड़ी। उणरौ पडणौ हूयौ नै तुरतज ऊपर सूं बिरखा हुई। पण सती तो बळी छै। नै सती साथै महादेवजी रा गण आया था, तिणा पण मनमैं क्रोध घणौ कियौ। गणांनु रीस आई, सो गण देवतासुं लड़ाई करण लागा छै। जिग रौ विधवंस करण लागा छै। सो देवता तिल जवां रा धोबा मंत्र भण नै होम रा कुंड मांहै नांखियौ सो जितरा जीव तिलरा दांणा होमिया था, जितरा कुंड माहथा जोधां होय नीसरिया। सो गणां सुं जुध करण लागा छै, सो गण सारा मारिया छै। नै कितरायक गण लोहां पूरति, के लोही बहतां नाठां। सु गण श्री महादेवजी कनै आया। सो आ हकीकत आगै नारदजी महादेवजी नै कहता था।

से पैदा हुआ है, यह शरीर मैं अब रखूँगी नहीं। तब सती यज्ञ में जो होम का कुण्ड था उसमें कूद पड़ी। उसका गिरना ही था कि तत्काल वर्षा हो चली। लेकिन सती तो जल ही गई। सती के साथ जो महादेव जी के गण आये थे, उन्होंने मन में बड़ा क्रोध किया। गणों को गुस्सा आया—अतः गण लोग देवताओं से लड़ाई करने लगे। यज्ञ को विध्वंस करने लगे हैं। देवताओं ने तब तिल और जव के दानों को मंत्र पढ़कर कुंड में फेंके जितने जीव थे, उतने ही दाने होम में फैंके थे। उतने कुण्ड में से योधे (वीर) पैदा होकर निकले हैं। वे गणों से युद्ध करने लगे हैं—सो तमाम गणों को मार दिए हैं। और कितनेक गण लहु—लुहान होकर लहु बहते भागे। तब गण श्री महादेव जी के पास आए। सो यही हकीकत (चर्चा) श्री नारद जी महादेव जी से कह रहे थे। इतने में गणों को खून से लथ—पथ देखकर, महादेव जी को गुस्सा आया। तब महादेव जी ने क्रोधित हो सिर की जटा खोली और उसे धरती

इतरै गणां रै लोही बैहतो देख नै महादेवजी नै क्रोध चढ़ियौ। तरै महादेवजी क्रुद्ध माथै री जटा खोली नै धरती सुं पटकी छै। सु जटां मांह सूं एक भद्र पुरुष पैदा हुवौ, तिणरौ नांम वीरभद्र नीसरियौ। सो श्री महादेव जी सूं अरज करै छै। तरै श्री महादेव जी कहै छै–दिख परजापत जिग करै छै। सो जायनै विधुंस करौ। नै जिग मांहै देवता होय, त्यां साराही नै मारौ। जिके ही देवता जिसड़ा होय तिसड़ी मार देजौ। तरै वीरभद्र घणां गणा नै साथै लेनै जठै जिग थौ जठै आयौ। जिग विधंसण कीयौ। भोजन साळ लूटी छै, देवतां रा हाथ पग भांजिया छै भृगु ऋषी सररी–दाढ़ी खोसी। दिख परजापत रौ माथौ वाढ्यौ छै। जिगरा कुंड मांहै नांख दियौ छै। सो माथो तो बळ गयौ छै, नै धड़ पड़ियौ छै। जिगरौ विधंसण करनै देवतां सूं सभ्झा देनै वीरभद्र पाछौ श्री महादेवजी कनै आयौ छै।

पर पटकी। जटा में से एक भद्र पुरुष पैदा हुआ–उसका नाम वीर भद्र रखा। वह महादेव जी से प्रार्थना करता है। तब महादेव जी उत्तर देते हैं–दक्ष प्रजापति यज्ञ करते हैं, सो तुम जाकर उसे विध्वंस करो। और जो देवता लोग यज्ञ में हैं उन सबको मारो। जैसे देवता हों, उनको उसी प्रकार की मार देना।

वीरभद्र तब बहुत से गणों के साथ वहाँ आया जहाँ यज्ञ था। यज्ञ को विध्वंस किया। रसोई को लूटी है—देवताओं के हाथ पैर तोड़े हैं–भृगु ऋषी जैसे की भी दाढ़ी खोसी है। (दाढ़ी–खींची है) दक्ष प्रजापति का सिर काटा है। उसे यज्ञ के कुंड में फेंक दिया है। इसलिए सिर तो जल गया है और धड़ रखा पड़ा है। यज्ञ को विध्वंस कर, देवताओं को सजा देकर, वीर भद्र वापिस श्री महादेव जी के पास आए हैं। पैरों पड़ा है। कई देवता भाग गये थे–उन्होंने ब्रह्माजी के पास आकर पुकार की है। कहा—श्री महादेव जी के गण वीरभद्र ने

पगै लागौ छै। नै केईक देवता नाठा था-सो श्री ब्रह्माजी कनै जाय नै पुकारिया छै। कह्यौ-श्री महादेवजी रै गण वीरभद्र जिग विधंसियौ-देवतां नै मारिया, दिख परजापत रौ माथौ बाढ़ नै बाळ नाखियौ। सारी हकीकत देवतां श्री ब्रह्माजी ने कही। तरै श्री ब्रह्माजी कहण लागा-हूं इण जिग मैं इणहीज वासतै आयौ नहीं। हमैं थै श्री महादेवजी कनै जाय नै पगे लागौ, ऊभा रह नै वीनत कीजौ। श्री महादेवजी मोटा छै-ईस्वर छै। जो महादेवजी री अस्त्री मुई, सती हुई छै, तोही असतूत कीयां थांनै गुन्हौ बंकससी। नै थै, देवता डरता जावौ छौ तो हालौ, थांहरै साथै हूँ हालूं। तरै श्री ब्रह्माजी देवतां नै लेनै कैलाश आया। तरै श्री महादेव जी ब्रह्माजी नुं आवता दीठा, तरै महादेवजी उठनै साम्हा आया छै-घणौ आदर सनमांन दियौ छै। पछै

यज्ञ का विध्वंस किया, देवताओं को मारा, और दक्ष प्रजापति का सिर काटकर जला दिया। सारी (तमाम) घटना देवताओं ने श्री ब्रह्माजी से कही। तब ब्रह्माजी ने कहा—मैं इसीलिए ही यज्ञ में नहीं आया। अब तुम जाकर महादेव जी के पाँव पड़ो—खड़े रहकर विनती करना ! श्री महादेव जी बड़े हैं—ईश्वर हैं । यद्यपि महादेव जी की स्त्री मर गई है। (वह) सती होगई है, तब भी प्रार्थना करने पर वे आपको क्षमा कर देंगे। और यदि आप देवता लोग डरके मारे न जावें, तो चलिये, मैं आपके साथ चलता हूं।

श्री ब्रह्मा जी तब देवताओं को लेकर कैलाश (पर्वत) पर आए। महादेव जी ने जब ब्रह्मा जी को आते हुए देखा, तब वे उठ कर सामने आये हैं, बड़ा ही आदर सन्मान दिया है। फिर यज्ञ की बात कही है। देवताओं ने तमाम हकीकत कही। तब ब्रह्मा जी ने कहा—श्री महादेव जी बहुत बड़े हैं (बड़े महान् हैं)—मोटे हैं। अब तो जितने भी देवता लोग यज्ञ में मारे गए हैं—उन्हें जिलाइये।

जिगरी बात कही छै। देवतां सारी हकीकत कही छै। तरै ब्रह्माजी कह्यौ–जो श्री महादेवजी राज बड़ा छौ, मोटा छौ हमैं तो जिग मांहै देवता मारिया छै जिकौ सरब सरजीवन करौ। जिग पूरण करौ। तरै श्री महादेवजी, श्री ब्रह्माजी ने साथै लेनै, जिग थौ जठै आया सो वीरभद्र नै गणां काम कियौ थौ सो देखता फिरै छै। सो श्री महादेवजी रा मारिया पड़िया छै, सो किणी रौ हाथ, किणी रौ पग, कणी रौ धड़ पडियौ थौ। सो सारा ही भेळा करनै श्री महादेवजी सारा ही नै फेर सरजीवन किया। नै दिखराज रा जभाण, र दांत भांगा था, सु दांत चेंढ़िया। भृगुरी दाढ़ी खोसी थी सो चेढ़ी। नै दिख परजापति रौ माथौ बळ गयौ थौ सो दिखरै बोकड़ा रौ माथौ लगाय दियौ। सगळा ही साजा किया छै।

श्री ब्रह्मा जी तब महादेव जी को साथ लेकर जहाँ यज्ञ था वहीं आए। जो कुछ काम वीरभद्र ने किया था, उसे वहाँ घूम–फिरकर देख रहे हैं। वे सभी महादेव जी के मारे हुए हैं—अतः किसी का हाथ, किसी का पैर, और किसी का धड़ पड़ा है। उन सबको श्री महादेव जी ने इकट्ठे करके दुबारा जीवित किए। और दक्ष राज के दांत और जीभ टूट गई थी अतः (श्री महादेव जी ने) दाँत चिपाए। भृगु का दाढ़ी खींची गई थी, उसे दुबारा चेपी गई। और दक्ष प्रजापति का सिर जल गया था, सो उसके सिर के स्थान पर बकरे का सिर लगा दिया। सबको जीवित कर दिए हैं।

इसके वाद श्री महादेवजी होम के कुण्ड पर आए। वहाँ देखा तो सती तो उसमें जल गई हैं और उस स्थान पर 'ज्वारे' उग गए हैं। और जिस कुण्ड में सती की देह होमी गई थी, उस कुण्ड में चार देवियाँ पैदा हुई हैं। एक मुख से जो ज्वालामुखी हुई। उसका स्थान उत्तर में स्थापन

पछै श्री महादेवजी होम रै कुण्ड ऊपरै आया। सो देखै तो सती तो मांहै बळगई छै, जठै जवांरा ऊगा छै। नै सती री देही होमी थी तिण कुंड मांह थी देवी च्यार हुई छै। एक मुखरी तो ज्वालामुखी हुई। तिणरौ उत्तर मांहै थापना कीवी। दूजी कुम्मख्या देवी हुई। तिणरी थापना पूरब मांहै कामरू देस में। तीसरी तुलतादेवो पगांरी हुई, तिणरी दखिण मांहै थापना छै। चौथी भगंती हिंगुलाज देवी हुई, तिणरी पछिम मांहै थापना कीवी। तरै श्री महादेवजी कवै छै। ओ भाद्रवा वदि तीज रो दिन छै, सो गोरी रौ दिन छै, तिणसुं इण तीजरौ नाम काजळी तीज है। इण तीजरै नांव म्हैं व्रत करसौं, नै बीजी ही संसार में अस्त्रियां ओ व्रत करसी, सो सुहागण होसी, रूपवंत होसी, लिखमीवंत होसी, बेटा, पोता, बहु पड़पोता देखसी, कबीला रौ घणौ सुख देखसी। तरै देवतांरी अस्त्रियां

किया। दूसरी कुमक्ष्या देवी हुई। उसका स्थापन पूर्व में कामरू देश में (है) तीसरी देवी पैरों तुलता देवी हुई–जिसकी दक्षिण में स्थापना हुई। चौथी भगवति हिंगलाज देवी हुई, जिसकी पच्छिम में स्थापना हुई। महादेव जी तब कहते हैं—यह भाद्रपद की कृष्णा तीज का आज दिन है, इसलिए इस तीज का नाम कजली तीज है। इस तीज के नाम से मैं स्वयं व्रत करूंगा, और संसार में जो स्त्रियां यह व्रत करेंगी, वे सौभाग्यवती होंगी, रूपवान होंगी, लक्ष्मीवान होंगी, बेटे, पोते और बहुत से पड़पोते देखेंगी। अपने कुटुम्ब का बहुत सुख लाभ करेंगी।

इस पर देवताओं की जो स्त्रियाँ वहाँ खड़ी थीं, सभी व्रत करने लगीं और महादेव जी को देवताओं की स्त्रियाँ पूछने लगीं, महाराज! कजली तीज के व्रत का विधि–विधान हमें बतावें।

ऊभी थी, सो सारी व्रत करती हुई, श्री महादेवजी नै देवतां री अखियां पूछती हुई, 'महाराज, काजळी तीज रे व्रतरी म्हांनै विध विधांन बतावौ।

तरै श्री महादेवजी कहै छै-'भादवा वदि तीजरै दिन परभातरा उठनै दांतण सीनांन कीजै, काजळ-तिलक करिजै, अबौट कपड़ा पहरिजै। गवर रै नांव व्रतरौ नेम घालियौ, आज म्हैं एकासणौ करस्यां। एकहीज धांन खावस्यां। गेहूँ, जव, चिणा, चावळ यां च्यारां धाना मैं एक धांन खांवणौ। चन्द्रमा रौ दरसण कर पूजा कर, एकासणौ खोलिजै, नै बांसरी छाबड़ी मैं दिन सात पहिली जवारां वाहीजै, जवां सुं तथा गेहूँ सुं। नै जवांरा दिन सात रा होय तरै काजळी तीजरै दिन बीलपान मांहै काजळ सूं सती री-मूरती मांडिजै। जवारां मांहै मूरत मांडी

तब महादेव जी कहते हैं—भाद्रपद की कृष्णा तीज के दिन सुबह उठकर दंतुन, स्नान करना, काजल, तिलक आदि करना–फिर नए कपड़े पहिनना। गवर के नाम पर व्रत करने का– दृढ़ निश्चय करना—(ऐसा सोचना) मैं आज उपवास करूंगा। एक ही प्रकार का अनाज खाऊंगा। गेहूँ, जव, चने और चावल इन चारों अनाज में से एक अनाज खाना। चन्द्रमा का दर्शन करके पूजा करनी चाहिए। इसके वाद उपवास खोलना चाहिए। सात दिन पूर्व ही बाँस की टोकरी में 'जुआरे' उगाने चाहिए—जव के दानों से अथवा गेहूँ के दानों से। और जवारे जब दिन सात के हो जायें तो काजली तीज के दिन बील के पान में काजल द्वारा सती की मूरती मांडनी चाहिए। जवारों में जो मूरती मांडी हो, उस पर बील का पान धर देना। इसके ऊपर फल रखने चाहिए। फूल जितने भी प्रकार के हों, तमाम भाँति के मंगवाकर, मूरति मांडी हो, उस पर चढ़ा देने चाहिए। उसके ऊपर

होइ, जिकौ बीलरौ पांन धरिजै। ऊपर फळ मेल्हीजै। फूल जिकै ही होय सो सारी जातरा मंगाय नै मूरत मांडै ऊपर चढ़ाईजै। ऊपर पीळौ कपड़ौ चढ़ाईजै। पछै चंदण केसर सूं पूजा कीजै। धूप, अगर मुहढा आगै खेविजै। घिरत रौ दीवौ कीजै। नैवेद, मुखवास, मुदा पण, पान चढाईजै। ब्राह्मण कनै प्रतिष्ठा कराईजै। भलीभाँति सुं शिव मंत्र भणाई जै। पछै चढ़ावौ होय सो सरब ब्राह्मण नुं दीजै। सातूरा लाडू कीजै, तिण मांहै सुं सातूरौ लाडू एक देवतां नुं चढ़ाईजै। सो लाडू एक चढावारौ ब्राह्मण नुं दीजै। बीजा लाडू सातूरा कीधा होइ सो चन्द्रमा री पूजा कीयां पछै खाईजै, पण थोड़ौ-थोड़ौ सगळां सुं बांट खाईजै। इण भाँति सुं पूजा करनै एकासणौ कीजै। जिकाई अस्त्री ओ व्रत करसी, तिणरो सुहाग भाग अवचळ रहसी। भरतार सुं घणौ हेत पियार रहसी। तिणरै कदेई भूख न आवै।

पीला वस्त्र चढ़ाना चाहिए। इसके बाद चंदन-केशर से पूजा करनी चाहिए। धूप, अगर उसके आगे जला रखना चाहिए। घी का दीपक करना चाहिए। नैवेद्य, सुपारी, आदि पांन-पांन पर चढ़ानी चाहिए। ब्राह्मण द्वारा प्रतिष्ठा करवानी चाहिए। अच्छी प्रकार से शिव के मंत्र का उच्चारण करना चाहिए। इसके बाद जो प्रसाद चढ़ापे के रूप में रखा हो सो सारा का सारा ब्राह्मण को दे देना चाहिए। सातूओं के लड्डू बनाने चाहिए उनमें एक सातू का लड्डू देवताओं को चढ़ाना चाहिए। वह एक चढ़ाया हुआ लड्डू ब्राह्मण को देना। दूसरे लड्डू जो बनाए हों, उन्हें चन्द्रमा की पूजा के उपरान्त खाने चाहिए। लेकिन थोड़ा-थोड़ा सभी लोगों को बाँटना चाहिए। इस प्रकार पूजा करने के बाद उपवास करना चाहिए। जो भी स्त्री इस व्रत को करेगी, उसका सौभाग्य-सुहाग अचल रहेगा। उसका अपने पति के साथ बड़ा प्रेम रहेगा। उसके घर में भूख (दारिद्र) कभी भी नहीं आयेगी। वह

दोहरी कदेई न रहै—सदा सुखी रहै। इतरौ कहनै श्री महादेवजी कैलास पधारिया। पछै एकण दिन इन्द्र देवता जिग मांडियौ। सो सारा देवता तैडिया छै, श्री ब्रह्माजी आया छै, श्री ठाकुर पधारिया छै। सो जिग करै। अस्त्री होय सो जीवणै अंगै बैसे। सु इन्द्र बैठा छै। इन्द्रणियां सोळै सिणगार करनै इन्द्रजी रै जीवणै कांनै बैठी छै। इन्द्राणी सुहागण मानैंती छै। सो कनहै बैठी छै। तरै जिग पूरौ करनै उठिया। श्री इन्द्राणियां ठाकुरां नै कहै छै—महाराज म्हानु इसड़ौ व्रत बतावौ, जिण कियां सु भरतार म्हौंसु—मौया करै। रूपवंती घणी हुवै, लिखमी अनधन पामीजै।

तरै श्री ठाकुर कहैछै—एक व्रत छै, सो महादेवजी सुन! पुरांणी कनु कह्यौ छै। सो हूं तोनै व्रत कहीस। तरै इन्द्राणी

कभी भी दुःखी न रहेगी—हमेशा सुखी ही रहेगी। इतना कह कर महादेव जी कैलाश पर्वत पर गए।

इसके उपरान्त एक दिन इन्द्र ने यज्ञ रचा। उसने तमाम देवताओं को बुलाए हैं—श्री ब्रह्मा जी आए हैं, श्री भगवान भी आए हैं। वह यज्ञ कर रहा है। स्त्री जो हो वह उसके दाहिनी ओर बैठती है। अतः इन्द्र बैठे हैं। इन्द्राणी सोलह शृङ्गार युक्त इन्द्र के दाहिनी ओर बैठी है। इन्द्राणी सुहागन है—मानेतन है। अतः वह इन्द्र के पास बैठी है। इसके बाद यज्ञ समाप्त करके उठे। श्री इन्द्राणी भगवान से कहती है—महाराज ! मुझे ऐसा व्रत बतावें, जिसके करने से पति हमसे प्रसन्न हो जाय। हम बहुत :ही रूपवाली बन जायें, बड़े धनधान वाली बन जायें।

तब श्री ठाकुर (भगवान) कहते हैं— एक व्रत है सो वह (व्रत) महादेव जी ने सुन ! पुराणी से सुना है। वह व्रत मैं तुम्हें कहूंगा। तब

कहै छै–महाराज ओ व्रत मोनै कहिजै। तरै श्री ठाकुर कहै छै— भाद्रवा वदि तीज अंधारा पखरी आवै, सो काजळी कहीजै। काजळी तीज रै दिन गौर रौ व्रत कीजै। प्रभातै उठनै दांतण स्नान करनै नेम घालिजै। चन्द्रमा देखनै पूजा कीजै। एकासणौ करस्यां, पछै सात्तू करस्यां। गौर री मूरत मांडीजै। सात दिन पैहली जवारा वाहीजै। एक बीलरा पांन ऊपर सती री मूरत मांडीजै, काजळ सूं। दूजै पांन ऊपर केसर री मूरत मांडीजै। गौर री मूरत बीजा पांन ऊपर मांडीजै। पछै मूरत लेनै जवांरा ऊपर मेल्हीजै। केसरियौ कपड़ौ कर ऊपर चढ़ाई जै–धूप अगर खेवीजै, घृत रौ दीवौ कीजै। कुंकुम केसर चंदण सूं पूजा कीजै। फूलां सूं जवांरा छांईजै–फूलां रौ बारणौ, पौळ कीजै। केसरियौ कपड़ौ पौळ–पौळ ऊपर नाखिजै। नैवेद्य, लाडू सातूरौ चढाइजै। मुखवास, मुद्रा पण चढाई जै। घणी प्रीतभाव

इन्द्राणी कहती हैं—महाराज ! वह व्रत मुझे कहें। तब श्री भगवान कहते हैं—भाद्रपद की कृष्ण की जो तीज आती है, वही कजली तीज कहलाती है। काजली तीज के दिन गौरी का व्रत करना (चाहिए)। सुबह उठकर दंतुन, स्नान आदि करके नियम धारण करना चाहिये। चन्द्रमा उदय हो तब पूजा करके चन्द्रमा का दर्शन करके 'गौरणीया' को भोजन करवाना चाहिए। जैसी बारी हो (सत्तू खाने की) उन स्त्रियों को उसी धान का सत्तू खाना चाहिए। चन्द्रमा को देखकर पूजा करनी चाहिए।

………। गौरी की मूर्ती बनानी चाहिए। सात दिन पूर्व ही जवारे उगाने चाहिए। एक बील के पत्ते पर काजल से सती की मूर्ती बनानी चाहिए। दूसरे पान पर केशर से मूर्ती बनानी चाहिए। गौरी की मूर्तियां और भी दूसरे पत्तों पर मांडनी (बनानी) चाहिए। फिर मूर्ती को लेकर जवारों के ऊपर रखनी चाहिए। कपड़े को केशर से

सूं पूजा कीजै। ब्राह्मण कनै पूजा कराईजै। पछै चढावौ होय सो ब्राह्मण नुं दीजै। पण आपी पूजा न कीजै।

एक अस्त्री थी सो आपीज पूजा करती। ब्राह्मण कनै पूजा न करावती। नै पूजा मैं चढ़तौ सो ब्राह्मण नुं देती नहीं। युं कहती ब्राह्मण काहुं करसी, जिकै ब्राह्मण करसी सुं म्हैहीज करसां। तरै वा अस्त्री मर गई। तरै वा फोही हुई। सु पूजा आपीज करिजै नहीं।

एक अस्त्री थी सो वा काजळी री पूजा विध सुं करती, नै एक दिन दीवौ न करती। सो मुई, तरै वा गुण चमचेड़ हुई। सो आपहीज पूजा न कीजै-लिखियौ छै तिण विध सूं पूजा कीजै।

श्री ठाकुर कहै छै-हे इन्द्राणी, ओ व्रत तूं घणी सरधा सूं, प्रीत सूं करै तो थारै लखमी रौ वासौ हुवै, सुहाग-भाग

रंगकर ऊपर चढ़ाना चाहिए-धूप, अगर खेना चाहिए, घी का दीपक करना चाहिए। कुंकुम और केशर, चंदन से पूजा करनी चाहिए। फूलों से जवारों को लाद देने चाहिए (इतने फूल चढ़ाने चाहिए कि जिससे जवारे ढक जायें) फूलों का ही दरवाजा और प्रोल (बड़ा दरवाजा) बनाना चाहिए। केशरिया कपड़ा हर प्रोल पर रखना चाहिए। नैवेद्य, लड्डू सत्तू का चढ़ाना चाहिए। पान, दक्षिणा, चढ़ानी (चाहिए) बड़ी ही श्रद्धा और भक्ति से पूजा करनी चाहिए। पूजा ब्राह्मण से करवानी चाहिए। इसके बाद जो प्रसाद हो वह ब्राह्मण को दे देना चाहिए। पूजा स्वयं न करे।

एक स्त्री थी वह अपने आप पूजा किया करती थी। ब्राह्मण से पूजा नहीं करवाया करती। पूजा पर जो चढ़ावा होता, वह ब्राह्मण को नहीं देती। ऐसा कहा करती—ब्राह्मण क्या करेगा, जो ब्राह्मण करेगा—वह मैं भी कर लूंगी। फिर (समय पा कर) वह स्त्री मर गई। तब वह 'फोही' हुई। इसलिए पूजा स्वयं नहीं करनी चाहिए।

अवचल रहै । तरै ओ व्रत इन्द्राणी भली विध सूं–करण लागी । सु श्री ठाकुर कहै छै ओ व्रत द्रोपदी नुं कह्यौ छै । द्रोपदी तूं ओ व्रत भादवा वदि तीज काजळी–तीज रौ आवै तरै करै । एक धांन वरस सौळह लग खाई । भावै आठ वरस तांई खाईजै । भावै च्यार वरस तांई खाईजै । पछै काजळी नै जजमीजै । सोळै गौरणी हुवै तिणां नुं पहलो तो गुळरौ पांणी पाई जै । पछै सात्तू घणौ घृत खांड घाल कीजै सो चन्द्रमा उगै तरै पूजा करनै चन्द्रमा रा दरसण करनै गोरणियां नूं जीमाइजै । जिणा री बारी होय तिणां स्त्रियां नूं ऊण धांन रौ सातू खवाइजै । पछै जीमीजै । पछै महादेवजी नुं वागो करी जै । महादेवजी री मूरत रूपारी कराईजै । आपरी सरधा सांरू, सहु करीजै ।

एक स्त्री थी वह काजली तीज की पूजा तो विधि से किया करती लेकिन दीपक कभी भी नहीं जलाती । वह मरी–तव चमगादड़ बनी । अतः स्वयं अपने हाथों पूजा नहीं करनी चाहिए–जैसा लिखा हुआ है, उसी विधि–विधान से पूजा करनी चाहिए ।

श्री ठाकुर कहते हैं—हे इन्द्राणी, यह व्रत तुम यदि बड़ी श्रद्धा से, प्रेम से करो, तो तुम्हारे यहाँ लक्ष्मी का निवास हो, सुहाग–भाग अचल रहे । तब यह व्रत इन्द्राणी बड़ी अच्छी विधि से करने लगी । श्री भगवान कहते हैं–यह व्रत द्रोपदी से कहा है । हे द्रोपदी, तुम यह व्रत भाद्रपद की कृष्णा तीज आए, तब करना । एक ही भाँति का अनाज वर्ष सोलह तक खाना । या फिर आठ वर्ष तक खाना । चाहे फिर चार वर्ष तक खाना । फिर कजली तीज का उजाना करना । सोलह कन्याओं को (कुंवारी कन्याओं को) पहले गुड़ का पानी पिलाना । फिर सत्तू बहुत–सा घी और खांड के युक्त बनाना । चन्द्रमा के उदय होने पर चन्द्रमा के दर्शन करके गोरणियां को भोजन करवाये । जिस

पछै च्यार पोहर रात राजोजगौ कराईजै। पछै च्यार पुहर री पूजा चार कीजै। पछै गोरणियां रै कुंकुंरा टीका कीजै। टीकां ऊपर चौखा चेढ़ीजै काजळ गोरणियांरी आंख मांहै घातीजै। मैंहदी हाथां पगां रै दीजै। बीड़ा खाईजै। पछै सूंघोवो तेल, फळ, चंदण, कपूर, कसतूरी चढ़ांई जै। चढियौ होय सो ब्राह्मण नुं दीजै रातीजोगो दिराई जै। बांभण नुं अमन दीजै सो श्री ठाकुर कहैछै-द्रोपदी तूं व्रत पूछती थी, सूं इण भांत सूं व्रत कीजै। नै व्रत इण भांत उजमीजै। इण भांत सूं व्रत गौररौ छै। श्री महादेवजी कह्यो छै, सो द्रोपदी म्हैं तोनै कह्यौ छै। तरै द्रोपदी व्रत भली-भांत सूं करण लागी छै।

धान की बारी हो, स्त्रियों को उसी धान का सत्तू खिलाए फिर भोजन करना-बाद में श्री महादेव जी को पोशाक पहिनाना। महादेव जी की मूर्त्ती चाँदी की बनाना। अपनी यथा शक्ति सहित सब यह करना। फिर रात्रि के चार पहर तक जागरण करना। फिर चार पहर की चार पूजा करना। फिर गौरणियों को (कन्याओं को) कुंकुम का टीका लगाना। टीके पर चावल चेपना। गौरणियों के आँगों में काजल से अञ्जन करवाना। उनके हाथों और पैरों में मेंदही लगाना। पान खाना चाहिए। फिर सुगन्ध वाला तेल, फल, चंदन, कपूर, कस्तूरी आदि चढ़ाना चाहिए। चढ़ावा हो वह ब्राह्मण को देना। रात्रि भर जागरण करना। ब्राह्मण को सुख शान्ति देना। तब श्री भगवान कहते हैं-तुम व्रत पूछ रही थी, सो इस प्रकार व्रत करना चाहिए और इसी प्रकार इस व्रत का उजाना करना चाहिए। इस प्रकार यह व्रत गौरी का है। श्री महादेव जी ने कहा था-वही मैंने हे द्रोपदी! तुम्हें कहा है तब, द्रोपदी भली प्रकार से व्रत करने लगी।

४–जन्माष्टमी री कथा

श्री गणेशआयनमः। अथ श्री जन्माष्टमी री कथा लिख्यते। एकण समीयै ब्रह्माजी दरबार जोडनै बैठा छै, तठै महादेवजी पिण आया छै। बीजा ही देवता ब्रह्माजी रै दरबार आया छै। बड़ा–बड़ा रिखीसुर दरबार मैं बैठा छै। ब्रह्माजी छै, सु सेष्टरा करता छै। वडी पदवी बैठा छै। तारै सब कोई आय आय नै नमसकार करैछै। सू सकोई बैठा छै। तिण समीयै नारद जी आया। सु नारद जी छै सु वडा भगत छै। सु ठाकुर नै राति दिन वीणा लीयां गावै छै। सु नारद जी ब्रह्माजी ने पुछैछै। सू राज ! आज जनमाष्टमी की कैसि मैंहैमा छै !! सु राज मोनै कहो। तारै ब्रह्माजी कहैछै। स्यावास पुत्र तैं ठाकुर रो नाम जस छै। सू मोनु कह्यौ। तरै ब्रह्माजी कहैछै, नै नारद जी

जन्माष्टमी की कथा

एक समय ब्रह्मा जी दरबार जोड़कर बैठे हैं–वहाँ महादेव जी भी आये हैं। दूसरे देवता भी ब्रह्मा जी के दरबार में आये हैं। बड़े–बड़े ऋषि लोग दरबार में बैठे हैं। ब्रह्माजी हैं वे सृष्टि के कर्त्ता हैं (सृष्टि के निर्माण करता हैं) बड़े (ऊँचे) आसन पर बैठे हैं। वहाँ सभी लोग बैठे हैं। उस समय नारद जी आये। नारद जी हैं–वे बड़े ही भक्त हैं। वे रात–दिन वीणा लिए भगवान का स्मरण करते रहते हैं। अतः नारद जी–ब्रह्मा जी से पूछते हैं–भगवान्, आज जन्माष्टमी कैसी है, कैसी महिमा है, कृपया मुझे बताएँ। तब श्री ब्रह्माजी कहते हैं। पुत्र,धन्यवाद ! उस भगवान के नाम का बड़ा ही यश है-वह तुमने मुझ से पूछा है। तब ब्रह्मा जी कहते हैं और नारद जी सुनते हैं। भाद्रपद की कृष्ण पक्ष में अष्टमी आवे,वह जन्माष्टमी का व्रत राजा अमरीख करता है। राजा बली(प)

सांभळै छै। भादवा मांस अंधारा पखरी आठम आवै सु जनमाष्टमी रो वरत राजा अमरीख करै छै। राजा बलीप करतो। राजा बिभिषण करतो। विजाही वडा-वडा राजा जन्माष्टमी रो वरत करै छै। सु इण वरत कीया रो इतरो पुन्य छै। कपिला गाय, सोवन सींगी, रूपा खुरी, तांब पुछी तितरो पुन्य हुवै। नै वळै कुरू खेत मांहे सुरज गिरहण मांहे सोनो दीजै, सो भादरबानो दीया रो पुन्य होवै तितरो पुन्य हुवै। वळै जेतराई तीरथ छै, तितरा नाया रो फळ हूवै, इतरो फळ छै। तारै नारद जी कहै छै, राज! जनमाष्टमी रो विधान छै, सो कह्यो-कैसी विधि सु वरत कीजै। तारै ब्रह्माजी कहै छै-नारद, भादवा वदि अष्टम रै दिन गोकूळ मांडीजै, चंदण सु मांडीजै। पछै देवकी माता मांडीजै। पछै जसोदा माता ढोलीयै ऊपर सूता मांडीजै। जसोदा माता-नंद-बाबो मांडीजै। पाछै श्री कयंनजी माता री छात करवट कनै

भी करता, राजा विभीषण भी किया करता-दूसरे भी बड़े-बड़े राजा जन्माष्टमी का व्रत करते हैं। अतः इस व्रत के करने का बड़ा पुण्य है-कपिला गाय, सोने की सींगोंवाली, चाँदी के खुरोंवाली तथा ताँबे की पूँछवाली, (ऐसी) गाय जो पुण्य करता है इतना बड़ा पुण्य-सूर्य ग्रहण में कुरुक्षेत्र के स्थान पर जाकर जो सोना दान दिया जाता है, वही भाद्रपद में देने पर पुण्य होता है; उतना पुण्य हो। फिर (सुनो) जितने तीर्थस्थान हैं, उनमें स्नान करने का पुण्य लाभ होता है (इतना इस व्रत से होता है) तब नारद जी कहते हैं-जन्माष्टमी का कैसा विधि-विधान है वह कहिए। किस विधि से यह व्रत करना चाहिए। तब ब्रह्मा जी कहते हैं, हे नारद! भाद्रपद की कृष्ण पक्ष के दिन गोकुल माण्डना चाहिए······उसे चंदन से मांडना चाहिए। फिर देवकी माता माडनी (चित्रित करना) चाहिए। फिर यशोदा माता का चित्र जैसे वह खाट पर बैठी हों, चित्रित करनी चाहिए। यशोदा माता और बाबा

मांडीजै । पछै रोहली माता मांडीजै । पछै बळभद्र जी मांडीजै। पछै श्री महादेव जी मांडीजै । बीजा ही तेतीस कोटि देवता मांडीजै। देवी मांडीजै । पछै गाया घणी मांडीजै। वछा घणा मांडीजै। पछै गोपी गोप मांडीजै। पछै काळीनाग मांडीजै। पछै परतिष्ठा भणीया ब्रामण कनै कराई जै। पछै आगै कुंभ एक मेलिजै। ऊपर सांळिगराम जी पधराइ जै। पाछै पूजा कीजै। पछै धूप अगरड खेविजै, दीवो घिरत रो कीजै। चंदण, कुंकुम, केसरि सुं पूजा कीजै। पछै अखित चढाई जै। नैइवेद हुई सो आंण नै समरपीजै। पछै तांम्रोळ समरपीजै। पछै भला छै दिखणा ब्रांह्मण नै दीजै। चढ़ायौ हुवै सो ब्रमण नुं दीजै। इण विधि सुं वरत करनै, पछै आप पारणौ कीजै। सु नारद जी इण विधि वरत करै तो तिण रै पाप रौ खै होवै।

नन्द भी चित्रित करना चाहिए। फिर भगवान श्रीकृष्ण माता की छाती से लगे–करवट के पास (लेटे) चित्रित करना चाहिए। फिर रोहनी माता चित्रित करनी चाहिए। फिर बलभद्र जी चित्रित करना। फिर महादेव जी चित्रित करना। फिर दूसरे तैंतीस करोड़ देवता चित्रित करना। देवी चित्रित करना। फिर बहुत सी गायें चित्रित करना,वहुत से बछड़े अंकित करना। फिर गोप और गोपियाँ चित्रित करना। फिर काली नाग को चित्रित करना। इसके उपरान्त(इन सभी उपकरणों की)प्रतिष्ठा पढ़े लिखे ब्राह्मण से करवानी चाहिए। फिर एक घड़ा मेलना चाहिए–उस पर सालगरामजी की मूर्ति स्थापन करनी चाहिए। फिर पूजा करनी चाहिए। इसके उपरान्त धूप, अगर से अर्चना करनी चाहिए–घी का दीपक रखना, चंदन, कुंकुम और केशर से पूजा करनी चाहिए। फिर अक्षत चढ़ाने चाहिए। नैवेद्य हों उन्हें लाकर (भगवान के) समर्पण करे। फिर पांन समर्पण करना चाहिए। इसके उपरान्त अच्छी सी दक्षिणा ब्राह्मण को देनी चाहिए। प्रसाद जो भगवान पर भोग निमित्त चढ़ाया हो, वह

घरमरी वेरध हुवै। तिण रै पुत्र हुवै, लिखमी अखूट रहै। उण नु' दोहरम कदै नावै। पुरष जिकोई जनमाष्टमी रो वरत करै सु सदा सरवदा लखमीवेत हूवै रहै जस सोभाग हुवै। नै मरा, बैकुंठ पदवि पावै। नै जो कोई पुरूष आष्टम रो व्रत न करै छै सु राख्यरौ जमारौ लहै। नै असत्री जिका ओ वरत न करै छै, तो सापिनीरौ जमारौ लहै; उजड़ि वन रो वासौ हूवै। सु नारद जन्माष्टमी रो वरत रो अनंत फळ छै, घणो पुन्य छै, जिण पुन्य रौ पार कोई नहीं। ठाकुर कहै छै–ओर वरत घणाई छै पिण ग्नतिस वरत महारा छै। सु करै–चोईस ईग्यारिस करै, एक रामनवोमी जनमआष्टम, नरसिंघ चतुरदसी, सिवराति, वामंन द्वादसी, ए वरत म्हारा छै। मनुष्य अवतार आयनै ए गुणतिस वरत करसीं तिणनु' हूं वैकुंठ पदवि मेलिस–इण वातरौ संदेह नहीं। तिण म्हारी पीति घणी महावालो भगत छै।

ब्राह्मण को दे देना चाहिए। इस प्रकार से व्रत करने के बाद फिर खुद व्रत को खोले (एक स्थान पर वैठकर एक समय भोजन करना चाहिए) हे नारदजी ! यदि कोई व्यक्ति इस रीति से व्रत करता है–तो उसके पापों का क्षय होता है। उसके धर्म की वृद्धि होती है–उसके सन्तान हो, लक्ष्मी उसके यहाँ अखूट रहे। उसे कभी भी कष्ट न हो। जो पुरुष जन्माष्टमी का व्रत करता है, वह हमेशा लक्ष्मीवान होता है। और यश का भागीदार बने और मरणोपरान्त वैकुण्ठ में स्थान प्राप्त करे। यदि कोई व्यक्ति अष्टमी का व्रत नहीं करता है, वह राक्षस का जन्म पाता है। और स्त्री यदि व्रत नहीं करती है, उसे सापिन (नागिन) का जन्म लेना पड़ता है। उसे निर्जन वन में वास करना पड़ता है। अतः हे नारद ! जन्माष्टमी के व्रत के असंख्य फल हैं; बड़ा ही पुण्य होता है, जिस पुण्य की महिमा का कोई पार नहीं पा सकता। भगवान कहते हैं–और तो बहुत से व्रत हैं, लेकिन उन्तीस व्रत मेरे हैं। अतः उन्हें भी करें

एक दिन राजा युधिसटर जी बैठा छै तिनि समीयै श्रीक्रसन जी पधारया। तारै राजा युधिष्टर नमसकार करिनै हाथ जोरि नै श्री ठाकुर नै कहै छै–राजरी, आजो जनमआष्टमी हुई छै, त्युं कहो मोनैं। तरै श्री किसनजी कहै छै, राज युधिष्टर जी सांभळै छै। ठाकुर कहै–धरती मैं कंस रौ जोर हूवो। तारै देवता प्रथी मैं भेलें होय नै ब्रमाजी कनै आय पुकारीया। तारै ब्रमाजी, देवता प्रिथी मैं भेळा होय नै खीरि सागर मैं आया। आयनै हमारी असतूति करै छै। तारै मैं दरसण दयो। तारै ब्रह्माजी कहै छै। राज मिरत लोक मांहे मथुरा नगरी छै, तिठै दैत कंस अवतरीयो। सु मनिखा नुं घणा दुख देवै छै। औ किणहिवि ते मरै नहीं। तारै ठाकुर बोलया। हुं मथुरा जी मांहे बसुदेव जी

चौबीस एकादशी के व्रत, एक व्रत राम नवमी का, एक जन्माष्टमी का, नृसिंह चतुर्दशी का, एक शिवरात्रि का और एक वामन द्वादशी–ये व्रत मेरे हैं। मनुष्य जन्म लेकर ये उन्तीस व्रत जो व्यक्ति करेगा, उसे वैकुण्ठ में स्थान प्राप्त हो, इस बात में किसी प्रकार का संदेह नहीं। उस (व्यक्ति) पर मेरा बहुत ही प्रेम रहता है और वह मेरा भक्त होता है।

एक दिन राजा युधिष्ठिर बैठे हैं—उस समय श्री कृष्ण जी पधारे। तब राजा युधिष्ठिर नमस्कार करके और हाथ जोड़ कर श्री ठाकुर से कहते हैं–भगवान्, आपकी जो यह जन्माष्टमी हुई–उसके विषय में मुझ से कहिए! तब श्री कृष्ण जी कहते हैं और राजा युधिष्ठिर सुनते हैं। भगवान कहते हैं—पृथ्वी पर कंस बलवान हुआ। तब देवता लोग इकट्ठे होकर ब्रह्माजी के पास आए और (आकर) पुकार की। तब ब्रह्माजी और सभी देवता इकट्ठे होकर क्षीर सागर में आए। आकर

यदिव छै । तिण रै घरै अवतार लेइस । नै देवता नुं कहीयो थे थांहरो अंस मैलनै मथरा जी मांहै अवतार लेजो । हवै थे जावो । तारै ब्रह्माजी देवता इसी बात सुण नै पिरथी मैं आपरी जायगा आया । पाछै कंस बसदेवजी नुं आपरी बेहनि देवकी माता परणाया, तारै घरानुं हालिया । साथै कंस पोहोचावण आयो थौ । सु आकासवाणी हुई । जू आठमो गरभ ईण रै उदर आवसी, सु थारो मारणहार हूस्यै । तरै कंस दौड़ नै देवकी री चोटी पकड़ी नै खडग काढनै मारण लागो । तरै बसदेव जी कहै–थारे तो गरभ सु कांम छै बैहनि कांयों मारै । थारी दाय आवै तो आठमो गरभ लै, तरै आ वात कही । तरै कंस देवकी नुं छोड़ी । बरस दिन हूवो, ज्यूं एक बालक जायो । सु बसदेव जी कंस कनै आंणीयो । तरै कंस जोयनै ढीलो होयो । तरै कंस कनै नारद जी आया । आयनै कहै,

---

मेरी स्तुति करते हैं । तब मैंने दर्शन दिए–तब ब्रह्माजी कहते हैं–भगवन्, मृत्युलोक में मथुरा नगरी है, वहाँ कंस नाम का दैत्य पैदा हुआ है । वह मनुष्यों को बड़े ही कष्ट देता है और किसी से भी मरता नहीं । तब भगवान बोले–मैं, मथुरा नगरी में वसुदेव जी यादव हैं उनके यहाँ अवतार लेऊँगा । और देवताओं से कहा—आप अपना–अपना अंश रखकर मथुरा जी में अवतार लेना । अब आप जाइयेगा । इस प्रकार ब्रह्मा जी व देवता लोग ऐसी बात सुनकर पृथ्वी पर अपनी–अपनी जगह आए । समयोपरान्त कंस ने वसुदेव जी को अपनी बहन देवकी माता विवाह दी–वे लोग अपने घर को चले । साथ में कंस उन्हें पहुँचाने आया था । रास्ते में आकाशवाणी हुई–इसके आठवाँ गर्भ जो होगा, वहीं तुम्हें मारने वाला होगा । तब दौड़कर कंस ने देवकी की चोटी पकड़ी (वह) तलवार निकाल कर उसे मारने लगा । तब वसुदेवजी कहने लगे–तुम्हारा तो गर्भ से काम है, बहिन को क्यों मारते हो ! तुम्हें ठीक

थे बालक परा मारौ। कुंण जाणे कोई आठमों गरब छै। तरै कंस छ बाळक मारीया-सातमै गरभ बळभद्र जी पधारीया। सु कंस जांणै देवकी रो गरभ आळ-भाळ होय गयो। ता आठमै गरभ हूँ आयो। तरै देवकी माता वसदेव जी वंदीखांना मांहे कंस रै हुता, सु म्हारो जनम हूवो। तरै म्हे वसदेवजी नुं देवकी माता नुं चुतरभुज रूप रो दरसन दीयो। इणां महारी असतूती कीनी। तरै मै कहीयो। थे मोनुं गोकूल मांहे जसोधा माता रै-नजीरै लैजाबो। थे कंस थी बीहो मां। तरै रखवाळा था स सोगया। ताला था सु झडी परी अया। तरै वसदेवजी श्री ठाकुरां नुं लैनै गोकुळ जी माहीं आया। शेषजी छत्र करै छै। यमुना पागे लागी नै मारग दिय छै। ताय नंद जी मिलिया। जसोधाजी तिणसमै बैठी-जागै छै। सू सूति छै, तिण सुं सुधि काई नहीं।

लगे तो आठवाँ गर्भ ले लेना ऐसा (उसे) कहा। तब कंस ने देवकी को छोड़ा। एक वर्ष का समय व्यतीत हुआ, तो एक बालक पैदा हुआ। तब वसुदेव जी ने कंस को लाकर वह दे दिया। तब उसे देखकर कंस जरा नम्र पड़ा। तब कंस के पास नारद जी आए। आकर कहा—आप इस लड़के को मार दीजिए। कौन जानता है आठवें गर्भ में क्या होगा। तब कंस ने छः बालक मारे, सातवें गर्भ में बलभद्र जी पधारे। कंस ने समझा—देवकी का गर्भ अंट-संट होगया है। इस प्रकार आठवें गर्भ में मैं आया। उस समय देवकी माता और वसुदेव जी—कंस के बन्दीखाने में थे; वहाँ मेरा जन्म हुआ। तब मैंने वसुदेव जी एवं देवकी माता को चतुर्भुज रूप धारण करके दर्शन दिए। इन्होंने मेरी प्रार्थना की। तब मैंने कहा आप मुझे गोकुल में यशोदा माता के पास पहुँचा दें। आप कंस से डरो मत········। उस समय जो रक्षक लोग थे, वे सभी सो गए। ताले थे, सो खुल गए। तब वसुदेव जी भगवान को लेकर गोकुल में आए। शेष भगवान् छत्र करते हैं। यमुना पाँव पड़कर उन्हें

किसन जी नुं जसोदा कनै सुवांव नै बेटी लेनै पाछा आय देवकी माता नुं दीनी। तरे केवार जड गया। ताला जडीया छै- नै माहे बाळकी रोई। तरै कंस दौड़ी नै आयो। ताला खोलीया। किवाड खोल-दीवो लीया मांहे आया ज्युं देखै तो देवकी बाळकी लीया बैठी छै। तरै कंस दीठो यौ कैसा हूवो! बेटो थो नै आ बेटी क्युं हुई। तरै बेटी देवकी कनै सुं कंस मागै छै, जु आ बेटी मोनु वकस। तरै कंस खोसनै बारै लै आयौ। नै बाळकी थी सु देवी रो रूप थो सू कंस रा हाथ महि थी, ऊडनै ऊंची गई। सु देवता सिंहासण आण दियो छै। अष्ठभुजि देवी बैठी छै। हाथ मांहि आयुध छै। कांनां मांही कुंडील छै। वागो पिहरीयो छै। देवता हाथ डीयां असतूति करै छै। देवी रो नाम बीजुली देवी छै। तरै कंपिण ऊभो देखै छै। तरै देवी कहै छै, रे कंस तुं

मारग देती है। वहाँ आकर नन्द जी मिले। उस समय यशोदा जी जागती हुई बैठी है। वह सो जाती है—इससे उसे कोई सुधि (खबर) नहीं रहती। (वसुदेव जी ने) श्री कृष्ण को यशोदा के पास सुलाकर, पुत्री को लेकर वापिस आकर उसे देवकी माता को दी। तब किवाड़ सभी बन्द होगए। किवाड़ बन्द हैं—उनमें से लड़की रोई। तब कंस दौड़कर आया। ताले खोले। किवाड़ खोलकर दीपक लिए अन्दर आकर देखा, तो देवकी लड़की लिए बैठी है। तब कंस ने देखा—यह कैसे होगया ? लड़का था—(लड़का होने को था) यह लड़की कैसे होगई ? तब देवकी से लड़की को कंस मांगता है—यह लड़की तुम मुझे भेंट करदो। तब कंस उसे छीनकर बाहर ले आया। लड़की थी—वह देवी थी। वह कंस के हाथ में थी, उड़कर ऊपर को गई। उसे देवताओं ने आसन दिया है। अष्ट-भुजाओं वाली देवी बैठी है। हाथों में आयुध (हथियार) हैं। कानों में कुण्डल हैं। पोशाक पहिनी हुई है। देवता हाथ जोड़े प्रार्थना करते हैं। देवी का नाम बिजली है। तब (कंस)



मोनूं मारतो थो। देवकी नुं तो वकसी नहीं। वगसी हुँती तो थारो भलो हूवत। म्हे देवी. महांनुं कुंण मारै ! पिण थारो माराहार बाळक परगटीयो छै। आ बात कह नै आपरी जाइगा गई। नै कंस मन मांहे पछतावो करै छै-चिन्ता करै छै, जु म्हे भूंडो कीयो। देवकी नै मैं बेटी खोस लीनी, नै वसुदेव नुं बंदीखाना दीयो। वडो साध छै-ए रीस करसी सराप देसी-तो हूँ नरक गांमी हूईस। तरै वसदेवजी कनै कंस आयनै वीनती करै छै-मैं थांनुं दुख दीयो, सो आकासवांणी कयो थो। नै आकासवांणी कुडी होय तो किसो दोस। थे वडा साध छो-मोनूं क्षमा करो। तरै वसदेव जी कहै छै-कंस, थारो दोस नहीं। आ बात हूण पदारथ छै, दईव रै सारै छै। तोनुं दोस कोई नहीं। तरै वसदेवजी नुं देवकी माता नुं घर री सीख दिनी। घरै आया।

कांपता हुआ खड़ा देखता है। तब देवी कहती है—रे कंस, तू मुझे मारता था न ! देवकी को तो तूने क्षमा नहीं किया। तूने उसे क्षमा कर दिया होता, तो तेरा कल्याण होता। मैं तो देवी हूँ, मुझे कौन मार सकता है ? लेकिन तुम्हें मारने वाला बालक पैदा हुआ है। यह बात कहकर वह अपने स्थान पर चली गई। कंस अपने मन में पश्चाताप करता है—मैंने बहुत ही बुरा किया। देवकी की पुत्री मैंने छीनली—और वसुदेव को मैंने बन्दीखाने में डाल दिया। वह (वसुदेव जी) तो बड़े ही साधु पुरुष हैं। इन्हें गुस्सा आया और इन्होंने शाप दे दिया तो मैं नर्क का भोगने वाला हो जाऊँगा। तब कंस वसुदेव जी के पास आकर प्रार्थना करता है—मैंने आपको कष्ट दिये थे, इसके विषय में मुझे आकाशवाणी हुई थी (इसी-कारण) और अब आकाशवाणी भी झूठी सिद्ध हो जाए, इसमें किसका दोष है। आप तो बड़े ही साधु-पुरुष हैं—मुझे क्षमा करदें। तब वसुदेव जी कहते हैं—हे कंस ! इसमें तुम्हारा कोई दोष नहीं है। यह बात इस प्रकार होनी ही थी—होनहार विधि

कंस पिण आपरै घरै आयो । नींद न आई। सवारै कंस कनै दुष्ट दैत था सु आया। ता रात री बात कही। दुष्ट कंस मतो दीयो–सु धरती मांहे बाळक जनमीया छै, सू सोह मारसां। गाय बांभण रिखीसर नु पण मारसां। वेद रो नास करसां। ओ मतौ करनै ऊठीया । पहिली तो ठाकुरां पूतनां नु मारी। बीजै फेरै ठाकुर सूता था नै त्रणावरत ळैनै ऊंचो ऊडीयो । उठै ठाकुरां गलै द्रपोदे नै तणवरत मारीयो । सिला ऊपर पडतां रो माथो फाटो। पछै ठाकुरा माता नु मुख मांहे वैकूंठ देखायो। पछै माखण खायो। पछै माता कनै ऊखळ सो बंधायो। पछै गोवरधन परबत दिन सात उचाय नै राखीयो । इंद्र रो गरब गमायो। पछै काळी नाग रै माथै पग दीया काळी नाग नु यमुना माहि थी काढि नै रमणीक समद मेलीयो। पछै घणा

के हाथ में हैं। तुम्हें इसका कोई दोष नहीं। तब उसने वसुदेव जी को एवं माता देवकी को घर जाने की इजाजत दी। वे लोग घर आए। कंस भी अपने घर आया। उसे नींद नहीं आई। तड़के बहुत ही जल्दी कंस के पास दुष्ट दैत्य आये। उन्होंने रात्रि की बात कही। दुष्ट कंस ने राय दी कि जितने भी बच्चे पृथ्वी पर जन्मे हैं, उन सभी को मार देंगे। वेद का नाश करेंगे। ऐसी बात सोचकर उठे।

पहले तो भगवान् ने पूतना को मारी। दूसरी बार भगवान् सोए हुए थे। उन्हें त्रणावरत लेकर ऊपर आकाश में उड़ा। वहाँ भगवान् ने उसका गला दबोचकर त्रणावरत को मारा। उसका शिला पर गिरते ही सिर फूट गया। फिर भगवान् ने माता के मुँह में बैकुण्ठ (उन्हें) दिखाया। बाद में मक्खन खाया। फिर माता द्वारा अपने आपको ऊखल से बँधवाया। इसके बाद गोवर्धन पर्वत को सात दिनों तक ऊपर उठाकर रखा। इन्द्र का गर्व दूर किया। फिर काली–नाग के शिर पर

चरित मुथोरा गोकुल मैं कीया। पछै नारद जी जायनै कंस नै जगायो। तरै कंस अकुर मेल नै मानु तेडायौ। मारग मांहे आप आवतां आपरी माया दिखाई। अकुर रै साथै मथुरा जी आया। रजक (धोबी) नै मार कपड़ा लीना। कुबजा रो चंदन लै नै सुधी कीनी। तीन लोक रो रूप दीयो। पछै सुदामा रै घरै आया-राति सूता। उण रो दालेदर गमायो। परभात रा धनुंखसाळा धनुंख भांजीयो, रखवाळा मारीया। पछै कवळीया पीड हाथी रो दांत उपाड़ नाखीया। पछै पकड़ माथा ऊपर भमाय धरती सु पटकीयो। पाछै महा चंकर मुंलडीया, उणनुं मारीया। पाछै रंगभूमि मांहे आया। कंस माचा ऊपर बैठो थो। कंस मुहडा थी-वसुदेव जी नुं उग्रसेनिजी नुं कुवचन कहीयौ। तरै कीसनजी दौड नै कंसरी चोटी पकड़ी नै इसडो मार दीयो।

पैर रखा—काली नाग को यमुना में से निकालकर सुन्दर समुद्र में जा रखा। फिर नाना प्रकार के चरित्र मथुरा और गोकुल नगर में किए। तब नारद ने जाकर कंस को जगाया (उसे सचेत किया) तब कंस ने अक्रूर को भेजकर मुझे बुलवाया। रास्ते में मैंने उसे अपनी माया दिखाई। अक्रूर के साथ मथुरा आया। रजक (धोबी) को मारकर उससे कपड़े छीन लिए। कुब्जा का चंदन लेकर उसे सीधी बनाई (उसकी कूबड़ निकाल दी)। उसे तीनों लोकों का सौन्दर्य प्रदान किया। फिर सुदामाजी के घर आया—उसके यहाँ रात्रि में विश्राम किया। उसका दारिद्र नष्ट कर दिया। सुबह धनुष-भण्डार का धनुष तोड़ा। उसके रक्षकों को मारे। इसके बाद कवलियापीड़ हाथी के दांत उखाड़ फेंके। फिर उसे पकड़—सिर से घुमाकर पृथ्वी पर गिराया। इसके बाद महाचकर से लड़े, उसे मारा। फिर रंगभूमि में आए। कंस (उस-समय) मंच पर बैठा था। कंस ने मुँह से वसुदेव जी को और उग्रसेन को बुरे बचन कहे। तब कृष्ण जी ने दौड़कर कंस की चोटी पकड़ी। और उसे ऐसा

सू कंस उठै ही नु मूंवो । तरै किसन जी वसदेवजी देवकी माता कनै आया । वसदेव नु माता नु ग्यांन ऊपनो । जमै बेटा किण रा । ओ परमेसुर आप परगट हुवो छै, धरती रो भार उतारण नु । सु हाथ जोड वसदेव जी नै देवकी ऊभा छै । तरै ठाकुर रो दीयो इण नु ग्यान ऊपनौ । सु यमरू ग्यान री वेळा नहीं । महारै अजुंस घणो काम करणो छै । तरै कृष्नजी कहै छै माता जी, थे मोनु कांय न मिलिया । माताजी–थे बंदीखाना माहै घणो दुख पायो तिण बात सै न मेलौ छौ । सू माताजी माहरो दोस कोई नहीं । हुँ पार के घर मोटो हुवो । सू इण कंस दुष्ट थी डरता थे मोनु नंदजी रै घरै मेलीयो तरै हुँ उठै मोटो हुवो । थांहरा हीडा क्यु करि हवै । सू माताजी थे मानु रमायो नहीं । चुंघायो नहीं । मोटो न कीयो । सु थांहरो दोस छै ।

(बुरी तरह से) मारा, कि कंस उसी स्थान पर ही मर गया । तब कृष्ण जी वसुदेव जी और देवकी माता के पास आए । वसुदेव जी और माता को ज्ञान उत्पन्न हुआ—ये पुत्र किसके ? यह तो स्वयं ईश्वर–अवतार लेकर आया है । पृथ्वी का भार उतारने को । अतः (वे) हाथ जोड़कर वसुदेव जी और देवकी जी खड़े हैं ।........ ....
.................................। ....। मुझे अभी काफी काम करना है । तब कृष्ण जी कहते हैं—माता जी आप मुझे क्यों नहीं मिलीं ? आपने बन्दीखाने में बड़ा ही कष्ट पाया है, इसीलिए नहीं मिल रही हैं । उसमें हे माता, मेरा कोई दोष नहीं है । मैं तो पराये (किसी दूसरे के) घर में बड़ा हुआ । इस दुष्ट कंस से भयभीत होकर आपने मुझे नन्द के घर भेजा—अतः मैं वहीं बड़ा हुआ । तुम्हारा (मुझ पर) स्नेह कैसे हो सकता है ? अतः हे माता, तुमने मुझे बचपन में खेल नहीं खिलाये । आपने अपना (स्तनों से) दूध नहीं पिलाया । मुझे बड़ा नहीं बनाया । इसमें तो आपका ही दोष है । अब मैं बड़ा होगया, तब

हवै हूँ मोटो हूवो, तरै मैं कंस नै मार नै बंदी खाना थी छुडाया। तरै वसुदेव जी नै मोह लागो। तरै कहै, रे बेटा! तो बिन मेह दुःख पायो। नै ओ कंस छै सुरखै मिस करनै सूतो होसी। ओ वळै उठनै साध छै तिणानु दुख देसी। तरै श्री कृष्ण जी कंस नै घीसनै बारै नांखीयौ। तरै जिकै भगत छै सु आय आय नै ठाकुर रै पगै लागे छै। उग्रसेन राजा नुं मथुरा रो राज दीयो छै। सु वेसन भगत छै सू महोछो करै छै। सू कहैछै-राज मथुरा मांहे आजु पधारीया छो सू आज ही राज रो जनम हूयो। तरै ठाकुरं कहै छै-आज जनमाष्टमी करो। मथुरा मांहे था त्यां वरत कीयो। चांद देखनै चांदनै अरघ देवै। आधी राति रो ठाकुर रो जनम हूवो। तरै बाजित्र बजाइ छै ताल, पखावज, मिरदंग,

---

मैंने कंस को मारकर (आप लोगों को) बन्दी-खाने से छुड़ाये हैं। इस पर वसुदेव जी को मोह होगया। तब कहने लगे—बेटा! तुम्हारे बिना हमें बड़े ही कष्ट पाने पड़े और यह जो कंस है यह ऐसे ही बहाना बनाकर सो गया होगा। यह फिर उठकर अपने कुकर्म करेगा। मनुष्यों को दुःख देगा। तब श्रीकृष्ण जी ने कंस को घसीटकर बाहर फेंक दिया। इस पर भगवान के जितने भी भक्त लोग थे सभी आकर भगवान के पैरों पड़ते हैं। उग्रसेन राजा को मथुरा का राज्य दिया है। अतः जितने भी वहां भक्त लोग हैं वे सभी उत्सव आदि करते हैं। वे कहते हैं—भगवान! आप तो मथुरा में आज ही पधारे हैं—अतः (हमारी तरफ से तो) आपका जन्म आज ही हुआ समझा जायगा। तब भगवान कहते हैं—आज जन्माष्टमी (का व्रत) करो। मथुरा में (भगवान थे) तभी व्रत किया गया। चांद को देखकर चांद को अर्घ देकर (व्रत किया गया)। अर्द्ध-रात्रि में भगवान का जन्म हुआ। तब बाजे बजते हैं—ताल, पखावज, मृदङ्ग, बांसुरी, शंख-झालर, दमामा, ढोल बहुत प्रकार से बजते हैं। रात्रि में जागरण करना चाहिए।

वांसली, संख, झाळरी, दमामा, ढाल घणा वाजा वजाईजै । रातै जागरण कीजै, दान-पुन घणो कीजै । पछै धूप, दीप, नैवेद, तंबोल, पोहपा सूं पूजा करीजै, घणा उछाह कीजै । ठाकुर कहै छै–ओ माहरी जनमष्टमी रो वरत करसी, तिण रै जनम–जनम रो पाप जावसी । नै वैकूंठ पदवी पावसी या ठाकुर री जनमष्टमी रो वरत करै तिण कै अनंत फळ छै । इति श्री जनमासटमी री कथा-वारता संपूर्ण सरव सिधदायक श्री कृष्ण सदासहाय छै ।

दान-पुण्य बहुत सा करना चाहिए। इसके बाद धूप, दीप, नैवेद्य, पान, फूलों आदि से पूजा करनी चाहिए । बड़ा ही हर्ष, आनन्द–मनाना चाहिए । भगवान कहते हैं—मेरी (इस) जन्माष्टमी का जो व्रत करेगा, उसके जन्म–जन्मान्तर के पाप कट जायेंगे और वह स्वर्ग में उच्च स्थान को प्राप्त करेगा । भगवान की इस जन्माष्टमी का व्रत जो करता है, उससे अनन्त फल प्राप्त होते है ।

५—रिषि पंचमी री कथा

श्री गणेशायनमः । अथ रिषि पंचमी री कथा लिख्यते ॥ युधिष्ठिर उवाच । हे कृष्ण मैं थां कन्हा अनेक व्रत सुणिया छै। अब अनेक पाप दूर करै इसो व्रत सुणियो चाहूं छूं । श्री कृष्ण उवाच । राजा थांनु और रिखि पंचमीं रो व्रत कहूं छूं । जिकै व्रत कियां इस्त्री अनेक पाप सूं छूटै । युधिष्टिर उवाच–हे कृष्ण उवा पंचमी किसी अर रिषपांच्यो क्यूं कहावै । नारी व्रत कियां किसै पाप सूं छूटै । पाप तो अनेक छै, रिषि पांच्यो रै व्रत सूं किसै पाप सूं छूटै । श्री कृष्ण उवाच । जिका नारी रजस्वला हुई थकी जांण अजांण घररा भांडा भीटै तिकै नूं बहोत पाप हुवै । च्वारूं वरणा रां लोकां रजस्वला इस्त्री नु घर बाहर राखणी । तिण रो कारण सुण । आगै इंद्र व्रतरासुर नूं मारियो तद ब्रह्म हत्या

ऋषि पंचमी की कथा

युधिष्ठिर ने कहा–हे कृष्ण, मैंने आपसे अनेक व्रत सुने हैं । अब ऐसा व्रत सुनना चाहता हूं, जिससे अनेक पाप दूर हों । श्री कृष्ण बोले–राजा, तुम्हें एक ऋषि पंचमी की कथा और कहता हूँ, जिस व्रत के करने से स्त्रियाँ अनेक पापों से छूटती हैं । युधिष्ठिर बोला–हे कृष्ण, वह कौनसी पंचमी है और ऋषि पंचमी क्यों कहलाती है । व्रत करने से नारि कौन से पाप से छूटती है ? पाप तो अनेक हैं—ऋषि पंचमी के व्रत से कौन से पाप से छुटकारा हो ? श्री कृष्ण ने कहा—वह स्त्री रजस्वला हो जाने पर जान में अथवा अजान में घर के बर्तनों को छूए, उसको बहुत पाप होता है । चारों वर्णों के लोगों को रजस्वला स्त्री को घर से बाहर रखनी चाहिए । उसका कारण सुनो । पहले इन्द्र ने वृतासुर को मारा–तब इन्द्र को ब्रह्महत्या का पाप लगा । तब इन्द्र

इन्द्र नुं लागी । तद इन्द्र लाज करतो थको-ब्रह्मा जी रै सरण गयो । तद ब्रह्माजी इन्द्ररी ब्रह्म हत्या च्यांरै ठिकांणे विहच दीवी । अगनरी पहली ज्वाला नुं, नदी नुं, पर्वत नुं, अर नारी नुं-इण ठिकांणे विहच दीवी छै । इण वासतै रजस्वला नारी सूं वात न करणी । पहिलै दिन चांडाळी जांणणी, दूसरै दिन ब्रह्मघातकी जाणणी । तीसरै दिन रंगारी जाणणी, चौथे दिन सुद्ध हुवै । अजांण अथवा जांण अर इस्त्री जो किणी वस्त नूं भींटी हुवै तो रिषि पांच्या रो व्रत करै तद पाप सूं छूटै । तिण वासतै ब्राह्मणी, छत्रांणी, विणयांणी, शूद्री ओ व्रत करणो । श्री कृष्ण उवाच । हमैं राजा रिषि पांच्या रो इतिहास कहूँ छूं । आगै सत्यजुग मांहैं धरमात्मा सेनजित नामा राजा हूवो । तिणरै देश मांहै वेद रो जांणणहारो एक सुमितर नाम ब्राह्मण हुवो । खेती कर आजीवका करै । तिण रै जय श्री नाम स्त्री हुई–पतिव्रता हुई । घणा चाकर

शर्म करता हुआ, ब्रह्मा की शरण में गया । तब ब्रह्माजी ने इन्द्र की ब्रह्महत्या चार स्थानों पर बाँट दी । पहले अग्नि की ज्वाला को, नदी को, पर्वत को, और नारि को—इस ठिकाणे बाँट दी । इसलिए रजस्वला स्त्री से संभाषण नहीं करना । रजस्वला को पहले दिन चंडालनी समझना दूसरे दिन ब्रह्मघातकी समझना । तीसरे दिन रंग-रेजन समझना–चौथे दिन शुद्ध होती है । अजान में अथवा जान में स्त्री ने यदि किसी वस्तु को स्पर्श कर दी हो तो ऋषि-पंचमी का व्रत करे, तभी पाप से छूट सके । इसलिए ब्राह्मणी, क्षत्रियाणी, बनियानी और शूद्राणी को यह व्रत करना चाहिए । श्री कृष्ण बोला, अब राजन, ऋषि पंचमी का इतिहास कहता हूँ । पहले सत्युग में धर्मात्मा सेनजित नाम का राजा हुआ । उसके देश में वेदों का ज्ञाता एक सुमित्र नामक ब्राह्मण हुआ । खेती पर अपनी आजीविका करता । उसके जयश्री नाम की स्त्री हुई–पतिव्रता हुई । उसके काफी नौकर–चाकर और कुटुम्बी थे ।

कुटंब जिण रै। तिका जयश्री रजस्वला एक दिन हुई थकी घर रो काम कियो, भांडा सगळै भींटिया। तिकै पाप सूं कुत्ती हुई। भरतार सुमितर पण लुगाई रै दोष सूं बळद हुवो। दूनै ही बुरी गति पाई। सुमितर रै पुतर सुमति नाम हुवो-देवतांरी पूजा रो करणहार हूवो, तिकै रा माता-पिता रितुरे दोष सूं पसुरी योन पाई ता पण जात समर हुवा। उवा कूतरी जूंठ षावती, फिरै आपरै पाप नूं याद करै। सुमितर ब्राह्मण बळद हुवो। अठा उपरांत सुमिति आपरै बापरी संवछरी आई देख अर आपरी लुगाई चंद्रवती नूं कहै छै-आज म्हारै बाप री संवछरी छै। ब्राह्मणां नूं जीमावण रै वासतै रसोई वणाई। तिकै चन्द्रवती भरतार री आज्ञा सुं रसोई वणाई पक्वान्न वणायो। तद खीर मांहै साप आय अर गरळम नांखियो। कुत्ती ऊभी दीठो। तद रसोई आभड़ दीन्ही। कुत्ती जांणियो विष सुं ब्राह्मण मरसी, इसो

उस जयश्री ने रजस्वला की हालत में एक दिन घर का काम किया—सभी बर्तन छूए। इस पाप के कारण वह कुत्तिया हुई। पति—सुमित्र भी औरत के दोष से बैल हुआ। दोनों ने ही खराब गति पाई। सुमित्र के सुमति नाम का पुत्र हुआ—वह देवताओं की पूजा करने वाला। उसके माता—पिता ने रितु—धर्म के दोष से पशुयोनि पाई—उन्हें भी जाति स्मरण थी। वह कुत्तिया झूठन खाती फिरती—अपने पापों को याद करती। सुमित्र ब्राह्मण बैल हुआ।

इसके उपरान्त सुमति अपने पिता की समत्सरी आई देखकर अपनी स्त्री—चन्द्रवती से कहता है—आज मेरे पिता की समत्सरी है। ब्राह्मणों को भोजन करवाने के लिए रसोई बनाओ। तब चन्द्रवती ने (अपने) पति की आज्ञा से रसोई बनाई—पक्कवान बनाये। तब एक साँप ने आकर खीर में जहर डाल दिया। कुत्ती ने खड़ी हुई (यह) देखा। तब रसोई (को) उसने छूली। कुत्ती ने समझा। जहर से ब्राह्मण

जांण अर रसोई आभड़ी। सुमितर री लुगाई कुत्ती नूं मूसळ सूं मारी। अर ब्राह्मणां नूं बीजो भोजन दीन्हो। श्राद्ध संवछरी रोकियो। ब्राह्मणां भोजन कियां पछै चंद्रमती जूंठ कुत्ती नूं बाहर न घाली। कुत्ती बारणै भूखी रही। ता पछै रातरी कुत्ती भूखी थकी भरतार बळद कन्हे जाई अर कहण लागी। आज हूँ भूखी रही छूं, मनूं भोजन न दीन्हो। मनूं भूख बहुत लागी छै। आगै पुतर मनूं ग्रास देतो आज किम दीन्हो नहीं। खीर मांहै साप गरळस नांखियो-मैं देखियो, ब्राह्मण मरसी। इयां जांण रसोई भीटी। बहु मनूं मारी, म्हारी कटि भागी छै, हुं किसुं करूं। इसा वचन कुत्तीरा सुण भरतार बळद, बोळियो हूँ किसुं करूं? थारै पाप सूं हूं बळद हुवो छुं। आज मनुं बेटै सारो दिन खेत महै वाह्यो मुख बांध। अर हुंई भूखां मरूं छुं। बेटै श्राद्ध उही कियो-मनूं तो आज बड़ो कष्ट हुवो। इसो माता-पिता

मरेंगे, ऐसा जानकर उसने स्पर्श करली। सुमित्र की औरत ने कुत्तिया को मूसल से मारा और ब्राह्मणों को दूसरा भोजन करवाया। (इस प्रकार) समत्सरी का श्राद्ध पूर्ण किया। ब्राह्मणों के भोजन करने के उपरान्त चन्द्रमती ने भूठन बाहर कुत्तिया को नहीं डाली। कुत्ती बाहर भूखी बैठी रही। उसके बाद रात को कुत्तिया भूखी रही हुई अपने पति—बैल के पास जाकर कहने लगी—आज मैं भूखी रही, मुझे भोजन नहीं दिया गया। मुझे बड़े जोरों की भूख लगी है। पहिले तो बेटा मुझे ग्रास दिया करता था, आज कुछ भी नहीं दिया। खीर में साँप ने जहर डाला था—मैंने देखा (इसके खाने से) ब्राह्मण मरेंगे। ऐसा विचार कर रसोई को छूली। बहू ने मुझे मारी—मेरी कमर तोड़ दी, मैं क्या करूँ? इस प्रकार कुत्तिया के वचन सुनकर पति—बैल बोला—मैं क्या कर सकता हूँ? तुम्हारे पाप से तो मैं भी बैल बना हूँ। आज पुत्र ने मुझे मुँह बाँध कर तमाम दिन भर चलाया। और मैं भी भूखों

रो संवाद रात रो पुनर सुमति सुणियौ । सुण अर तुरंत दोनूं ही नूं भोजन दीन्हो–कुत्ती अर बळद नूं । माता–पिता जाणिया अर मन मांहै दुख पायो । माता–पिता री इसी अवस्था जांण अर रिखीसुरां नूं पूछण रै वासतै वन मांहै गयो । तठै वन मांहे मोटां रिखिसुरां नूं बैठा देख अर नमसकार कर माता–पिता रै हित री बात पूछण लागो । सुमंत उवाच । रिखीस्वरां ! कहो, म्हारै मात–पिता री किसै कर्म सूं इसी अवसथा हुई, अर इण बळद कुत्तैरी योनि सूं किण तरह छूटसी सो बात कहो । रिखीस्वरां ऊचु । थारी माता आपरै घर मांहै अजांण थकी रजस्वला थकी भांडा भींटिया, तिण पाप सूं कुत्ती हुई छै । अर थारो पिता तैरै दोष सूं बळद हुवो । इणां री मुकति रै वासतै तूं रिख पांच्यांरो व्रत कर । आपरी लुगाई सहित रिखिस्वरां री पूजा कर सात वरस तांई । पछै ऊजांणो कर । शिवाक अडव ।

मरता हूँ । बेटे ने श्राद्ध वैसे ही (व्यर्थ में ही) किया–मुझे तो आज बड़ा ही कष्ट हुआ । इस प्रकार की अपने माता-पिता की बातचीत पुत्र–सुमति ने सुनी । सुनकर दोनों को ही भोजन दिया—कुत्ती और बैल को । (उन्हें) अपने माता–पिता जाना तो मन में बड़ा दुःख हुआ । माता-पिता की ऐसी हालत जान (कर) ऋषियों को पूछने के लिए वन में गया । वहाँ वन में मोटे ऋषियों को बैठा देख कर (उन्हें) नमस्कार कर, अपने माता–पिता के हित की बात पूछने लगा । सुमति बोला– ऋषि लोगों कहिए, हमारे माता–पिता की कौन से कर्म से यह दशा हुई है–और इस बैल और कुते की योनि से किस प्रकार छूट सकते हैं– वह बात कहें । ऋषियों ने कहा–तुम्हारी माता ने अपने घर में जानते हुए भी रजस्वला के समय बर्तनों को स्पर्श किए, उसी पाप के कारण कुत्तिया हुई है । और तुम्हारा पिता उसी के दोष के कारण बैल हुआ है । इनकी मुक्ति के लिए तू ऋषि–पंचमी का व्रत कर । अपनी स्त्री सहित

एक टंक भक्ष करणो । हमैं विधि कहै छै । भाद्रवा रै महीनै में शुकळ पक्ष री पांच्यां रै दिन सरोवर विषै जाई दांतण करे, ताहरां ओ मंत्र पढ़े ।

आयुर्बलं यशोवर्चः प्रजापशुवसूनिच ।
ब्रह्म प्रज्ञांचमेधां चत्वनोदेहि वनस्पते ॥

इण मंतर सूं दांतण कर अर तिल अर आंवळा केसां रै लगाइ अर सनान करै । नवा सुध वसतर पहिर अर अरूंधती सहित सपत रिखीश्वरां री पूजा करै । कशयप (१), अत्रि (२), भारद्वाज (३), विश्वामित्र (४), गौतम (५), जमदग्न (६), वशिष्ठ (७) । अरूंधती ऐ नाम ले पूजा करै । इणी तरह रिखि पंचमी रो व्रत कियां थकां रजस्वला रै सपरस रो दोष मिटै ।श्रीकृष्ण उवाच । इसा रिखीश्वरां रा वचनु सुमति सुण घरै आय, आपरी

ऋषि लोगों की सात वर्ष तक पूजा करो । फिर 'उजावना' कर बिना बोया हुआ धान, एक समय ही भोजन करना । अब (उसकी) विधि कहते हैं । भाद्रवा के महीने में शुक्ल–पक्ष की पंचमी के दिन तालाब जाकर दतुन करना, तब यह मंत्र पढ़ना ।

आयुर्बलं यशोवर्चः प्रजा पशुवसूनिच ।
ब्रह्म प्रज्ञांचमेधां चत्वनोदेहि वनस्पते ॥

इस मंत्र से दातुन करके तिल और आँवले बालों में लगाकर स्नान करें । नये वस्त्र पहिनकर सप्त ऋषियों की पूजा अरूंधती के सहित करें । (१) कशयप (२) अत्रि ३) भारद्वाज (४) विश्वामित्र (५) गौतम (६) जमदग्नि (७) वशिष्ठ अरूंधती ये नाम लेकर पूजा करे । इस प्रकार ऋषि पंचमी का व्रत करने से रजस्वला के स्पर्श का दोष मिटता है । श्री कृष्ण जो ने कहा–ऐसे ऋषियों के वचन सुमति सुनकर,

इस्त्री सहित रिखि पांच्या रौ व्रत कर अर माता-पिता नं फळ दीन्हो व्रतरै प्रभाव सूं माता कुत्तीरी योनि सूं छूट अर विमांन पर बैठ दिव्य वसतर पहिर स्वर्ग गई। पिता पण बळद रो देह छोड़ अर स्वर्ग गयो, पांच्या रै व्रत रै प्रभाव सूं। काया, वाचा, मनसारो कियो पाप इण व्रत सूं दूर हुवै। सगळै दांन कियां जितरा फळ हुवै इसो फळ रिखि पांच्यां रै व्रत सूं हुवै। जिका लुगाई इण व्रत नूं करै, तिका सुख सुहाग पावै। रूप पावै। पुतर पोतरा पावै। इह लोक में सुख पावै। परलोक मांहे भली गति पावै। पढ़ै सुणै तिकै रो पाप दूर हूवै। इति श्री रिखिपांच्यांरी कथा संपूरणं। शुभंभवतु। कल्याण मस्तो।

घर आकर अपनी पत्नी सहित ऋषि पंचमी का व्रत करके माता-पिता को (व्रत का) फल दिया। व्रत के प्रभाव से माता कुत्ती की योनि से छुटकारा पाकर, विमान में बैठकर सुन्दर वस्त्र पहिनकर स्वर्ग को गई। पिता भी बैल का शरीर छोड़कर स्वर्ग को गया—पञ्चमी के व्रत के प्रभाव से। इस व्रत से मन, वचन और कर्म द्वारा किया गया पाप दूर होता है। सब प्रकार का दान करने से जो फल होता हो, ऐसा फल ऋषि पञ्चमी के व्रत से होता है। जो औरत इस व्रत को करती है, उसे सुख और सुहाग प्राप्त होगा। उसे सौन्दर्य की प्राप्ति होगी। पुत्र और पोतों को पाने वाली होगी। दूसरे लोक में सद्गति प्राप्त करेगी।

(इस कथा को) पढ़ता है, सुनता है—उसके पाप दूर हों।

६—अथ अनंत देवतारी कथा लिख्यते

भादवा सुदि चवदस रै दिन वरत एकासणो कीजै । चूरमो श्री ठाकुरां नै भोग लगाई जै । चवदै तार रो डोरो, तिण रै चवदै गांठ देनै हाथ रै बांधीजै । धूप-दीप-नैवेद कीजै । पछै कथा सांभळी जई । तिण रीति कथा श्रीकृष्ण जी राजा युधिष्ठिर जी नुं कहै छै । सोमित्रा री बेटी, जाति ब्राह्मण । एक जणी बहू रामसरण हुई । बीजी ब्राह्मणी परणी । सो बेटी मोटी हुई तरै रिखीसर कूबड़ नै परणाई । तरै माटो दीयो । तद बाप तो पकवान कराया नै मां माटा मांहे ढळ नै लैवड़ा घातनै माटो बीडियो । नै कोथला मांहि सुं नवा वैस काढनै पुराणा वैस घातिया । तरै बेटा बेटी देखै छै, पिण बोलै नहीं । परणाय नै चलाय दीनी । तरै बिच में एक तळाव आयो । तरै सखरी छांअडी देख नै उतरीया ।

कथा अनंत देवतारी

भाद्रपद की शुक्ल पक्ष की चौदस के दिन व्रत-एकासना करना, चूरमे का भोग भगवान के लगाना । चौदह तारों का डोरा उसमें चौदह गाँठें लगाकर हाथ में बाँधना । धूप-दीप, नैवेद्य करना,-फिर कथा सुननी चाहिए । इस प्रकार कथा श्री कृष्णजी राजा युधिष्ठिर को कहते हैं । सुमित्रा की बेटी जाति की ब्राह्मण, उसकी मृत्यु (पुत्र) पैदा करते समय हुई । दूसरी ब्राह्मणी से शादी की । सो जब बेटी बड़ी हुई, तब एक कूबड़े ऋषि से उसका विवाह कर दिया । तब माटा साथ में दिया । तब पिता ने तो पकवान बनवा कर और मां ने मिट्टी के ढेले आदि डालकर माटे को बन्द कर दिया । और गोथली में से नये वस्त्र (कपड़े आदि) निकालकर उसमें पुराने वस्त्र डाल दिए । इस प्रकार बेटे-बेटी देखते हैं;लेकिन बोलते नहीं । विवाह करने के बाद उसे मुकलावा दे दिया ।

तरै बहू जांणीयो सीरावणी तो माटा मांहि ढळ नै लेवड़ा घातीया छै। करबैरी जागा खीच रांध नैं घातीयो छै। सो हूं कासू' देईस। तो हमें हूँ मूंहडो लेई नैं जाऊं तो सखरी। तरै गाडा थी उतर नै चाली जावै छै। तरै तळाब एक आयो। सो तळाब री तीरै नागपुत्री देवांगना बैठी छै, पूजा करै छै। तरै उणै युं कह्यो—मैं तो अनंत देवतारीं पूजा करां छां। तरै उवा कहै, अनंत देवता री पूजा कीयां-कासू' हूवै। तरै कहै, इणरी पूजा कीजै, अन-धन हुवै, लिखमी रो घरै वासौ हुवै। जिकाई मन मांहै वसत चिंतवै सो अनंजी देवै। तरै कहै, हूंई वरत करू'। तरै बहू ही उण कनै बैस नैं अनंतदेव जी री पूजा कीनी, कथा सांभळी। डोरारी पूजा करनै डोरो हाथै बांधीयो, नै मन मांहैं चिंतवीयो, सावकीया माहरै साथै माटो घालीयो छै-तिण में ढळ-लेवड़ा घातीया छै, सो मिठाई होय जो। सो पाछी आय नै गाडी मांहै बैठी छै।

तब बीच में एक तालाब आया। वहाँ घनी छाया देखकर उतारा लिया। तब बहू ने जाना—कलेवे के लिए तो पत्थर, ढेले डाले हैं। करबे के स्थान पर खीचड़ा डाला है। सो मैं (इन्हें) अब क्या दूंगी? इसलिए मुंह लेकर चली जाऊँ तो बहुत ही अच्छा।

गाड़े से उतर कर चली जाती है। तब एक तालाब आया। इस तालाब के किनारे देवांगना-नागपुत्री बैठी है, पूजा करती है। तब उसने ऐसा कहा—मैं तो अनंत देवता की पूजा करती हूँ। तब उसने उत्तर दिया—अनंत देवता की पूजा कैसे और किससे हो? तब कहती है (तब कहा) इसकी पूजा करना (इससे) अन-धन हो, घर में लक्ष्मी का वास हो। जो भी मन-इच्छित वस्तु के लिए सोचे, वही अनंत जी दे। तब कहा—मैं भी व्रत करूँ। तब बहू ने भी उसके पास बैठकर अनंतदेव जी की पूजा की—कथा सुनी। डोरे की पूजा करके डोरा हाथ में बाँधा और मन में विचार किया—सौतेली मां ने मेरे साथ माटा

पछै घरै आया, तरै सासू माटो खोलनै जोयो, ज्युं मांहि था पकवान नीसर्या। अनंतजी तूठा। सो एकण दिन रिखीस्वर बहू रै हाथै डोरो दीठौ। तरै मन में जाणियौ, बैर मोनुं कांमण कीया छै, नै डोरो हाथै बांध्यो छै। तरै हाथ घालिनै डोरो तौड नै चूल्हा मांहै नांखीयो। तरै बहू दौड़ नै डोरो उरो लीयो। आधो एक बळिया, आधो दूध सूं पखाळियो। तरै ठाकुर रीसांणा नै रिखीस्वर रीसांणा। सो रिखीसर नुं कोढ़ हुवो, डील अजक घणौ। तरै बैर नुं कह्यौ, ओ कासूं सूळ हूयो। तरै बहू कहै–ठाकुर अनंतजी रीसांणा। तरै घर री लिखमी सरब थी सो गई। तरै रिख अनंतजी ऊपर इकतार करनै निकळियो। तरै मनमें चितव्यो, ज्युं चालतां-चालतां जठै अनंतजी मिलस्यै, तठै रहीस। अनंतजी दरसण देसी तरै आईस। सो चालियो जायछै। सो कहै छै, हूं अनंतजी कनै जाऊंछूं। तरै बहू कहै,

---

डाला है (माटा रखा है) उसमें ढेले-पत्थर आदि डाले हैं—वे मिठाई बन जांय। सो वापिस आकर गाड़ी में बैठी है। पीछे घर आये, तब सास ने माटा खोलकर देखा—तो जैसे पकवान अन्दर थे, (वे) बाहिर निकले। अनंत जी प्रसन्न हुए।

सो एक दिन ऋषिवर ने अपनी बहू के हाथ में डोरा देखा। तब मन में सोचा—औरत ने मुझ पर 'कामण' (जादू टोना आदि) किया है। अतः डोरा हाथ में बाँधा है। तब हाथ डालकर, डोरे को तोड़कर (उसे) चूल्हे में फेंक दिया। तब बहू ने भागकर डोरा अपने पास ले लिया। आधा तो जल गया, आधे को दूध से धोया। तब ठाकुर भी क्रोधित हुए और ऋषि भी। ऋषि के तब कोढ़ हुई शरीर में तकलीफ बहुत हुई। तब पत्नी से कहा—यह पीड़ा किस प्रकार हुई। इस पर औरत ने कहा—अनंत भगवान कुपित हुए हैं।

इसके उपरान्त घर की जो सब लक्ष्मी थी, सो भी गई। यह ऋषि

अनंतजी कठै मिलसी–विचै नार, चोर मारसी। तरै ब्राह्मण कहै, जठै मूओ तठै छूटो तोनुं मिलतो। तरै उठासुं चालियो। विचै एक आंबो मिलियो। सो आंबो पाको छै पिण आंबो कोई जीव–जिनावर ही खाय नहीं। आगै चालियो जावै छै। तरै तळावडी दोय भरी छै—उणरो पाणी उणमें जाय छै। तरै तळावडी उंण बांमण नुं पूछ्यो, तूं कठै जाय छै। तरै रिखीसर कहै, हूं अनंतजी कनै जाऊं छूं। तरै कहै माहरो संदेसो एक लेतो जाज्यु मीठो पाणी छै, पिण जीव–जिनावर पीवै नहीं। सो मोमें कासुं अवगण छै। तरै रिख कह्यो–भली बात। पछै वळी आघो चालियो जायछै, तरै बळध एक मिलियो। आगे एक घोडो सोनारी साग तथा ऊभो छै, पिण ऊपर कोई चढै नहीं, सो मोमें कासुं अवगण छै। आगे जावतां बोरडी एक दीठी, सो बोर पाका लागे छै पिण कोई जिनावर ही खाय नहीं। सो मोमांहे

अनंत जी पर विश्वास करके निकला। मन में ऐसा सोचा—चलते–चलते जहाँ भी अनंत जी मिलेंगे, वहीं रहूँगा। अनंत जी दर्शन देंगे—तभी आऊँगा। इसलिए चला जारहा है। ऐसे कहता है—मैं अनंत के पास जाता हूँ। तब औरत ने कहा—अनंत जी कहाँ मिलेंगे ? बीच में भेड़िये, चोर आदि मार देंगे। तब ब्राह्मण ने कहा—जहाँ मरा, वहीं तुम से मिलने से छूटा। तब वहाँ से चला। बीच में एक आम का पेड़ मिला। वह आम पका हुआ है, लेकिन उसे कोई जीव–जानवर खाते नहीं हैं। आगे चला जारहा है। तब तालाब ने ब्राह्मण से पूछा, तू कहाँ जाता है ? इस पर ब्राह्मण कहता है—मैं अनंत भगवान के पास जाता हूँ। तब उसने कहा—मेरा एक संदेश ले जावो—मीठा पानी होते हुए भी कोई इसे पी नहीं रहा है। मुझ में ऐसा कौनसा अवगुण है। इस पर ऋषि ने कहा—अच्छी बात है। फिर दूर चला जाता है, तब एक बैल मिला। आगे एक घोड़ा सोने की जीन आदि

कासूं अवगुण छै। आगै जावतां ठाकुरां बांमण रो रूप करनै हाथ मैं डांग झालनै डोकरौ हूय नै दरसण दीयो, तूं कठै जाय छै। तरै कह्यौ-अनंतजी कनै जाऊं छूं। तरै कहै, अनंत तोनुं कठै मिलसी। तरै कह्यौ, न मिलै तो आ देही त्याग करीस, इसडो निहचो कीयो। तरै ठाकुरां चतुरभुज रूप करिनै दरसण दीयो। ठाकुर कहै, तो मोनूं चूलै में नांषीयो तिणरा माहरे डीलरै छाळा हुया छै। सो हमें रिखीस्वर नुं श्री ठाकुरां तूठा-डील रो कोढ़ गयो। घरै लिखमी अनै धन-माल हुआ। तरै बांमण श्री ठाकुरां नै संदेसो कहायो, आंबा पाका छै सो कोई खावै नहीं। सो किसै वासते ? तरै श्री ठाकुर कहै छै, आंबो आगळै भव बांभण थो। विद्या घणी भणियो थो पिण विद्या किणही नै सीखाई नहीं। तिण रौ फळ खाईजै, सोए फळ खावसी। बोरडी री हकीकत कही। सो ठाकुर कहै, बोरडी जातरी-गूजरी

की हुई खड़ा है, लेकिन उस पर कोई सवार नहीं होता है। (उसने पूछा) मुझ में ऐसा कौनसा अवगुण है। आगे जाते एक बोरटी देखी—उसमें पके बेर लगे हुए हैं; लेकिन कोई जानवर खाता नहीं है। (उसने पूछा) मुझ में ऐसा कौनसा अवगुण है। आगे जाते भगवान् ने ब्राह्मण का रूप बनाकर, हाथ में लाठी लिए बूढ़े आदमी का रूप बनाकर दर्शन दिया। तू कहां जाता है ? तब (उसने) कहा—अनंत जी के पास जाता हूँ। उत्तर में कहा—अनंत जी तुम्हें कहाँ मिलेंगे ? तब कहा—नहीं मिलेंगे तो अपनी देह त्याग दूँगा, ऐसा निश्चय किया है।

इस पर भगवान् ने चतुर्भुज रूप धारण करके दर्शन दिये। भगवान् ने कहा—तुमने मुझे चूल्हे में फेंका—इसलिए मेरे शरीर पर छाले हुए हैं।

अब ऋषि को श्री भगवान् तूठे (उन पर प्रसन्न हुए)—(उनके) शरीर की कोढ़ चली गई। घर में लक्ष्मी और धन-माल (बहुत) हुआ।

थी। छाछ किणनु देती नहीं। तरै बोरडी री अरज करी। ठाकुर कहै—तूं बोरडी रा बोर खाए। पछै सकोई खावसी। नाडियां री अरज करी। तद ठाकुर कहै, अे देरांणी जेठांणी थीं। उणरी हांती उवा खावती, बीजा ही किणनु देती नहीं। पछै घोड़े री अरज कीनी। तरै कहै, घोड़े ऊपर कोई चढै नहीं। तद ठाकुर कहै—ओ घोड़ो रिण संग्राम मांहै धणी नांखनै आयो थो। सो ठाकुर बिरांमण नु तूठा ज्युं सकोईनु तूं समान हुयज्यो। बांमण घरै आयो। बधाई हुई चैन पायो।

इति श्री अनंतदेवता री कथा संपूरण। ——

इस ब्राह्मण ने भगवान् को संदेश कहा—आम पके हुए हैं, लेकिन उसे कोई खाता नहीं? इसका क्या कारण है? तब श्री ठाकुर ने कहते हैं—आम पूर्व जन्म में ब्राह्मण था। विद्या काफी पढ़ी थी लेकिन (इसने) विद्या किसी को सिखाई नहीं। (तुम) इसका फल खाना, तो सभी (लोग) इसका फल खायेंगे। बोरटी (बेर का पेड़) की बात कही। तब श्री भगवान् कहने लगे—बोरटी जाति की गूजरी थी। (यह) छाछ किसी को डाला नहीं करती। इस पर बोरटी की (ब्राह्मण ने) अर्ज की। भगवान् ने कहा—तू बोरटी के बेर खाना। इसके बाद सभी इसे खायेंगे। पोखर (छोटी तलाई) की अर्ज की। तब भगवान् कहते हैं–ये देवरानी और जेठानी थीं। उसकी 'हांती' (त्योहार आदि पर दिये जाने वाली मिठाई आदि) यह खा जाती, किसी अन्य को नहीं देती थी। इसके बाद घोड़े की अर्ज की। आगे कहा—घोड़े पर (कोई) चढ़ता नहीं है। तब भगवान् ने कहा—यह घोड़ा युद्धस्थल में अपने स्वामी को फेंककर (भाग) आया था।

इस प्रकार जैसे भगवान् ठाकुर पर प्रसन्न हुए—हे भगवन् वैसे आप सब पर प्रसन्न होवें। ब्राह्मण घर आया। बधाई मनाई गई—आराम से वह रहने लगा। ——

७—अथ दीपमालिका री कथा लिख्यते

एक दिन राजा युधिष्ठिरजी दरबार करनै बैठा छै तठै व्यासजी श्री कृष्ण द्वीपायन पधारचा। तरै राजा सांहमो जाय परकमा दे डंडोत करनै पग पखाळ चरणोदक माथैमेल सिंघासण दियो। व्यासजी सूं राजा चरचा करै छै। पछै राजा हाथ जोड़ नै व्यासजी सूं अरज करै छै। महाराज काती वदि अमावस रै दिन दीपमाळिका री पूजा कीजै छै। ऊजळा कपड़ा पहिरै छै। ग्रहणा पहिरै छै। घर ऊजळा करै छै–नै दीपक घणा करै छै। सो इण दिन री महिमा राज मांहनू कहो। तरै व्यासजी कहै छै, राजा सांभळ! काति वदि ११ श्रीमहालिखमीजी जागै छै नै काती वदि अमावस श्री महालिखमी जी रो दिन छै। सो लोक घर नीपै छै धवळै छै, ऊजळाई करै छै। जांणै छै, काति वदि इग्यारस

कथा दीपमालिका की

एक दिन राजा युधिष्ठिर जी दरबार लगाकर बैठे हैं—इतने में व्यास जी श्री कृष्ण द्वीपायन आये। तब राजा सामने जा, परिक्रमा दे, दण्डवत् करके, पैर धोकर, चरणामृत सिर पर धरकर सिंहासन पर बिठाया। व्यास जी से राजा चर्चा करते हैं। फिर हाथ जोड़कर व्यास जी से अर्ज करते हैं। महाराज, कार्तिक कृष्णा अमावस के दिन दीपमालिका का पूजन करते हैं। स्वच्छ कपड़े पहिनते हैं। गहने पहिनते हैं। घर स्वच्छ करते हैं और दीपक बहुत जलाते हैं। अतः इस दिन की महिमा, राजन्! हम से कहें। तब व्यास जी कहते हैं, राजन् सुनो! कार्तिक कृष्णा एकादशी को श्री महालक्ष्मी जी जागती हैं और कार्तिक कृष्णा अमावस श्री महालक्ष्मी जी का दिन है। अतः लोग घरों को लीपते हैं, धोते हैं, स्वच्छ करते हैं। जानते हैं—कार्तिक कृष्णा एकादशी

श्री लिखमी जागिया छै सो माहरै घरै पधारसी। तिण सूं लोक घर सिणगारै छै। राजा काती वदि अमावस रो दिन आवै तिण दिन परभात रा उठनै दांतण सिनांन करीजै। रोक रूपईआंरी पूजा कीजै। केसर कुंकम सौं पूजा करीजै, अच्छत चढ़ाईजै, फूल चढाई जै। अगर धूप खेवीजै, नेवेद चाढीजै। मुखवास मुदरा पिण चढाईजै। पान बीडा चढाईजै। परसाद मिठाई पतासा बांटीजै। घणो उछाह कीजै, बांमणा नूं सकत माफक दिख्यणा दीजै। पछै नाना प्रकार रा भोजन करायनै एकासणों करीजै। पूजा कियां बिना जीमीजै नहीं, नै रातै जागरण कीजै। तरै युधिष्ठिर बळै कहै छै—महाराज इण दिन री पूजा किणहीनूं फळ प्राप्ति हूई छै। इण पूजा सूं फळ परापत जिकोही हुवो होय तिको कहो, नै इण दिन दीपक घणा कीजै छै तिण री विध राज मोनूं कृपा करिनैं कहो। तरै व्यासजी कहै छै—राजा सांभळ! एक

को श्री लक्ष्मी जी जागे हैं—वे हमारे घर पधारेंगी। राजन्! कार्तिक कृष्णा अमावस का दिन आए, उस दिन प्रभात को उठकर दातुन स्नान करना। रोकड़ी रुपयों की पूजा करना। केशर, कुमकुम से पूजा करके अक्षत चढ़ाना, फूल चढ़ाना। अगर, धूप, खेकर–प्रसाद चढ़ाना। मुख-वास और मुद्रार्पण करना। पान, बीड़ा चढ़ाना। प्रसाद, मिठाई बतासे बाँटना। बड़ा उत्सव करना, ब्राह्मण को यथाशक्ति दक्षिणा देना। फिर नाना प्रकार का भोजन करवाकर उपवास करना। पूजा करने से पहिले नहीं जीमा जाय और रात में जागरण करना। तब युधिष्ठिर फिर कहता है—महाराज, इस दिन की पूजा का किसी को फल मिला है, इस पूजा से फल की जिसे प्राप्ति हुई हो वह कहें और इस दिन दीपक बहुत जलाये जाते हैं, उसकी विधि राजन्! हमें कृपा करके कहें। तब व्यास जी कहते हैं—राजन् सुनो। एक इतिहास कहता हूं। सतयुग में एक आनन्द नामक ब्राह्मण हुआ—उसकी स्त्री का नाम सुलक्षणी था।

इतिहास छै सो कहुं छुं। सतयुग रै विसै एक आणंद नांमैं ब्राह्मण हुऔ तिणरै अस्त्री रो नांम सुलखणी। सो पति भरतार महा चतुर। सो एक दिन आपरा भरतार नै कह्यो—पांडे नारायण थे बारे कण वरत नूं जावो तरै पाछा घर मांहे खाली आवो मती। हर क्युं ही लेई नै आवज्यो, पिण खाली न आईजै। तठा पछै बांभण नूं कांई मिलियो नहीं। सो पाछो घरै आवतो थो, पिण मन में जांणै छै—क्युं ही मिलै तो लेई जावूं। अस्त्री कह्यो कै खाली आईजै नहीं। तरै देव संयोग देखै तो गऊ व्याई छै, तिण री जर पड़ी छै। तरै बांभण विचारियो और तो आज कांई नहीं—आहीज लेजाऊं। तरै जर डोका मांहे घाल नै आयो। आयनैं ब्राह्मणी नूं कह्यो—आज तो आ जर मिली छै नै बीजो तो कांई मिलियो नहीं। तरै ब्राह्मणी कह्यो, आहीज आछी—नोहरा मांहे नांखनै आवो। तरै जर नोहरा मांहे नांखनै आयो।

वह बड़ी पतिव्रता और महाचतुरा थी। उसने एक दिन अपने पति से कहा—हे ब्राह्मण नारायण, आप बाहर अन्न माँगने जावें तो वापिस घर में खाली न आवें। कुछ भी लेकर आना लेकिन खाली मत आना। तब उसके बाद ब्राह्मण को कुछ मिला नहीं। सो वापिस घर आरहा था—लेकिन मन में जानता है—कुछ भी मिले तो लेता आऊँ। स्त्री ने कहा है कि खाली आना नहीं। तब दैव संयोग से देखता है—तो एक गाय ब्याही है—उसकी जर पड़ी है। तब ब्राह्मण ने विचारा—और तो आज कुछ नहीं, यह ही ले चलूँ। तब जर को एक लकड़ी के टुकड़े पर डालकर लाया। आकर ब्राह्मणी से कहा—आज तो यह जर मिली है और तो कुछ मिला नहीं। तब ब्राह्मणी ने कहा—यह ही ठीक है; जाकर नोहरे में डाल दो। तब जर को नोहरे में डालकर आया। सो राजा की रानी स्नान करती थी, गहने धोकर रखे थे, उनमें हार एक सवा लाख का था। उसे चील लेकर उड़ी। सो उस चील की

सो राजा री रांणी सिनांन करती थी नै गेहणों धोवाय नै मेलियो थो, तिण मांहै हार एक सवालाख रो थो। सो सांवळी लेई नै उड़ गई। सो सांवळी उडती उडती बांभण रा नोहरां मांहै जर पड़ी थी तिण ऊपर निजर पड़ी। तरै चील नीची ऊतरी नै जर ऊपरै आई। सो हार तो नोहरा मांहै नांख गई नै जर लेई गई। सो बांभण सहज मांहै नोहरै गयो थो, सो देखे तो हार पड़ियो छै। तद ब्राह्मणी कह्यो लेआवो। तरै ब्राह्मण घर मांहै लेई नै आयो, देखै हार तो राजा रा घर रो छै। तरै बांभणी कह्यो हार—ऊंचो घर राख जो।…………तरा मांहै ग्रेहणो देखे तो हार नहीं। तरै रांणी राजा नूं कहायो—अठा थी हार सांवळो लेइ नै उड़ गई। तरै राजा कोटवाळ नूं तेड़ियो, सहर मांहि खबर करो। तरै कोटवाळ सहर मांहै ढंढोरो देतो फिरै छै। सो बांभण रा घर आगै आय नीसरीयो। तरै बांभण कह्यो—हार मैं लाधो छै। तरै

उड़ते-उड़ते ब्राह्मण के नोहरे में पड़ी-जर पर नजर पड़ी। तब चील नीचे उतरी और जर पर आ ठहरी। सो हार को नोहरे में पटक गई और जर को लेगई। ब्राह्मण वैसे ही नोहरे में गया था, देखा तो हार पड़ा है। तब ब्राह्मण घर में ले आया, देखा तो हार तो राजा के घर का है। तब ब्राह्मणी ने कहा—हार ऊपर धर कर रखदो…………
……… इतने में गहनों को देखा, तो हार नहीं। तब रानी ने राजा से कहलवाया—यहाँ से हार एक चील लेकर उड़ी। तब राजा ने कोटवाल को बुलाया—शहर में खबर करो। तब कोटवाल शहर में ढिंढ़ोरा देता फिरता है। वह ब्राह्मण के घर यहाँ आकर निकला। तब हार लेकर ब्राह्मण राजा के दरबार में जाने लगा। इतने में ब्राह्मणी ने कहा—राजा जी आपको हार की बधाई दें, तो कहना कि ब्राह्मणी से पूछकर लूंगा। तब हार लेकर ब्राह्मण राजा के दरबार में गया। राजा ने देखकर, ब्राह्मण से कहा—तुम्हारे ईमान को धन्यवाद। ब्राह्मण तू

हार लेईनै बांभण राजा री हजूर जावण लागो। जितरै बांभणी बोली—राजाजी थानूं हार री बधाई देवै तो कहेजो कै बधाई तो बांभणी नै पूछनै लेस्युं। तरै हार लेनै बांभण राजा री हजूर गयो। सो राजा देखनै बांभण नूं कह्यो—स्याबास रे थारा आकीन नै। बांभण तू मांग—हूं तो सूं रींझियो। तरै बांभण कह्यो—महाराज, मारी बांभणी नै पूछनै बधाई लेईस। तरै राजा कह्यो, जायनै पूछि आव। तरै बांभण आपरी बांभणी नूं पूछनै राजारी हजूर गयो। महाराजाजी, राज तूठाछो वचन पांऊ। तद राजा कह्यो—मांग। तरै बांभण कहै, महाराज काती वदि अमावस रै दिन दीपक होय छइ। सो कातो राजा रै भंडार हुवै, का माहरै घरै होय और बीजा रै घरै हूण पावै नहीं। तरै राजा कह्यो—रे तैं कांसू मांगियो। गांव, धरती, हाथी, घोड़ा मांगिया हूंत। तरै बांभण कहै—लुगाई ओहीज कह्यो छै। तरै राजा कह्यो-

---

मांग—मैं तुमसे प्रसन्न हुआ। तब ब्राह्मण बोला—महाराज, मैं बधाई मेरी ब्राह्मणी को पूछकर लूँगा। तब राजा ने कहा—जावो पूछकर आवो। तब ब्राह्मण अपनी ब्राह्मणी से पूछकर (वापिस) राजा के दरबार में गया। राजन्, यदि आप प्रसन्न हुए हैं तो मैं वचन पाऊँ। तब राजा ने कहा—'माँग'। तब ब्राह्मण कहता है, कार्तिक कृष्णा अमावस के दिन दीपक जलते हैं। सो (दीपक) या तो राजा के महलों में हों या मेरे घर पर—दूसरों के घर न हो सकें। तब राजा ने कहा—अरे, यह तुमने क्या माँगा! गाँव, धरती, हाथी, घोड़े माँगे होते। तब ब्राह्मण कहता है—औरत ने यही कहा है। राजा ने कहा—अच्छी बात है, मेरा वचन है।

अमावस का दिन आया, तो ब्राह्मण ने जाकर राजा के दरबार में अर्ज की—महाराज, आज कार्तिक कृष्णा अमावस है, मुझे अपना वचन मिले। तब राजा ने कोटवाल को बुलाकर कहा—गाँव में सबसे कहदो,

भली बात–माहरो वचन छै। अमावस रो दिन आयो, सो बांभण राजारी हजूर जायनै अरज कीवी—महाराज, आज काती वदि अमावस छै, वचन पांऊ। तरै राजा कोटवाळ नूं बुलाय नै कह्यो—गांम मांहि सगळेई कहाय, कोई आज दीपक करण पावै नहीं। तरै कोटवाळ सगळेई सहर मांहै गयो, ढंढोरो फेरियो। तरै साहूकार सहरा मिलनै राजा कनै आयनै अरज कीनी—महाराज आज दीपमाळिका रो दिन छै, दीपक तो सारा ही किया चाहै। तरै राजा कह्यो—म्हैं बांभण नूं वचन दियो छै, थे सको दीवा काले करीजो। तठा पछै दीपक दोय दिन हुवण लागा। तरै साहूकार आप आप रै घरे आया। सो आथणरा दीपक राजरै भंडार कनां बांभण रै घरै हुया छै। सो आधी रात रै समईयै श्री लिखमी जी सहर मांहै सगळै फिरिया सु दीवो कठैई निजर आवै नहीं। एकण बांभण रै घरे दीवो दीसै छै। तरै

आज कोई दीपक न कर सके (न जला सकें)। तब कोटवाल तमाम शहर में गया, ढिंढोरा पीटा। तब शहर के साहूकारों ने मिलकर राजा के पास आकर अर्ज की—राजन् ! आज दीपावली का दिन है, दीप तो सभी करना (जलाना) चाहते हैं। तब राजा ने कहा—मैंने ब्राह्मण को वचन दिया है, आप सब लोग दीपक कल करना।

उस दिन से दीपक फिर दोनों दिन होने लगे। तब साहूकार अपने-अपने घर आए। सो शाम को दीपक राज मन्दिर में और ब्राह्मणी के घर में जले हैं। अतः अर्द्ध-रात्रि के समय श्री लक्ष्मी जी तमाम शहर में फिरीं—दीपक कहीं भी दिखाई दे नहीं। एक ब्राह्मण के घर दीपक दिखाई देता है। तब ब्राह्मण के घर लक्ष्मी जी आईं—आकर कहा, कुण्डा खोलना। तब ब्राह्मण ने कहा, कौन है ? तब लक्ष्मी जी बोली—मैं लक्ष्मी हूँ। तब ब्राह्मण बोला, 'महाराज, मेरे यहाँ सात पीढ़ी तक

बांभण र घरे श्री लिखमी जी आया, आयनै कई—कुंहटो खोलियो ! तरै बांभण जांणियो, कुंण छै । तरै महालिखमी जी बोलिया—हूं महालिखमी छूं । तरै बांभण कह्यो—महाराज, मांहरै सात पीढी रहो तो कुंहटो खोलूं । तरै आप कह्यो—पीढी एक तथा दोय रहसां । तरै बांभण कमाड़ खोलिया नहीं । श्रीमहालिखमी जी पाछा गया । बळै सहर में फिरनैं पाछा इणरै घरै पधारिया—कह्यो किमाड़ खोल । तरै बांमण कह्यो—सातां पीढ़ीयांरा वाचा देवो तो खोलूं । तरै आप लिखमीजी कह्यो—पीढी छ तो म्है रहस्यां । तरै बांभण बोल्यो……… हमैं पांडे नारायण, थे पिण हठ मती करो । श्री लिखमजी, सात पीढी तो किणही रै रहै नहीं नै छः पीढी तो आप कृपा करनै महरवान हुयनै रहो छो । तरै किंवाड़ खोलिया । सो श्री महालिखमी जी पधारिया । तरै श्री लिखमीजी पधारत-संवाही बांभण आणंद रै

रहें तो कुण्डा खोलूँ । तब उन्होंने कहा, पीढ़ी एक या दो रहूँगी । तो ब्राह्मण ने किवाड़ खोले नहीं । श्री लक्ष्मी जी वापिस गई । फिर शहर में घूमकर वापिस इसके घर आई—कहा किवाड़ खोल ! तब ब्राह्मण ने कहा, सात पीढ़ी तक रहने का वचन दें तो खोलूँ । तब लक्ष्मी जी ने कहा—छः पीढ़ी तो मैं रहूँगी । तब ब्राह्मण बोला (अपने आपको कहा)—अब नारायण पाण्डे ! तू भी हठ मत कर । श्री लक्ष्मी जी सात पीढ़ी तक तो किसी के यहाँ रहती नहीं हैं और छः पीढ़ी तक स्वयं महरबान होकर रहने को कहती हैं । तब किवाड़ खोले । अतः श्री लक्ष्मी जी पधारीं । तब श्री लक्ष्मी जी के पधारते ही—ब्राह्मण आनन्द के घर में 'नवनिधि' हुई—चारों ओर लक्ष्मी ही लक्ष्मी (दौलत ही दौलत) होगई । सो श्री व्यास जी राजा युधिष्ठिर से कहते हैं— राजन्, तुमने कार्तिक कृष्णा अमावस के दिन की तथा दीपक की महिमा पूछी थी—वही कहा ।

घरै नवेनिध हुआ, चतुरंग लिखमी हुई। सो श्री व्यास जी श्री राजा युधिष्ठिर नै कहे छै—राजा तैं काती वदि अमावसरा दिनरी तथा दीपक री महिमा पूछी थी सो कही। इण भांत बांभण आणंद सूं श्री महालिखमी जी सुप्रसन्न हुआ। सो हमैं जिकोइ मनुष्य दीपमाळिका रै दिन श्रीमहालिखमीजी री पूजा घणी ऊजळाई सूं घणा उछाह सूं करसी तथा दीपक घणा करसी, च्यारै पुहर रात जागरण राखसी जिण सुं श्री महालिखमीजी आणंद बांभण सुं ......तुष्टमांन होसी। तरै आ कथा सुणनै त्युं सकोई नूं तुष्टमांन हुयजो। पछै राजा युधिष्ठिर दीपमाळिका रै दिन श्री महालिखमी जी री पूजा और दीपक घणा उछाह सूं उतमाई सूं करण लागो।

इति श्री दीपमाळिका री लिखमीजी री कथा संपूरणं।

इस प्रकार ब्राह्मण आनन्द पर श्री महालक्ष्मी जी प्रसन्न हुई। सो अब जो भी व्यक्ति दीपमालिका के दिन श्री महालक्ष्मी की पूजा बड़ी स्वच्छता और बड़े उत्साह के साथ करेगा—तथा बहुत से दीपक जलायेगा, रात को चार पहर तक जागरण रखेगा उसके साथ श्री लक्ष्मी जी आनन्द ब्राह्मण के साथ..................................... वैसी तुष्टमान होगी। तब यह कथा सुनकर तू सबको तुष्टमान होना। फिर राजा युधिष्ठिर दीपमालिका के दिन श्री महालक्ष्मी जी की पूजा और दीपक बड़े ही उत्साह और उमंग से करने लगा।

८—कथा काती वदि एकादसी री

युधिष्ठिर उवाच—हे स्वामी ! काती वदि एकादसी कौ नांम कासूं, कूंण देवता पूजी जै, इण मास श्री परमेसर जी जागै मो महिमा कहो। आ बड़ी इग्यारस छै। श्री कृष्ण उवाच– हे राजा युधिष्ठिर, काती वदि एकादसी कौ नांम रमा, इण रै व्रत कीयां वैकुंठ नै प्राप्त होइ। भली गत नै प्राप्त होइ। हे राजा हेक इतहास सुण। असी अदभुत कथा सुणो। एक समै तेत्रा जुग विषै मुचकंद नाम राजा। मुचकंद नागपुरी कौ राजा हो। तैं राजा रै देवता सूं मित्राई हुई। इन्द्र, वायव, रण, कुबेर, जिम, बिभीषिण, इतरा सषा हुवा। और ही नाना भाँत रा देवता सू भांत भांत कर प्रीत हुई। तिण रौ राजा भगत हुवौ। तैरै एक चन्द्रभामा नाम बेटी हुई। सो बेटी चन्द्रसेन राजा रै बेटो सोभन नै परणाई। सो

कथा कार्तिक कृष्णा एकादशी की

युधिष्ठिर बोला—हे स्वामी ! कार्तिक एकादशी का नाम कैसे पड़ा ? किस देवता की पूजा की जाय ? इस महीने भगवान् जागते हैं—उसकी महिमा कहें। यह बड़ी एकादशी है। श्री कृष्ण बोला—हे युधिष्ठिर कार्तिक कृष्णा एकादशी का नाम रमा है—इसे करने से बैकुण्ठ की प्राप्ति होती है। उसे अच्छी गति प्राप्त होती है।

हे राजन् ! एक इतिहास सुनो। बड़ी विचित्र कथा है सुनो। एक समय की बात है—त्रेतायुग में मुचकंद नाम का राजा था। मुचकंद नागपुरी का राजा था। उस राजा की देवताओं से मित्रता हुई। इन्द्र, वायव, रण, कुबेर, यम, विभीषण इतने (उसके) मित्र बने। और कई प्रकार के देवताओं से कई प्रकार की उसकी मित्रता हुई। राजा उनका भक्त बना।

सोभन एक समै सासरै आयौ। तितरै एकादशी आई। राजा नगर में ढंढोरो फेर्यौ। जिकोई एकादशी कै दिन जीमै, तैरो घर लूट लेसौं। अर राजा डंड कर सी।

पछै राजा को जवांई सोभन भूखो रह्यौ एकादशी के दिन तीसरा पहुर तांई। पछै अन विना आथण मर गयौ। रात पड़ियौ रह्यौ। प्रात हुवौ, तद दाग देवां नै चाल्या। राजा की बेटी चन्द्रवती नांम साथे बळवा लागी। तद राजा कहै- बाई बळै मतां, दांन-पुन, व्रत करै। तूं भली गति पाईम। तद बाई बळती रही।

पछै धर्म नैम करै। नागपुर कै विषै एक बांभण वसै थौ। सोमसर्मा नाम थौ। धनहीन थौ। भीख मांग-मांग पेट भरतो तो। सो बांभण अवर गांव नै चाल्यौ। तठै पंथ विषै आवै थो। तठै दिन अस्त हुई गयौ रात पड़ी पठै पीपळ उजाड़ मैं। संध

इस राजा के चन्द्रभामा नाम की एक पुत्री हुई। वह पुत्री चन्द्रसेन राजा के पुत्र सोभन को विवाही। सोभन एकबार ससुराल आया। उस समय एकादशी आई। राजा ने शहर में मुनादी फिराई – जो व्यक्ति एकादशी के दिन भोजन करेगा, उसका घर मैं लूट लूंगा और राजा उसे दण्ड भी देगा।

इस प्रकार राजा का दामाद सोभन भूखा रहा, एकादशी के दिन तीसरे पहर तक। इसके उपरान्त, बिना अन्न के शाम को मर गया। रात तक पड़ा रहा। जब प्रातःकाल हुआ, तो उसे जलाने को लेगये। राजा की पुत्री चन्द्रवती उसके साथ जलने को तैयार हुई। तब राजा ने कहा—बाई, जलना मत ! दान, पुण्य, व्रत इत्यादि करना। तुझे सद्गति प्राप्त होगी। इस पर वह जलती हुई रुक गई।

इस प्रकार वह धर्म-पुण्य करने लगी। नागपुर नगर में एक ब्राह्मण रहता था। उसका नाम सोमशर्मा था। वह धनहीन (गरीब) था।

बाघता डरतौ ऊँचो चढ़ गयौ। तठै बैठो देखे तौ एक काळैहार हिरण आयौ। तैं साथै अनेक जीव, मृग, सिसीया रोझ, वाराह, गैंडो। अनेक भांत-भांत रा जीव आया। तठै रात एक नगर वस्यौ। उद-बुद नगर वस्यौ। भांत-भांत रा देहरा, मंदिर, विध-विध रौ बाजार मंड्यौ।

सो राजा रो जंवाई एकादशी कै दिन मुवौ थो। सो दिन विषै तो हिरण होवै, रात विषै राजा होय। अनेक दरीखांना जुढै। आप सुंघासण वैसे, ऊपर छत्र ढुळै। बड़ा बड़ा जोधा आय अर दरबार मांडै। और ही नाना भांत रा हाथी, रथ, घोड़ा, प्यादा भाँत-भाँत रौ दरबार आय मंढै। अर परभात रौ अलोप हुई जावै। तठै राजा संघासण बैठो थको ऊपर रूंख हतो तिकै ऊपर नजर कीवी। सू दीवटां रै चांनणै सू ऊपरलो पुरख नजर आयौ। तद राजा बोलियौ—तू एक तौ मनुस बैठो

भीख मांग-मांग कर पेट भरता था। वह अपने रास्ते पर चला आरहा था। उसे वहां दिन अस्त हो चला—रात पड़ गई। वहां उस उजाड़ में एक पीपल का पेड़ था। सिंह-बघेरों से डरता वह उस पर चढ़ गया। वहां बैठे उसने देखा–एक 'कालेहार'–काला हरिण आया। उसके साथ कई जीव मृग, खरगोश, रोझ, सूअर, गेंडा अनेक प्रकार के जीव आए। वहां रात्रि में एक नगर बसा। वह नगर बड़ा ही अद्भुत बसा। भांति-भांति के देवस्थान (मन्दिर आदि) और भांति-भांति का बाजार लगा।

राजा का वह दामाद जो एकादशी के दिन मरा था, वह दिन में तो हरिण बन जाता और रात्रि में राजा बन जाता। अनेक प्रकार के दरबार जुड़ता। खुद सिंहासन पर बैठता, ऊपर (उसके) चंवर ढुलती। बड़े-बड़े योधे आकर दरबार में बैठते। और भी नाना प्रकार के हाथी, रथ, घोड़े, प्यादे दरबार में आकर जुड़ते, और प्रभात को विलीन

नजर आवै छै। इण मनुस नां बोलाय अर पूछियौ—तूं कुण छै तरै ब्राह्मण राजा नूं देख अर बोलियौ, जू ओ तौ राजा रौ सागी जवांई-राजा मुचकंद रौ सागी जवांई। तरै राजा नूं खबर पड़ी। तरै बांभण नूं निमसकार कीयौ। ब्राह्मण आशीवाद दीवी। तरै राजा पूछियौ-हे देव, ब्राह्मण, हमारी असत्री कासू करै छै।

तरै ब्राह्मण कही-महाराज थांहरी असत्री धरम-नेम भली-भाँत करै छै। पिण महाराज, थांहरौ व्रतांत कहि थांहरी रिण कैसूं जो इतरौ नगर वसौ। तरै राजा सोभन बोल्यौ-हे देव, म्है सगत बिना एकादशी करी थी, सो फळ पायो नहीं। रात नगर बसै, दिन प्रलै, हुवै।

हो जाता। राजा ने वहाँ सिंहासन पर बैठे ऊपर को देखा। दीपक के प्रकाश में ऊपर एक पुरुष नजर आया। तब राजा बोला—एक आदमी बैठा दृष्टिगोचर हो रहा है। उसने पुरुष को बुलाकर पूछा—तुम कौन हो? तब ब्राह्मण राजा को देखकर बोला--यह तो राजा का सगा दामाद—राजा मुचकंद का सगा दामाद है। तब राजा को खबर लगी। उसने तब राजा को नमस्कार किया। ब्राह्मण ने आशीर्वाद दिया। तब राजा ने पूछा—हे देव, हे ब्राह्मण हमारी स्त्री क्या कर रही है?

तब ब्राह्मण ने कहा—महाराज! आपकी स्त्री, धर्म, नियम, व्रत भली-भाँति करती है। लेकिन महाराज, आप अपना तो हाल कहें! आप पर इस प्रकार का किसका कर्ज है जो उक्त प्रकार का नगर वस जाता है। तब राजा सोभन बोला—हे देव, मैंने बिना शक्ति के एकादशी का व्रत किया, इसलिए उसका फल पा नहीं सका। रात्रि में तो नगर वस जाता है, लेकिन प्रातः नष्ट हो जाता है।

तठै देव बोल्यौ-राजा, कोई उपाय करौ तो थांरौ नगर वसै। तब राजा सोभन बोल्यौ, जे हमारी अस्त्री अठै आय एकांत एकादशी को ऐकांत व्रत कर अर पुन्य देवै तो नगर वसै अर थिर होवै। तब ऐसो वचन राजा मुचकंद नूं जाय कही। आद-अंत दीठी जिका जाय कही। तरै ऐसी ब्राह्मण री वांणी सुण राजा अचरज उपायौ अर आपरा हुवाली माली हंता तिकानूं वात कही। तरै राजा राजारी बेटी और ही आपरा तब हिंता तिकानूं साथ ले अर आप एकै आश्रम बैठा। इतरै आथण हुवौ। तठै फेर नगर वसै। पछै चन्द्र भागा नै लेअर ब्राह्मण गयौ जाय ऊभो करी। राजा आपरी राणी नू देख बोलाई-आदर कियौ। पछै कह्यौ-थे काती वदी एकादसी को व्रत देवौ जो अपणौ नगर थिर होवै।

तब ब्राह्मण बोला—राजन, कोई उपाय करें तो आपका नगर बस सकता है। तब राजा सोभन बोला, यदि हमारी स्त्री यहाँ आकर एकांत में एकादशी का एकान्त व्रत करे और उसका पुण्य मुझे देदे तो, यह नगर बस जाय और फिर कभी नष्ट हो भी नहीं। तब इस प्रकार के बचन (उस ब्राह्मण ने) राजा मुचकंद से जाकर कहे। आदि और अन्त तक जो कुछ देखा था, वह कहा। राजा ने ब्राह्मण की इस प्रकार बात सुनकर बड़ा ताज्जुब किया और अपने जो रिश्तेदार आदि थे, उन्हें यह बात उसने कही। फिर राजा और राजा की पुत्री अपने अधिक नजदीक के सम्बन्धियों को साथ लेकर एक स्थान पर आकर बैठे। इतने में संध्या हुई। वहाँ फिर नगर बसा। तब ब्राह्मण चन्द्रभामा को लेकर गया। राजा ने अपनी रानी को देखकर उसे बुलाया। उसका आदर किया। फिर कहा—तुम कार्तिक कृष्णा की एकादशी के व्रत का फल दे दो तो अपना नगर स्थिर रह सकता है। तब चन्द्रभामा ने कहा—हे प्रभु, मैंने जन्म से लेकर आज तक का अपना पुण्य नगर को दिया।

तरै चन्द्रभागा कह्यौ-हेप्रभु, आजन्म हुती आज तांई इसो पुन छै, सो नगर नै म्हैं दियौ।

तद नगर थिर रह्यौ। उन नगर जिसड़ो द्वारकाकौ नांम जिसौ एक बड़ी पुरी तैसो नाम हुवो-सोभन नाम हुवो। सोभन नाम राजा घणा वरस तांई राज कियौ-अनेक पुत्र, धन, लखमी लाछ की वृद्ध हुई। पछै राजा रांणी नै वैकुंठ गत हुई। जे कोई कथा सुणै, व्रत करै तौ भली गत नूं प्रापत हुवै और अश्वमेघ जग्य को फळ होवै।

तब नगर स्थिर रह गया। उस नगर का नाम जैसा द्वारिका का नाम हुआ, उस बड़ी नगरी की शोभा हुई, वैसा ही हुआ। सोभन उसका नाम पड़ा। सोभन नामक राजा ने कई वर्षों तक राज्य किया। उसके कई पुत्र हुए, अन-धन लक्ष्मी की उसके यहाँ वृद्धि हुई। इसके उपरान्त राजा और रानी को बैकुण्ठ प्राप्त हुआ। जो व्यक्ति यह कथा सुने व्रत करेगा उसे अच्छी गति प्राप्त होगी और उसे अश्वमेध का मा पुण्य फल होगा।

६–श्री सीव रात्री री कथा लिख्यते

श्री गणेशायनमः । श्री सीवरात्री री कथा लीखते ॥ श्री महादेवजी कैलास ऊपरा विराजा है, सु कैलास फिटकमणि सारीखो उजलो है । सूर्ज री कीरणा ज्यु हां जगमग करै । सु च्यार कोस ऊंचो है । अति सुन्दर है जठै श्री महादेवजी विराज्या है । श्री पारवती जी हाथ जोड़ अरज करै, महादेवा का देव काईक वारता कहो । तदे श्री महादेव जी कहै, पारवती जी आ–वारता श्री नारायण जी इन्द्र जी सूं कही, सुं वारता थासुं कहुँ, थे येकचीत होय सुणो । फागुण वदि १४ अंधारो पखतीको दीन मारो है । मीनख मारो वरत करसी, तिणरै पाप रो खय होसी, पदवी वैकूठ री पावसी । पारवती जी कहै, 'इण वरत रौ विधान कहो ।'श्रीमाहादेवजी कहै–फागुण बदि१४ रै दिन व्रत कीजै ।

शिव रात्रि की कथा

श्री महादेवजी कैलाश पर विराजते हैं—वह कैलाश सफेद मणि के समान उज्ज्वल है । सूर्य की किरणें जैसे ही जगमग करती हैं । (सूर्य की किरणें चमक रही हैं) (वह) पहाड़ चारकोस ऊँचा है अति सुन्दर है (यह पर्वत) वहाँ श्री महादेवजी विराजमान हैं । श्री पार्वती जी विनती करती हैं, हाथ जोड़ कर—हे महादेव, देवों के देव, आप कोई कहानी कहें । तब कहने लगे—पार्वती जी, यह वार्ता श्री नारायण भगवान ने इन्द्र से कही थी, वही वार्ता मैं आपसे कहता हूँ, आप चित लगाकर सुनें । फाल्गुण कृष्णा चौदस यह मेरा दिन है । जो व्यक्ति मेरा व्रत करेगा, उसके पापों का नाश होगा, उन्हें स्वर्ग में स्थान मिलेगा ।

पार्वती ने उत्तर में कहा—'इस व्रत का विधान कहिये' । श्री महादेवजी ने कहा—फाल्गुण कृष्णा चौदस के दिन व्रत करना चाहिए ।

राते जागरण कीजै । च्यार पोहर में च्यार पूजा कीजै । पाचाईमृत सूं केसर, चंदण, नवैद्य, घीरत रो दीपक कीजै । च्यार पोहर सीव-सीव कीजै । इणरा करणवाळा नैं मनोवाचीत फळ देवुं । पारवती जी कहै, है देवां-का-देव इण व्रत सुं आगै कूण उधरीयो सुं कहो । श्री महादेव जी कहै-येक भील सुं प्रवता मैं रहै । तिकण रै परवार घणो । सु बन मैं जीव मारनै आजीवका करै । सुं येकण दीन च्यार पोहर भटको, कोई चुगो मील्यो नहीं । सुं भूखो वनि मांहे बैठो । उठै एक तळाब है-उठै घणा बील-रा रूख है । सुं उठै सीया मरै । भुखो, सु बीलरा रूख उंपरा चढै उतरै, पां तोडै नाखै । सीया मरतो सीव-सीव करै । उठै श्री महादेव जी री जायगा पूजनीक ही । भील तो कुटी जाणै नहीं-भुखो जागतो रयो । फागुण वदि १४ रो दीन हो- पांन तोड नाखीयां सुं पुजा मानी । उठा सु चालो । सामी चमकती

रात का जागरण करना । चार पहर में चार पूजा करनी चाहिए । पंचामृतों केशर, चंदन, नैवेद्य, घृत का दीपक करना । चारों पहर शिव-शिव करना चाहिए । इस प्रकार का व्रत करने वाले को (मैं) मनोवांछित फल की प्राप्ति देता हूँ । पार्वती कहती हैं—हे देवों के देव, इस व्रत से पहले किस व्यक्ति का उद्धार हुआ, सो कहना । श्रीमहादेवजी कहने लगे—एक भील, वह पर्वत में रहता था । उसका बड़ा परिवार था । वह बन में जीवों को मारकर अपनी आजीविका किया करता । वह एक दिन चार पहर तक भटकता रहा—उस दिन उसे कहीं भी शिकार हाथ नहीं आया । इस प्रकार वह बन में भूखा बैठा रहा । वहाँ एक तालाब है—वहाँ बहुत से बील के वृक्ष हैं । वहाँ वह ठंड से मरने लगा । भूख के मारे बील के पेड़ पर चढ़ने और उतरने लगा—इस प्रकार वह पान तोड़ कर खाने लगा । ठंड के मारे वह 'ठंड लग रही है'-'ठंड लग रही है' ऐसा चिल्लाने लगा । वह स्थान

येक हीरणी आई । सु विचारो, हीरणी मारनै उरी लेवुं । तरै हीरणी बोली, 'रे भील, तुहे मोनुं मारै मती । तदे भील विचार कीयो-मोनुं इण वन माहे भटकता घणा वरस वीता, पीण हीरणी मुंढै बोलतो कदे सुणी नहीं । तदे हीरणी बोली, 'रे भील, हूं इन्द्रजी री अपछरा ही, रंभा थी, जोवन भरपूर थी । इन्द्र जी मारा नाच सुं वोहोत खुसी हुंता, तारा मोनुं वडेरी सीरोमण कीवी । सगळ्यां अपछरा मारै लारै-हुं सीरोमण । येकण दीन श्री माहादेव जी इन्द्र जी कनै पधारयां, सु समस्त अपछरा नाचती हुई । हूं पीण आवती थी मुरग मांहे । बीच ही मैं मोनुं हीरण मई-दांणव रोक राखी । सु उणरो हूं मन मनाय राजी कर मोडी-सी आई । आयकर मुजरो कीयो । तदे माहादेवजी बोल्या-तुं सगला मांहे मोटी अरू बडेरी, मोड़ी आई-सुं साच कहो कूड मति बोली जै, भसम कर नाखहुं । तदे रंभा बोली-'राज,

---

श्री महादेवजी का था—पूजनीय (पूजन करने योग्य) था । भील तो भगवान की कुटिया (यहाँ भगवान का निवास स्थान है) जानता नहीं था—वह तमाम रातभर-भूखा रहकर जागता रहा । फाल्गुण कृष्णा चौदस का दिन था, पान तोड़कर नीचे गिरा देने से वह (क्रिया) पूजा में मानी गई । फिर वह वहाँ से रवाना हुआ । सामने चमकती हुई एक हरिणी दिखाई दी । उसने (सोचा) इसे मारकर अपने पास रख लूँ । इस पर (तब) हरिणी बोली—अरे भील ! मुझे तुम मारना मत ! तब भीलने सोचा, मुझे इस बन में भटकते-भटकते कई वर्ष हो गये हैं । लेकिन कभी भी हरिणी को मुँह से बोलती हुई नहीं सुनी है । तब हरिणी ने कहा—मैं भगवान इन्द्र की अप्सरा थी रंभा थी जोवन में मैं भरपूर थी । भगवान इन्द्र मेरे नाच से बड़े प्रसन्न होते थे । तब मुझे सबसे बड़ी और शिरोमणी बना दी । सब अप्सराये मेरे बाद में शिरोमणी बनीं । एक दिन श्री महादेव जी इन्द्र के पास

मारो बस कोई नहीं। मोनु हीरण-मई दांणव सु हेत हुंतो। सु उ जोरावर,आवण दीवी नहीं। उणरो मन मनायो,जदे आवण,दीणी। तदे माहादेव जी कोप कीयो तोनु, देवता थोड़ा छा ? दांणवा सु कांई घरवास मांडीयो ? कोप सु बोल्या, कहो-थे अरु हीरण-मई दांणव सराप भुगतो। तरै मैं वीनती करी-महाराजा, महारै छूटेपो कदे हुसी। तदे श्री माहादेव जी कयो-बारै बरस पाछै सीव रा लींग रो दरसण होसी। सु माहादेवजी रो दरसण नु भटका छां। तरै भील बोल्यो—हीरणी, थारी सलाहुवै जीतरी बाता कहो, थानु कदे ही छोडु नहीं। मारा बाळक भुखा है। इण बन माहे जीनावर मार आजीवका करू। तरै हीरणी बोली, हुंतो गरभवंती, पेट माहे बचा है। बचा हुवा पाछै आवु। नहीं आवु तो सोस काढु तळावरी पाळ फोडारो पाप मोनु।नहीं आवु तो देवता नींदै, तीरथ रोवुण, पुरूष रै भाव नहीं, जीकण रो पाप

आए अतः सभी अप्सराओं ने नाच प्रारम्भ किया। मैं भी स्वर्ग को आ रही थी। बीच में मुझे हीरणमई दानव (हिरण के रूप में दानव) ने रोक लिया। अतः उसका मन प्रसन्न-कर उसे प्रसन्न कर, मैं देर से (वहाँ) पहुँची। तब महादेवजी ने कहा—तुम सबसे बड़ी (होकर) और सबसे प्रधान (होकर) देर से आईं ! अतः सच बात कहना—झूठ बताना मत, नहीं तो तुझे भस्म कर दूँगा।

तब रंभा ने उत्तर दिया—राजन् ! मेरा कोई वश नहीं है। मेरा हीरणमई दानव से प्रेम होगया था। वह बड़ा ही ताकतवर है—उसने आने नहीं दी। उसका मन प्रसन्न रखा, तब उसने मुझे आने की अनुमति दी। तब महादेवजी क्रोधित हुए—क्या तुम्हें देवतालोग दिखाई नहीं दिए ? क्या तुम्हें देवता कम मालूम हुए जो एक राक्षस से तुमने सुख-संभोग किया। क्रोध में आकर उन्होंने कहा—तुम और हीरणमई दानव दोनों ही शाप को भोगो। तब मैंने विनती की—मेरा

मोनु' तो कने नहीं आऊं तो लागसी। हूं बेगी आऊं। हिरणी सोस खाई तदे भील मारी नहीं–जावण दीवी। भील तो उटीही उभो सीव–सीव करै, जीतरै हीरणी दुजी आई, तिकण नु तीर सामो वाहण लागो। तदे हीरणी बोली, रे भीलजी, मोनु' मती मारै। लारा सु' मारो धणी आवसी, तिकाना मारी। बचा मारा छोटा छै। बचांनु' चुगाय' आवु'। नहीं आवु'तो सोस करू' बाभण री देह पाय सीभ्या तीरपण नहीं करै, तीकण रो पाप मोनु'। नहीं आवु' तो गवु बैठी नै ठोकर दे उठाणै सु पाप नहीं आवु' तो लागजो। तरै भील जाणौ, हीरणो येक आगै आई, दुजी पाछै आई'–सु साचा दीसे है, जाण दीवी। तुरत हेरण आयो। तदे भील हेरन नु मारण लाग्यो, तदै हेरण बोल्यो, 'रे पापी, मारै मति। अठै दोय मारी असतरी आई। तदै भील बोल्यो, 'आ जायगा कोई बड़ी पुजनीक है–जीनावर मानवी ज्यु' बोल्या।

छुटकारा कब होगा ? इस पर श्री महादेव जी ने कहा—बारह वर्षों के उपरान्त शिवलिङ्ग के दर्शन होंगे। इस लिए मैं (हरिणी) महादेवजी के दर्शन के लिए भटक रही हूँ। तब भील बोला–हे हरिणी तुम्हारी इच्छा हो, उतनी बातें तू कह, मैं तुम्हें किसी भी प्रकार से छोड़ने का नहीं। मेरे बालक भूखे हैं। मैं तो इस बन में जीवों को मार कर ही अपनी आजीविका उपार्जन करता हूँ। इस पर हरिणी ने कहा मैं गर्भवती हूँ, मेरे पेट में बच्चा है। बच्चा होने के बाद (मैं) आऊँगी। यदि मैं नहीं आऊँ, तो शपथ पूर्वक कहती हूँ इस तालाब की पाल फूटने का पाप मुझे लगे। यदि मैं तुम्हारे पास नहीं आऊँ तो मुझे देवताओं की निन्दा करने का पाप, तीर्थों की बुराइयाँ करने का पाप तथा अपने पुरुष में अनुरक्ति न रखने का पाप (जो एक स्त्री को लगता है) मुझे लगे। मैं बहुत जल्दी आऊँगी। हरिणी ने शपथ खाई–तब भील ने उसे मारी नहीं उसे (वैसे ही) जाने दिया। भील वहाँ

तदै भील हरख पाम्यो, च्यार पोहर राते हेरण हीराण्यां सुं भूखो रात रहो। भूखो बीलरा पांन तोड-तोडी नाखतो रहो, सीया मरतो सीव-सीव कीयो । सु वाहा सीव रात्र थी, जायगा सीव जी रो मंदिर छो । सुं भील नु श्री माहादेव जी तुसटमांन हुवा। भील नु परम पदवी दीवी, अपछरा श्रांप सुं नीषरत हुई; इन्द्रलोक गई। बिमान बैसि सुरग गया। सु आकास मै उडै छै । हीरणा खासे हेरण तीनु तारा पाछै, सुं आहेडी कही जे। सुं भील जी है सुं श्री माहादेव जी रा प्रताप सुं मोखनु पराप्त हुआ। सु परतक्ष आसमांन मै दरसण दीसै है।

खड़ा–खड़ा 'ठंड लग रही है', लग रही है' ऐसा कह ही रहा था कि इतने में एक दूसरी हरिणी आई (वह) उसे तीर मारने को उद्यत हुआ। तब हरिणी बोली—हे भील, मुझे मारना मत। पीछे से मेरा पति आ रहा है–उसे मारना। मेरे बच्चे छोटे हैं। मैं उन्हें चुगा-पानी देकर आऊँ ! यदि मैं तुम्हारे पास नहीं आऊँ तो मुझे उस ब्राह्मण का पाप लगे जो संध्या, तर्पण आदि नहीं करता है। यदि मैं तुम्हारे पास नहीं आऊँ तो मुझे बैठी हुई गाय को ठोकर मारकर उठाने का जो पाप है—वह लगे। तब भील ने विचारा हरिणी एक पहले भी आई; दूसरी पीछे से भी आई, अतः यह सच्ची मालूम होती है, उसे जाने दिया। जल्दी ही हरिण आया, तब भील हरिण को मारने लगा। तब हरिण बोला—अरे ओ पापी, मुझे मत मारना। यहाँ अभी मेरी दो स्त्रियाँ आई थीं। तब भील बोला–यह जगह कोई बड़ी पूजनीक मालूम होती है यहाँ जानवर भी मनुष्यों की तरह बोलते हैं। तब भील बड़ा ही हर्षित हुआ। चार पहर तक रात्रि में हरिणों को हेरता, हैरान होकर भूखों मरता रहा। भूखा बैठा बील के पत्ते तोड़–तोड़कर फेंकता रहा और ठंड के मारे सी–सी–सी करता रहा। उस दिन शिवरात्रि थी— और उस स्थान पर शिवजी का मन्दिर था। अतः भील को श्री महादेव जी

आ कथा श्री माहादेव जी श्री पारवती जी नु ं कही। श्री पारवती जी सीवरात्री को वरत प्रगट कीयो। करसी सु मनोवाछीत फळ पावसी, परमगति नु ं परापत हुंसी। सीवरात्री रो बरत रो पुनरो पार कोई नहीं। सीव ईसुर अविनासी परमात्मा है। वरत करसी, कथा कहसी, सुणकर धारसी-सु ं भगति पावसी। इति श्री सीवरात्री कथा। श्री रामजी श्रावण सुद १५ सं० १८५०। श्री हरी।

तुष्टमान (प्रसन्न) हुए। भील को बड़ी पदवी (अच्छा स्थान) दी और अप्सरा को उसके शाप से मुक्त की, वह इन्द्रलोक गई। विमान में बैठकर वे स्वर्ग को गये। अतः आकाश में निकलते हैं। हरिण दोनों तरफ और हरिणी तीनों तारों के पीछे। इसे आहेड़ी कहते हैं। (वह आहेड़ी कहलाता है)। भील है, वह श्री महादेवजी के प्रताप से (कृपा से) मोक्ष को प्राप्त हुआ। वह प्रत्यक्ष आकाश में दर्शन देता है। (आकाश में प्रत्यक्ष दिखाई देता है)। यह कथा श्री महादेवजी ने पार्वती जी से कही। श्री पार्वती जी ने यह शिवरात्रि का व्रत संसार के सामने रखा। जो (व्यक्ति) इस व्रत को करेगा, उसे अपनी इच्छनुसार फल की प्राप्ति होगी—वह परमगति (सद्गति स्वर्ग) को प्राप्त होगा। शिवरात्रि के व्रत के पुण्य की बड़ी ही महिमा है इसका कोई पार नहीं है। शिव जी भगवान, अविनाशी हैं—परमात्मा हैं। जो व्यक्ति यह व्रत करेगा, इसकी कथा कहेगा, अथवा इसे सुनकर इसे चित में धारण करेगा उसे (शिव की) भक्ति मिलेगी।

१०–अथ होली री कथा

एक राकस मालण री बेटी, ढूढ़ा राकसणी। सो ढूढा राकसणी श्री महादेवजी ऊपर तपस्या कीवी। सो ऐसी तपस्या कीनहीं जो एक सिव-सिव करें। बीजो क्युं खावै न पीवै। तरै श्री महादेवजी प्रसन्न होय दरसण दीयौ, नै महादेव जी कह्यौ, 'हूं तूठौ, तूं मांग' तरै ढूढा राकसणी बोली, जो राज म्हांनैं तूठा छै, तौ इतरौ देवौ, जो हूं किणीवतै मरूं नहीं। देवतां सूं, मनखां सूं न मरूं। हथियारां सूं मरूं नहीं, ईसडी मौनूं करौ। तरै श्री महादेव जी जांणीयौ—आतौ रांड राकसणी, नै इणरै तो कपट घणौ। आ मांणसां नूं दुख देसी। नै म्हैं तो इणनु वचन दियो। तरैं श्री महादेव जी कहै छै-बाळक, मनिख री तौ हूं न जाणूं, नै बीजा तौ सकोई थारी पूजा करसी। तरै राकसणी

कथा होली की

राक्षस मालरग की बेटी···ढूंढा राक्षसरगी थी। उस ढूंढा राक्षसरगी ने श्री महादेव जी की तपस्या की। उसने ऐसी तपस्या की कि केवल 'शिव' 'शिव' करती रहे—इसके अतिरिक्त न वह कुछ खाती और न कुछ पान ही करती। तब श्री महादेव जी ने प्रसन्न होकर उसे दर्शन दिए। वे कहने लगे, 'मैं तुझसे प्रसन्न हूँ—तू मुझसे वर मांग !' तब राक्षसरगी ने उत्तर दिया, यदि आप मुझ पर प्रसन्न हैं तो ऐसा वरदान दें जो मैं किसी के मारे मरूं ही नहीं। देवताओं से न मरूं, मनुष्यों से न मरूं, हथियारों से न मरूं, मुझे ऐसी बना दें (वरदान द्वारा)। महादेवजी ने तब सोचा, यह तो राक्षसरगी है—इसके (हृदय में) कपट वहुत है। यह प्रारगीमात्र को कष्ट देगी। और मैंने तो इसे बचन के लिए कह दिया है ! इस पर श्री महादेव जी ने कहा, 'बच्चों की और मनुष्यों की

जाणियौ, बाळक रौ भौ कोई नहीं बाळकां नु' हूं खाय जाईस। बीजौ मांग्यौ सो सरब दियो । नै श्री महादेव जी अन्तरध्यांन हुआ। पछै राकसणी ढूंढे गांव रहै छै । सो महाजोरावर हुइ, सो संसार मैं नाना छोरूवां नु' घर माहैं सूं सूता नै बैठां नूं उपाड़ उपाड़ नै जावइ है—मार नै खाया। सो धरती सारी ऊगै नै आथवौ जितरी मैं फिरै, नै नाना छोरू मार नै खावै। सो राकसणी जोरावर हुई। मारी मरै नहीं । च्यांरू ही खूंट मैं राकसणी री हूक हुई। सो राजा रूघ नव खंड सात दीप रौ धणी, धरमात्मा-तिण री धरती मांहै अन्याव कठै ही नहीं। न्याव रौ पइसौ लेवै, सो दुनियां सारी ही राजा कनै पुकारू आई। कहै-महाराज, ढूंढा राकसणी धरती मांहै अन्याव करै छै, नान्हा टाबरां नु' मारनै खाय छै।' तरै राजा नु' सोच ऊपनौ।

तो मैं कह नहीं सकता—अन्य सभी तुम्हारी पूजा करेंगे। तब राक्षसणी ने सोचा,' मुझे बच्चों से तो कोई भय है ही नहीं; उन्हें तो मैं खा जाऊँगी। और जो कुछ मैंने मांगा था, सो तो मिल ही गया।

इस पर महादेव जी अलोप हो गए। इसके बाद राक्षसणी ढूंढा गाँव में रहती है। वह बड़ी ही शक्तिशालिनी होगई। संसार में कई बच्चों को उनके घरों में से सोते हुओं को, बैठे हुओं को, उठा-उठाकर भाग जाती है, उन्हें मारकर खाती है। तमाम पृथ्वी पर जहाँ तक सूर्य उदय होता है और अस्त होता है वह वहाँ घूमती है और नाना-प्रकार के बच्चों को मारकर खा जाती है। इस प्रकार वह राक्षसणी ताकतवर होगई—किसी के मारे मरती नहीं। चारों दिशाओं में उसकी धाक जम गई।

राजा रूघ, नव खण्ड, सात द्वीपों का स्वामी, बड़ा धर्मात्मा जिसकी धरती में अन्याय कहीं नहीं होता था—ऐसा था। वह न्याय का ही

तरै राजा गुरू वसिष्ट जी नै पूछै छै, जो लोक दुनियां सारा ही पुकारू आया छै। ढूंढा राकसणी धरती मांहै अन्याव करै छै, नांन्हा बाळक सहु मारै छै, तिणरौ कासुं करणौ। तरै वसिष्ट जी कह्यौ-इण राकसणी नै श्री महादेव जी रो वरदांन छै। सो आ क्युं ही कीयां मरै नहीं। एक उपाव छै, तिण करनै रहसी। श्री महादेव जी एक सेरी राखी छै। तरै राजा कहै छै-वसिष्टजी उपाव बतावौ। तरै वसिष्ट जी कहै छै—गांव रै बारै होळी मातारौ थांन छै। थै सकोई जाय नै माताजी री पूजा करौ, बाजा बजावतां, गावतां पूजा करौ। फागुण वदि एक मरै दिन होळी रौ डांडौ रोपिजै, ऊपर धजा बांधिजै। नै छोकरां नै कहौ जु मुहढा मांह सूं भूंडा बोलै, कुफार काढै, नाचै, कूदै, पांणी नांखै। धूड, राख नांखै, भोंटोडा छांणा, लकड़ी चोर खोसनै भैळा करौ।

पैसा लिया करता। अतः तमाम संसार (के लोग) राजा के पास फरियाद करने को आए। कहने लगे—राजन्! ढूंढ़ा राक्षसणी पृथ्वी पर अन्याय करती है। छोटे-छोटे बच्चों को मारकर खाती है। तब राजा को बड़ा ही फिक्र हुआ। वे इस पर गुरू वसिष्ठ जी से पूछते हैं। दुनियाँ के सभी लोग पुकार लेकर आये हैं। ढूंढ़ा राक्षसणी पृथ्वी पर अन्याय करती है, छोटे-छोटे तमाम बच्चों को मारती है, उसका क्या (उपाय) करना चाहिए। तब वसिष्ठ जी ने कहा, इस राक्षसणी को श्री महादेवजी का वरदान है। अतः यह किसी से भी मर नहीं सकती। एक उपाय है— उससे यह रह सकती है। श्री महादेवजी ने एक छूट रखी है। तब राजा कहते हैं— हे वसिष्ठ जी उपाय बतावें!

तब वसिष्ठ जी कहते हैं—गाँव के बाहर होली माता का एक मन्दिर है। आप सभी उसकी पूजा करे—बाजा बजाते, गाते हुए उसकी पूजा करें। फाल्गुण कृष्णा एकम के दिन होली के नाम का एक

जो राकसणी नै वरदांन छै-बरसाळै, सीयाळै उनहाळै न मरै।। तिण सूं फागुण रौ महीनौ छै। सो उन्हाळौ लागतां नै सीयाळारी संध छै। फागुण सुदि पूनम रै दिन डांडौ रोपियौ हुवौ तिकौनै छोकरां लकडी छांणा भीटोरा भेळा किया होय तिको सारा भेळा करनै डांडां कनै नांखीजै। ने पछै होळी री प्रतिष्ठा ब्राह्मण सुं कराई जै। पछै होळी री पूजा कीजै-कुंकुं चावळ सूं पूजा कीजे, धूप खेईजै। मुहढा आगै नैवेद, सांकळी, फूली चढाईजे। बड़ा चढ़ाई जै। लकड़ी रा खांडोला बाळकां रै हाथ मैं दीजै। पछै होळी प्रजळत कीजै। पछै झाळ निकलै, तरै परिकरमा दीजै। नालेर मांहै नांख नै उरौलै झाळ मांह सूं, नै पछै वधारिजै। हाथ मैं खांडौळा होइ सो एक होळी ....।

मोटा सा लकड़ रोपना—उस पर एक ध्वजा बाँधना। फिर बच्चों से कहना–मुँह से बुरे शब्द कहना, गालियाँ निकालें, नाचें, कूदें, पानी फेकें, धूड व राख फेकें। जली–बली लकड़ियां और कण्डे इधर–उधर से चोर–खोस कर इकट्ठे करलें। राक्षसणी को वरदान है—वर्षाकाल, ग्रीष्मकाल, व शीतकाल में यह मरे नहीं। अतः फाल्गुण का महीना है यह गर्मी के प्रारम्भ होते तथा सर्दी के जाते समय दोनों का संधिकाल है। फाल्गुण शुक्ला पूर्णमा को जो लकड़ रोपा हुआ है—उसके पास लड़के चोरे हुए व लूट–खसोट किए हुए कण्डे व लकड़ियाँ इकट्ठी हुई हों, उन्हें वहाँ फेंक दें। इसके बाद होली की प्रतिष्ठा (पूजाआदि) ब्राह्मण से करवानी। फिर होली की पूजा करनी चाहिए। पूजा कुंकुंम चावल आदि से करनी चाहिए धूप भी करना चाहिए। उसके ठीक सामने प्रसाद–नैवेद्य आदि भी चढ़ाने चाहिए। बड़े चढ़ाने (चाहिए) लकड़ी के खांडोले (लकड़ी की तलवार आदि) बच्चों के हाथ में देनी चाहिए। फिर होली को जलाना चाहिए। इसके बाद होली की

झाळ देख नै नालेर वधारिजै। तिणरो धूंओ सगळौ जासी। नै नान्हो छोरूं जन्मे तिणरी पूजा सांकळो, बळी, फूली भेळा करनै ऊपर लाकड़ी आरी करनै नैचे छोरू नै बैमाणजो । नै ऊपर खांडै री काटकल दीजौ नै गीत गाई जै । सो ये खांडोळा री काटकडे पडै सो राकमणी रै लागै। काटकड़ नै होळी रौ धूंओं लागै। तिण आगै राकसणी आवसी नहीं, सो थै ओ उपाव करौ। तरै राज—लोक, दुनियां पुकारू आई थी तिणांकनै आ बात कही छै, थै सकोई इणभाँत सूं होळी री पूजा करौ ज्यूं राकसणी नहीं आवै। तरै सकोई इणभांत सूं पूजा करण लागा। तरै राकसणी रौ दोस उतरियौ। हमैं राकसणी न आवै। तरै बाळकां रौ कष्ट कटियौ।

'झाल' (लौ) निकले उस समय उसके चारों ओर परिक्रमा लगानी चाहिए। नारेल को जलती होली में डालकर फिर उसे निकालकर फोड़ना चाहिए । हाथों में जो 'खांडोले' हों उन्हें होली में गिरादेने···

अग्नि की लपट को देखकर नारेल को तोड़ना चाहिए। उसका धूंआ चारों ओर जावेगा। और छोटा बच्चा पैदा हो उसकी पूजा, वली से, फूलों से करके·········उसके नीचे बच्चे को बिठाना चाहिए। उस पर तलवार को रक्षा के रूप में रखना, फिर गीत गाने चाहिए। सो इसप्रकार तलवार काटकड़ जो गिरे वह राक्षसणी के जाकर लगे। काटकड़ को होली का धूंवा लगे। उसके समक्ष राक्षसणी आयेगी नहीं—अतः आप यह उपाय करें। तब जो लोग शहर के और दुनियाँ के पुकार लेकर आए थे, उनके पास यह बात पहुँची—आप सभी इसी प्रकार से होली की पूजा करें, जिससे राक्षसणी न आ सके। तब सभी लोग इस प्रकार से पूजा करने लगे। इस प्रकार राक्षसणी का दोष का छुटकारा हुआ। अब राक्षसणी आती ही नहीं। तब जाकर बालकों

पछै सकोई नान्हा, मोटा, मरद, अस्त्रियां, मुहडा मांहि थे भूंडा बोलैछै। माथा मांहि धूड़, राख, पांणी, मळ, मूत, घालै छै। तिण थो दोस उतरै। पछै सकोई भेळा हूयनै ढूंढा राकसणी नूं राव काठीजै। तिणरा गळा मांहि खडवंया री माळा घालिजै। उणरै घणी राख लगाईजै। पछै उनूं गधौडौ ऊपर चाढ चढाइवै। मुहढे आगै बाजा बजाइजै। छोकरां कनै भूंडा बोलाइजै पछै भाटा बाहिजै। पछै रावनै गाँव बारै काढिजै। तरै भार उतरै छै।

का कष्ट मिटा। उसके बाद सभी छोटे, मोटे, मरद, स्त्रियाँ, मुँह से बुरे बचन बोलते हैं। सिर पर धूल, राख, पानी, मल-मूत्र डालते हैं—इससे दोषका परिमार्जन होता है। फिर सभी इकट्ठे होकर ढूंढ़ा राक्षसणी का स्वांग निकालना चाहिए। उसके गले में एक माला विशेष (गोबर की बनी) पहिरावें। उसके बहुत सी राख लगावें। फिर उसे गधे पर चढ़ा देनी चाहिए। उसके मुंह के आगे बाजे बजावें। लड़कों से बुरे बचन कहलायें। फिर पत्थरों की मार उसे मारना। फिर गधे को गाँव के बाहर निकालना। तब इसका भार कम हो (तब जाकर यह काम हलका हो)।

११—अथ फल द्वितीया की कथा

श्री गणेशायनमः। अथ फळ द्वितीया की कथा लिख्यते। एकदा समै राजा युधिष्ठिर, श्री कृष्णदेव को प्रश्न कियो, हे स्वामिन, हे जनार्दन, दांना करि, यज्ञा करि, किसौ पुण्य करि राज्य री प्राप्ति हुवै, सू थे निश्चय कर कहो ॥ १ ॥ तब श्री कृष्ण कहै—जो राजा, राज्य सुख वांछै छै तो व्रत करि, जिके व्रत कियां मनवांछितं फळ हुवै, व्रतां मांहि उत्तम छै, मोटै पुण्य रौ करणहार ॥ २ ॥ कैसो छै व्रत, जिकै एकै व्रत कियां जितरौ सारां तीर्थां विषै स्नान कियां पुण्य हुवै, तितरौ पुण्य हुवै।

तब युधिष्ठिर कहै—हे कृष्ण, तिकौ व्रत किसो? किसै देवता रो? किसी विधि? विस्तार सौं कहो। जो थे म्हौं ऊपर

कथा फल द्वितीया की

श्री गणेशायनमः। फल द्वितीया की कथा लिखी जा रही है। एक समय, राजा युधिष्ठिर ने श्री कृष्ण भगवान से प्रश्न किया—हे स्वामी, हे जनार्दन, दान और यज्ञ अथवा वह कौनसा पुण्य है जिसके करने से राज्य की प्राप्ति हो? वह आप कृपा करके अवश्य कहें। तब श्री कृष्ण कहते हैं—जो राजा राज्य सुख चाहे, उसे व्रत करना चाहिए। उस व्रत के करने से मन-वाञ्छित फल होता है; यह व्रतों में उत्तम व्रत है, और यह बड़े पुण्य को देने वाला है। यह कैसा है व्रत—जिस एक व्रत को करने पर तमाम तीर्थों में स्नान करने के समान पुण्य होता है।

तब युधिष्ठिर कहता है—हे कृष्ण, वह कौन सा व्रत है? किस देवता का है? कैसी उसकी विधि है? विस्तार पूर्वक कहें—यदि

भाव राखो छौ तो। तब श्री कृष्ण कहै—राज्ञा तूं सुनि—व्रतां मांहि उत्तम व्रत छै। ओ व्रत आगै सौनकादिकां रिसीस्वरां नूं सूत जी कह्यो छै ॥ ५ ॥

पुराण पूर्वै एक समै दण्डकारण्य वन वासीयां रिखां नूं आवतां नूं सूत वचन कहत हुवौ ॥ ६ ॥ हे रिसीस्वरां कठै गया था, कासूं इयै रौ प्रत्युत्तर हुवै ॥ ७ ॥ तब रिख बोलिया—हे सूत, म्हे श्री गंगा विषै स्नान करण गया था। तठै श्री भगवान पण आया। थांनूं आ सून्यशयन नाम व्रत पूछन आया छां। जिकै व्रत कर राजा रूकमांगद हुंतो हुवो, जिकैरी कीरति स्वर्ग ऊपरि जाय प्राप्ति हुई-तठै श्री भगवान विराजै। तब सूत कहै—श्रावणादि मास च्यार कृष्ण परव्य री द्वितीया तिकै आगै व्रत करि। जल शायी भगवान पूजीयो। धन धर्म सूं उपायो ॥१०॥

आप मुझ पर कृपा भाव रखते हैं तो। तब श्री कृष्ण कहते हैं—राजन्! तुम सुनो—(यह) व्रतों में से उत्तम व्रत है। इसी व्रत को पहले शोनकादिक ऋषि आदि को सूत जी ने कहा है।

प्राचीन काल में एक समय दंडका वनवासी ऋषियों के आने पर, सूत जी इस प्रकार वचन कहने लगे। हे ऋषि लोगों—(आप) कहाँ गये थे ? (इस प्रकार के जाने का) क्या प्रयोजन था ? तब ऋषियों ने उत्तर दिया— हे सूत ! हम श्री गंगा जी में स्नान करने गये थे। वहाँ श्री भगवान भी आये थे। आपके पास (तो) 'शून्य-शयन' नामक व्रत के विषय में पूछने आये हैं। जिस व्रत के करने पर राजा रूकमांगद था, उसकी कीर्ति स्वर्ग तक जा पहुँची, जहाँ श्री भगवान विराजमान है। तब सूत कहते हैं—श्रावण आदि महीने की चार कृष्ण-पक्ष की द्वितीया का (उसने) व्रत किया। जल में शयन करने वाले (विष्णु) भगवान को पूजा।

तैं कर भगवान प्रसन्न हुइ वांछितं फळ देता हुवा। फेर ब्राह्मण री किरपा सूं पृथिवी रो राजा हुवौ। इयैहीज कथा नूं विस्तार कर कहूँ छूं—थे एकाग्र मन श्रवण करो ॥ १२ ॥

पुराण पर्वे राजा रूक्मांगद धर्मात्मा सारां राजवीयां विषै श्रेष्ट। वामदेव रिषि रै आश्रम आय प्राप्त हुवो। तठै एकै रिखी नूं बैठो देख्यौ। तिकै नूं देखि राजा नमस्कार कीयो-चरणै लागो ॥ १४ ॥ रिसिस्वर पण उठी आसन अर्घ्य पाद्य सत्कार कियो। राज्य री कुशळ वार्त्ता पूछी। तब रिख नूं कह्यौ—हे रिसिस्वर, थांहरी किरपा करि माहरौ राज्य विषै कुशळ छै। पण क्यूंक हूँ पूछण आयो छों। म्हारै हृदै मांहि विस्मय छै ॥ १६ ॥ हे ब्रह्मन्, जिकै कर्म कर राज्य शत्रु वैरियां करि वर्जित म्हैं पायो, धर्मांगद सारीखो पुत्र पायो, मनो गामी

इससे भगवान प्रसन्न होकर (उसे) मनो-वाञ्छित फल का वरदान दिया। फिर ब्राह्मण की कृपा से पृथ्वी का राजा हुआ। इसी ही कथा को विस्तार पूर्वक कहता हूँ—आप लोग एक-चित्त होकर सुनें।

प्राचीन काल में राजा रूकमांगद बड़ा धर्मात्मा, तमाम राजाओं में श्रेष्ठ (हो गया है)। वह वामदेव ऋषि के आश्रम में आया। वहाँ एक ऋषि को बैठा हुआ देखा। उसे देखकर राजा ने नमस्कार किया, उसके पाँवों पड़ा। ऋषि ने भी उठकर अर्घ्य आदि से उसका सत्कार किया। राजा से उसकी कुशल मंगल पूछी। तब उसने ऋषि से उत्तर में कहा-हे ऋषिदेव! आपकी कृपा से मेरे राज्य में सब कुछ कुशल है। लेकिन मैं कुछ पूछने को आया हूं। मेरे हृदय में कुछ संशय है। हे ब्रह्मन् देवता, जिस कर्म द्वारा मैंने शत्रुओं द्वारा निसकंटक राज्य को प्राप्त किया,

अश्व पायो, संध्यावली भार्य पाई-पृथ्वी विषै असी गुणशील आचार पतिव्रता और नहीं। और ही जिको देवता नूं दुर्लभ तिको म्हैं पायो, सू थे निश्चय कर कहो। म्हैं किसै पुण्य तैं पायो। इयै भांत रूकमांगद पूछियो थको रिसीस्वर मुहूर्त मात्र ध्यान करि राजा रै पूर्व जन्मांतर री वार्त्ता जाँणी।

तठा उपरांत रिसिस्वर हंसकर राजा सौं कहतो हुवो। हे राजन्—तूं जन्मांतर रै विषै अवनीपाल नाम शूद्र हंतो। महा-दरिद्र कर पीडित थो। भूंडी भार्य थी। कुछित कर्मा री कर्ता। अकस्मात् कहीं ब्राह्मणां री संगति हुई। तिकै ब्राह्मण वरसा-वरस ओ असून्यश्यन व्रत करता। तिकां रै प्रसंग सूं तै पण व्रत कीयौ तिकै रौ प्रताप छै। तै सब घर दोइ पर्यंत कियो-तिकै रा फळ छै।

धर्मांगद जैसा (गुणवान) पुत्र पाया, इच्छित स्थान पर ले जानेवाला घोड़ा प्राप्त किया, संध्यावली जैसी पत्नी प्राप्त की, पृथ्वी में जिसके समान गुणशीला, आचरण वाली पतिव्रता और कोई भी नहीं है। और भी जो चीजें जो देवताओं को दुर्लभ हैं वे सभी मुझे प्राप्त हुईं ऐसा व्रत आप मुझे निश्चय ही कहैं। मैंने कौन पुण्य प्रताप से इन्हें प्राप्त किये! इस प्रकार रुकमांगद के पूछने पर ऋषिदेव ने पल भर ध्यान लगाकर राजा के पूर्व जन्म की बात को समझली।

इसके उपरान्त ऋषिवर हँसकर राजा से कहने लगा। हे राजन्, तुम पूर्व जन्म में अवनीपाल नामक शूद्र थे। बड़ी दरिद्रता (गरीबी) के कारण दुःखी थे। तुम्हारी औरत बुरी थी। बुरे कर्मों को करने वाली थी। अकस्मात् तुम्हें किसी ब्राह्मण की संगति हो चली, वह (ऐसा) ब्राह्मण था जो कई वर्षों से यह 'अशून्य-शयन' करता आ रहा था।

श्रावण री द्वितीया कियां तै संपदा री प्राप्ति हुवै। भाद्रपद री द्वितीया कियां तै पुत्रां री प्राप्ति हुवै। आश्विन मासि री द्वितीया कियां तै भली स्त्री पावै। स्त्री करै तो भलो पुरुष पावै। ओ व्रत चंद्रोदय व्यापिनी द्वितीया करै।

ए राजा वचन रिसिस्वर रां सुनि आपरै नगर गयो। जायकर अशून्य-शयन व्रत करण लागो वरसां-वरस। तिकै सूं अतुळ कीर्ति, अतुळ बळ पायो। आ कथा सूत पौराणिक शौनकादिकां प्रति कही। तब रिसिस्वरां फेर प्रश्न कियो। हे सूत, ओ व्रत क्यूं कर उत्पन्न हुवो? कैं कियो? किसी विधि कर करणो? किसो फळ पाई जै?

तब सूत जी शौनकादिकां नै कहै—पुरा कल्पांतर रै विषै, भगवान मार्कंडेय रिसिस्वर नूं माया दिखाई। समुद्र, पृथ्वी,

---

उसी के प्रभाव से तुमने भी यह व्रत किया। उसी का यह प्रताप है। तुमने दो वर्ष तक किया, उसका फल है।

श्रावण की द्वितीया करने पर सम्पदा की प्राप्ति होती है। भाद्रपद की द्वितीया करने पर पुत्रों की प्राप्ति होती है। आश्विन-मास की द्वितीया करने से अच्छी (अच्छे आचरण वाली) स्त्री प्राप्त होती है। स्त्री यदि इस व्रत को करेगी तो उसे अच्छा गुणवान पुरुष (पति) प्राप्त होगा। यह व्रत चन्द्रोदय व्यापिनी द्वितीया को करो (याने शुक्ल-पक्ष की द्वितीया को करो)

यह वचन सुनकर राजा अपने नगर को आया। आकर कई वर्षों तक 'अशून्य-शयन' व्रत करने लगा। जिसके कारण अतुल कीर्ति और अतुल बल उसे प्राप्त हुआ। यह कथा प्राचीन काल में सूत ने शौनकादिक (ऋषि लोगों) के प्रति कही थी। तब ऋषिवरों ने

जळ-जळात्कार करि आप एकै पद्म रै पानरौ पौंधौ करि तिकै मांहि सूता; तिकै समै मार्कंडेय श्री भगवान सूं प्रश्न कीयो। हे ब्रह्मन्—थे ओसे पद्म रै पलंक उपरि रख्या रो करण हार कूण छै। थाने स्तन-पान कूण दे छै। कूण थांहरौ भरण-पोषण करै छै ? थे कठा सूं उत्पन्न हुवा छौ। हे बाळक, सर्व निश्चय करि कहो ।। १ ।।

हमैं बाळक रूप भगवान कहै छै—हे रिसि, ऐ सर्व म्हैंहीज उत्पन्न कीया छै। ब्रह्मा, इन्द्र, महादेव, आदित्य, बसव, रुद्रा, रिसिस्वर, दिग्पाळ, लोकपाळ, गंधर्व, नाग, राख्यस, पिशाच, राजान, पर्वत, विद्याधर, ग्रहा, पाताळ, पृथिवी, भूरादिचतुर्दश लोक, नख्यत्र, जोग, रासि, तारा, जळरासि, वात, अग्नि। और ही स्थावर, जंगम जीव ए सर्व म्हैंही तैं उत्पन्न हुवै। म्हैंही

फिर प्रश्न किया। हे सूत ! यह व्रत किस प्रकार उत्पन्न हुआ ? किसने इसे (पहले पहल) किया ? कौन सी विधि से इसे करना चाहिये ? इससे कौन-सा फल मिल सकता है ?

तब सूत जी शौनकादिकों से कहते हैं—बहुत ही प्राचीन काल में भगवान ने मार्कण्डेय ऋषि को अपनी माया दिखाई। समुद्र, पृथ्वी और जल सबको जल-मग्न कर स्वयं एक कमल के पत्ते को झूला बनाकर उसमें सो गये। उस समय मार्कण्डेय ने भगवान से प्रश्न किया—हे ब्रह्मन्, आपका इस प्रकार कमल के पत्ते पर (शयन करते समय) आपकी रक्षा कौन करेगा ? आपको कौन स्तन द्वारा दुग्धपान करवायेगा ? कौन आपका भरण-पोषण करेगा ? आप कहाँ से पैदा हुए हैं ? हे बालक—सब निश्चय पूर्वक कहिये।

अब बालक रूप भगवान कहता है—हे ऋषि, यह सब मैंने ही उत्पन्न किये हैं। ब्रह्मा, इन्द्र, महादेव, आदित्य, रुद्र, ऋषिवर, दिग्पाल,

विषै लीन हुवै। म्हैंही पाळन हुवै छै। हे रिसि, तूं म्हौं नूं वृद्धि जांणै न छै। बाळक कहै छै।

तब मार्कंडेय कहन लागो—हे महाराज थांरी उतपति हूं न जाणूं। थांरी विभूति कर्णां करि सुनी छै। तत् कारणात, हे सुरोत्तम थांहरी किरपा सूं थांहरी हूं स्तोत्र वाचन करीस, सूत जी शौनकादिकां प्रति करै छै। इयै भांत सूं मार्कंडेय कहतां थकांहीज सारां लोकां रै सुख का वहणहार भगवान मुख प्रसार उवासी मात्र मुनि नूं मुख मांहि ग्रासन कियो। मुख मांहि प्रविष्ट थको रिसि नै उदर मांहि दौडतै थकै नै बरस एक सौ पांच व्यतीत हुवा। तिकौ रिसि धर्मात्मा बाळक रै उदर मांहि बैठ रह्यौ। तथा उपरांत निराश हुवो थको स्तुति करण लागो। तब रिसि स्तुति करै छै—तूं सारां भूत-मात्र प्राणियां रौ माता छौ।

लोकपाल, गंधर्व, नाग, राक्षस, पिशाच, राजा लोग, पर्वत, विद्याधर, ग्रह, पाताल, पृथ्वी, भूतादि, चतुर्दश लोक, नक्षत्र, जोग, राशि, तारा, जलराशि, वात, अग्नि। और भी जड़-चेतन यह सब मुझ से ही उत्पन्न हुए हैं। मेरे ही में लीन होते हैं। मेरे द्वारा पालन किये जाते हैं। हे ऋषि—तुम मेरी वृद्धि जानते नहीं हो। (अतः मुझे) बालक कहता है।

तब मार्कण्डेय कहने लगा—हे महाराज, मैं आपकी उत्पत्ति के विषय में नहीं जानता। आपकी महिमा कानों से सुनी है। इस कारण हे देवादिदेव! मैं आपके स्त्रोत्र आपकी कृपा से करूंगा, सूत जी शौनकादि के प्रति कहते हैं—

इस प्रकार मार्कण्डेय के कहने पर भगवान ने मुंह फैलाकर, उबासी मात्र से ही मुनि को अपने मुंह में रख लिया। मुख में प्रविष्ट होते हुए ऋषि को (भगवान के) पेट में भागते-दौड़ते १२५ वर्ष व्यतीत

तूंहीज पिता छौ । गुरु रूप तूंहीज छै । जी वेदादिकां रै उद्धार रो करण हार थेहीज छौ । जी थांहरै उदर विषै प्रविष्ट हुवै थकै म्हैं उदर रौ पान पायो । एक सौ पांच बरस भ्रमकर थांहरै शरण आय प्राप्त भयौ । हे देव देवेश, हे शंख चक्र, गदाधारी, म्हों नूं रख्या करौ । हे कमळा कांत प्रसन्न हुवो । हे मधुसूदन प्रसन्न हुवो । जगतां नाथ, हे गरुडध्वज, हे पुण्डरीकाक्ष, हे जळशायिन, थांहरी तांई नमस्कार हुवौ । थे देवतां, दैत्यां रा भर्त्ता छौ । मनुष्याणां का कथा नरक हूंता उद्धारण विषै थां हूंता परै और समर्थ कोई नहीं । तब भगवान कहै—हे ब्रह्मन् रिख, थारी स्तुति कर तैं ऊपरि हूं संतुष्ट हुवौ । तूं म्हैंहूंता वर मांगि ! जो थारै मन भांति वांछित छै तिकौ मांगि ।

तब मार्कण्डेय कहै—हे देव, हे चतुर्भुज, जो थे म्हौं ऊपरि तुष्ट छौ तो अशून्यशयनाम व्रत कहो । तिको व्रत व्रतां मांहि

होगये । वह ऋषि, धर्मात्मा वालक के पेट में बैठ गया । इसके उपरान्त निराश होता हुआ, भगवान की स्तुति करने लगा । तब ऋषि स्तुति करता है—तू सभी भूत-प्राणियों का, प्राणियों की माता है, तू ही पिता है । गुरु रूप में भी तुम्हीं हो । वेद आदि के उद्धार के आपही करने वाले हैं । आपके उदर में (पेट में) प्रविष्ट होकर मैंने आपके उदर से ही पान किया है ।

एक सौ पांच वर्ष घूम-भटककर आपकी शरण आकर प्राप्त हुआ हूँ । देवदेवेश, हे शंख, चक्र, गदाधारी मेरी रक्षा करें । हे लक्ष्मीपति (आप) प्रसन्न होवें । हे मधसूदन, आप प्रसन्न होवें । हे जगत के नाथ, हे गरुड़-ध्वज, हे पुण्डरीकाक्ष, हे जल-शायन, मैं आपके प्रति नमस्कार करता हूं । आप, देवता और राक्षसों के भर्त्तार हैं । मनुष्यों को नरक-लोक से उद्धार करने में आपके होते दूसरा कोई भी सामर्थ्यवान नहीं है ।

उत्तम छै जी। तिकै व्रत कीयां शयन कहावै। शय्या तिका शून्य न हुवै। अर्थात् सौभाग्य घणौ हुवै, तिको कहो। तद् श्री भगवान कहै, रिखि ओ व्रत किहीं ना म्हैं कह्यौ न छै। न संसार में विख्यात छै—तिकौ तनूं कहूं छूं। तूं एकाग्रमन सूं श्रवण कर। संखरा श्रेष्ट दिनां मांहै आरंभ करै। प्रथम श्रावण वदि द्वितीया सूं मास च्यार व्रत करै। चंद्रमा उदय हुवै बीज मैं तिका द्वितीया करै। प्रातकाल नित्य नैमित्तिक करि दिन रो व्रत करणौ।

पश्चात् चंद्रमा उदय हूंता पैहली गोमयरी चोको दे तिण ऊपर अष्टदळ चावळा रौ करि तिकै ऊपरि पात्र एक पूर्ण तांबै रौ तिकै मांहि मूर्ति श्री लखमीनाथ जी री स्थापति करणी। पात्र

तब भगवान कहते हैं—हे ब्रह्मन ऋषि! मैं तुम पर स्तुति करने के कारण बड़ा ही संतुष्ट हुआ। तुम मुझ से वर माँगो, जो तुम्हारी मन की इच्छा हो, वही माँगो।

तब मार्कण्डेय ने कहा—हे देव, हे चतुर्भुज, यदि आप मुझ पर प्रसन्न हैं, तो मुझे आप 'अशून्य-शयन' व्रत का वर्णन कहें। यह व्रत सभी व्रतों में उत्तम है। जिस व्रत के करने से शयन कहता है—(व्यक्ति) उसकी शय्या कभी शूनी नहीं होती। अर्थात् उसका बड़ा सौभाग्य रहता है, वही कहें। तब भगवान् कहते हैं—यह व्रत मैंने किसी से भी कहा नहीं है। संसार में भी यह विख्यात नहीं है, वह मैं तुम्हें कहता हूँ। तुम इसे एक-चित्त होकर सुनना। अच्छे शुभ दिनों में इसे प्रारम्भ करना। पहले श्रावण की कृष्ण पक्ष की द्वितीया से चार महीनों तक व्रत करना। जिस दूज को चन्द्रमा उदय हो, उसी द्वितीया को करना। प्रातःकाल हमेशा के दैनिक कार्यों से निवृत होकर दिन में व्रत करना (चाहिए)। फिर चन्द्रमा के उदय होने पर पहले गाय के गोबर का

मांहि जळ राखणौ । जळ मांहि पधरावणी विधि संजुगत प्रतिष्ठा कीजै । पछै केशर सूं पूजै । पछै भक्ति सूं पूजा करि विज्ञप्त घणी कीजै । हे देव, अशूशयन देहि पुत्र, दार, धन-धान्य करि पूर्ण । पछै अगर, कपूर, चंदन, सुगंध लेपन ग्रहण करणौ । जायरा फूल, शत पत्र, कमळ, माळति भृङ्गराजक, तुळसी रा पत्र, बीजा ही उत्तम फूल समर्पण कीजै । धूप-दीप, नैवेद्य, मुखवास समर्पण कीजै । फळां विशेष पूजा कीजै । फळ च्यारां द्वितीयां नूं नवा-नवा फळ समर्पण कीजै । तिकै सूं फळ द्वितीया कहै, जै नाम अशून्य शयन व्रत रौ छै । पछै दख्यणां, तांबूल, आचमन समर्पीजै । पछै अर्घ्य कीजै । एकै पात्र मांहि जळ, गंध, फूल, सौपारी, अख्यत ग्रहण कर ओ पढ़ीजै—हे कृष्ण हृषीकेश, हे देव-जगतरा पिता, थे लखमी सहित म्हैं दियौ तिकौ अर्घ्य थे

चौका देकर उस पर चावलों द्वारा अष्ट-दल बनाकर, उस पर ताँबे का पात्र धरना चाहिए। उसके अन्दर श्री लक्ष्मीनाथ जी की मूर्ति स्थापित करनी चाहिए। (उसे) पात्र में रखना चाहिए। जल में युक्ति सहित उसे पधरानी चाहिए। फिर केशर से पूजा करना। फिर भक्ति सहित पूजा कर, बहुत-सी विनती करनी। हे देव, हे अशून्यश्यन, आप हमें पुत्र, स्त्री, धनधान्यसे पूर्ण करें—फिर अगर,कपूर, चंदन, सुगन्ध, लेपन आदि करना। जायके फूल, शत पत्र, कमल, मालती भृङ्गराज तुलसी पत्र, और भी प्रकार के उत्तम फूल (भगवान को) समर्पण करना। धूप, दीप, नैवेद्य, मुख-वास आदि समर्पण करना चाहिए। चारों ही द्वितीयाओं को नये-नये फल समर्पण करने (चाहिए)—इसी कारण फल द्वितीया यह कहलाती है—नाम इसका 'अशून्य-शयन' का है। फिर दक्षिणा, पान-आचमन समर्पण करना चाहिए। फिर अर्घ्य देना चाहिए। एक बर्तन में जल, गंध, फूल, सुपारी, अक्षयत लेकर यह (इस प्रकार) पढ़ना चाहिए—हे कृष्ण हृषीकेश, हे देव, जगत के पिता, आप, मैंने जो

ग्रहण करो। इतरी प्रार्थना करि, भगवान रै आगै समर्पये। पछै चंद्रमा री पूजा करि चन्द्रमा नूं अर्घ्य दान करै। क्षीर सागर विषै उत्पन्न हुवो, अत्रि गोत्र विषै जनम, हे शशांक तूं रोहिणी सहित अर्घ्य रौ ग्रहण करि। इयै भांत मास रै विषै करणो। कार्त्तिक विषै उद्यापन करै विधिकर संयुक्त।

तब मार्कंडेय कहै—हे भगवान, व्रत रै दिन भोजन कासूं कीजै, त्यागजै कासूं, दान कया दीजै? उद्यापन (किसी व्रत की समाप्ति पर किया जाने वाला कृत्य हवन, ब्राह्मण भोजन आदि) किसी भाँति कीजै। फळ कासूं हुवै, तिकौ निश्चय करि कहवौ। तब श्री भगवान् कहै—हे रिष, हविष्यान्न (सास्वत भोग) भोजन करै, घृत, गुर, शर्करा संयुक्त। दधि, छाछ बर्जती, गेहूँ,

---

अर्घ्य समर्पण किया है—उसे स्वीकार करें। इतनी प्रार्थना करके भगवान् के आगे इन्हें समर्पण कर दे। फिर चन्द्रमा की पूजाकर चन्द्रमा को अर्घ्य दान दे। क्षीरसागर में उत्पन्न हुए, अत्रि गोत्र में जन्म है (जिसका) ऐसे हे शशांक-आप रोहिणी सहित अर्घ्य को ग्रहण करें। इस प्रकार महीने के भीतर करना। कार्तिक के महीने में विधि-सहित उद्यापन करना।

तब मार्कण्डेय कहते हैं—व्रत के दिन भोजन किस से करना चाहिए? त्यागना क्या चाहिए? दान में क्या देना चाहिए? किस प्रकार उद्यापन करना चाहिए? फल की प्राप्ति किस से हो, वही निश्चय पूर्वक कहें। तब श्री भगवान् कहते हैं—हे ऋषि, सात्विक भोजन करे घृत, गुड़, शक्कर युक्त। दही और छाछ निषेध—गैहूँ और जव खाने चाहिए। इसमें से आधा ब्राह्मण को देना, आधा भाग स्वयं खाना चाहिए। व्रत के दिन, काम, क्रोध, मद और मोह का त्याग करना चाहिए। कथा को सुनना—इस प्रकार व्रतकर चौथे वर्ष अथवा सोलवें वर्ष

जव खावणा। आधो ब्राह्मण नूं देणौ। आधो आप खाणौ। व्रत रै दिन काम, क्रोध, लोभ, मोह रौ त्याग करणौ।

कथा रौ श्रवण करणौ। ईयै भाँत सूं व्रत कर चौथे बरस अथवा सौळे बरसै उद्यापन करणौ। उद्यापन बिना व्रत रौ पूर्ण नाहीं तिके सूं अवश्य उद्यापन करणौ। ब्राह्मण री आज्ञा लेकरि शास्त्रोक्त विधि सूं करणौ। होम करणौ। ब्राह्मण री छहांरी वरणी अथवा असमर्थे च्यारां री। गोदान, वस्त्र स्त्री पुरुष रा, आभूषण स्त्री पुरुष रा,ब्राह्मण नूं दैवै। शय्या दान,सीरख पथरणा उसीसा सारी उपस्कर सामग्री संयुक्त सपत्नीक सहित ब्राह्मण नूं। ब्राह्मण सौळे भोजन खीर खांड सूं दख्यणा सहित, एका आपरी शक्ति सारु सुवर्ण रौ कळश दूध भर, मांहि सुवर्ण घाति, सावट्ट वस्त्र

उद्यापन करना चाहिए। उद्यापन बिना व्रत सम्पूर्ण नहीं होता। इसलिए उद्यापन तो अवश्य ही करना चाहिए। ब्राह्मण की आज्ञा लेकर शास्त्र की विधि से करना चाहिए। होम करना चाहिए। छः ब्राह्मणों को वरणी बैठाना (माला फेरने के लिए वैठाना) यदि असमर्थ हो तो फिर चारों को बैठाना। गोदान, वस्त्र–स्त्री पुरुष के, आभूषण–स्त्री पुरुष के, ब्राह्मण को देने चाहिए। शय्या दान, रजाई, बिछौना, छोटा तकिया, अपनी शक्ति अनुसार सपत्नीक ब्राह्मण को देना चाहिए। ब्राह्मण को सोलह प्रकार के भोजन, खीर–खाण्ड सहित करवाना चाहिए उसे दक्षिणा देनी चाहिए। अपनी शक्ति अनुसार एक सोने का पात्र दूध भर कर उसमें सोना डालकर, ऊपर से पीले–रेश्मी कपड़े से उसे लपेटकर, ब्राह्मण को देना चाहिए। ऐसा ब्राह्मण जो वैष्णव हो, कुटुम्बी हो, स्त्री हीन न हो, तपस्या का करने वाला हो, योग्य हो, विद्यावान हो, ऐसे ब्राह्मण को देना चाहिए। यदि सोने का पात्र बनवाने की शक्ति न हो तो, ताँबे अथवा मिट्टी का पात्र बनवाना

सूं वींटी ब्राह्मण कोई वैष्णव हुवै, कुटंबी हुवै, स्त्री हीन न हुवै, तपस्या रौ करण हार हुवै, पात्र हुवै, विद्या पात्र हुवै, तिकै नूं देणौ। सुवर्ण री शक्ति न हुवै तो तांबै रौ अथवा माटी रौ पण करणौ। पछै आप भोजन करै–मन प्रसन्न सूं च्यार वरस व्रत कर ईयै भांति सूं उद्यापन करै।

श्री कृष्ण कहै—हे युधिष्ठिर, जिकै ईयै भाँति करि, उद्यापन करै, तिनकै रै फळ री प्राप्ति हुवै। तिकौ सुणै, सूर्य ग्रहण विषै कुरुख्येत्र मांहि जाइ पितृ–तर्पण करै, तिकै नूं कोई पुण्य हुवै, तिकौ पुण्य री प्राप्ति हुवै। तिकौ गया जाय पितृश्राद्ध करै, गिलिका विषै जाय स्नान करै, तिकै फळ रौ भोगणहार हुवै। मथुरा मंडल विषै पंच भीषम मांहि जाई, भगवान रै आगै जागरण

चाहिए। इसके बाद फिर स्वयं भोजन करे। प्रसन्नचित्त होकर चार वर्ष तक इसी प्रकार से व्रत करे और इसी प्रकार से उद्यापन करता रहे।

श्री कृष्ण कहते हैं—हे युधिष्ठिर, जो व्यक्ति इस प्रकार करता है, उसे फल की प्राप्ति होती है। जो (व्यक्ति) इसे सुने उसे सूर्य ग्रहण के समय कुरुक्षेत्र में जाकर पितृ–तर्पण करने का जो पुण्य लाभ होता है, उसी पुण्य की प्राप्ति हो। जो व्यक्ति गया जाकर पितृ–श्राद्ध करता है, गिलिका में जाकर स्नान करता है, उसी ही पुण्य के फल को भोगने वाला हो। मथुरा–मंडल में जाकर पंचभीषम जाकर जो व्यक्ति भगवान के आगे जागरण करता है, वैसे ही फल की प्राप्ति इसके करने से हो। मथुरा में प्रबोधनी का जागरण करने से, नेमिषारण्य में, गंगा–सागर समुद्र में, गंगा में, हरिद्वार में, सिन्धु के पञ्चनद में, गोदावरी नदी में, वृहस्पति सिंह राशि में हो तब, बदरीका आश्रम में, केदारनाथ में इन स्थानों में जाकर कोई स्वर्ण–दान करता है अथवा पृथ्वी दान करता है,

करै तिकै रो फळ हुवै, तिकौ फळ भोगवै। मथुरा विषै प्रबोधनी रै जागरण कीयां नैमिषारण्य विषै, गंगा सागर समुद्र विषै, गंगा द्वार हरि विषै, सिंधु पंचतद विषै, गोदावरी विषै, वृहस्पति सिंघ राशि विषै हुवै, बदरिका श्रम विषै, केदार नाथ विषै, इहां स्थानां विषै जाई कोई सुवर्ण री, पृथ्वी दान करै तिकै नूं पुण्य हुवै,तिकै फळ रौ भोगणहार हुवै;जळशायी भगवान पूजियां तिकौ फळ पावै। जिकौ विधान करि करै,ओ व्रतां मांहि उत्तम तिकौ यमलोक न देखै। भली गति नूं प्राप्त हुवै, निश्चय सूं। ब्राह्मण करै तो ज्ञान पावै। राजा करै तो जय पावै। स्त्रियां करै तो सात जनमांतर रै विषै दुर्भाग न पावै। धन-धान्य, पुत्र-पौत्र घणौ पावै। भायां रौ, भरतार रौ सुख पावै, ईयै व्रत कियै। और ही मनोवांछित फळ पावै। सूत जी, शौनकादिका नूं कही। मार्कंडेय रिखि नूं व्रत भगवान कह्यौ। तापछै संसार मांहि विख्यात हुवौ। शौनकादिक

उसे जो पुण्य होता है, उसी प्रकार के फल का भोगने वाला (इस प्रकार के व्रत को करने वाला) हो, 'जल–शयन' भगवान के पूजन करने पर उसे फल मिले। जो व्यक्ति विधि-विधान से यह व्रतों में जो उत्तम व्रत है उसे करता है—वह यमलोक को नहीं जाता। यदि ब्राह्मण इसे करता है, वह ज्ञान–लाभ करता है। राजा करे तो उसे विजय-लाभ होती है। स्त्रियां करती हैं तो वे सात जन्म–जन्मान्तर तक दुर्भागन (विधवा) नहीं होती और धन–धान्य तथा बहुत से पुत्र–पौत्र वाली होती हैं। उन्हें भाइयों, भर्तार का सुख मिलता है, इस व्रत को करने पर और भी बहुत से मनोवांच्छित फल को पाती हैं—सूतजी ने शौनकादिक को ऐसा कहा। मार्कण्डेय ऋषि को भगवान ने यह व्रत कहा। इसके उपरांत संसार में यह विख्यात हुआ। शौनकादिक भी यह सुनकर अपने आश्रम को गये। राजा युधिष्ठिर ने भी भगवान श्रीकृष्ण के मुँह से इसका महात्म्य सुनकर पाँचों भाइयों और द्रोपदी के साथ

पण सुणिकर आपणै आश्रम गया। राजा युधिष्ठिर श्री कृष्ण रै मुखहुंता महात्मय सुणि पांचां भायां द्रौपदी सहित व्रत अशून्य-शयन कियौ, तिकै वनवास रै विषै तिकै व्रत रै प्रताप वन रौ संताप दूरि करि। आपरा बैरी जाय करि निकंटक राज्य पायौ। श्री कृष्ण री कृपा सूं व्रत रै पुण्य सूं।

इति श्री फळ द्वितिया कथा सम्पूर्ण।

इस 'अशून्य-शयन' व्रत को किया, जिससे वनवास काल में इसी व्रत के प्रताप से (प्रभाव से) उनका संताप दूर रहता रहा, अपने शत्रुओं को विजय कर, निष्कंटक राज्य को प्राप्त किया—श्री कृष्ण की कृपा से एवं इसी व्रत के पुण्य के कारण।

इति श्री फल द्वितिया कथा सम्पूर्ण।

१२—बुधाष्टमी कथा

श्री गणेशायनमः । अथ बुधाष्टमी कथा लिख्यते । युधिष्ठिर उवाच—हे कृष्ण, मैं थाकनै अनेक व्रत सुणीया छै । हिमै बुधाष्टमी रो व्रत सुणीया चाहु छुं-थे प्रसन्न हुइ कहो । श्री भगवानुवाच—बुधाष्टमी रै दिन नदी जाइ स्नान करि, आपणौ षटकर्म करै । तठा पछै आपरै घरै आइ चौको देकरि, चउरस मांडलो करि, इण विधान सुं व्रत करै, तिका विधि कहै छै । अष्टदळ कमळ अक्त तांसु चौकै ऊपर मांडीजै । विचालै कुंभ थापीजै । पीळै वस्त्र सुं वींटीजै । मांहि नीळा पान घातीजै, ऊपर चंदन सु चरचीजै । मासै एक सुवर्ण री अथवा आध मासै सोनै री बुध री प्रतिमा करीनैं इण विधि सुं पूजीजै । हे युधिष्ठिर इण मंत्र सुं बुधरौ आवाहन कीजै ।

कथा बुधाष्टमी की

युधिष्ठिर ने कहा—हे कृष्ण मैंने आपसे कई व्रत (व्रत कथाएँ) सुने हैं । अब मैं बुधाष्टमी का व्रत सुनना चाहता हूँ—आप प्रसन्न होकर कहें । श्री भगवान् बोले—बुधाष्टमी के दिन नदी पर जाकर स्नान करके अपने षट-कर्म करना । उसके बाद अपने घर आकर, चौका देकर, चौकोर माण्डना मांडकर, इस विधि से व्रत करना—जो विधि कह रहा हूं । अष्टदल, कमल, अक्षत आदि से चौके पर माण्डना मांडना । उसके बीच में घड़ा स्थापन करना । उसे (उस घड़े को) पीले वस्त्र से लपेटना । उसके भीतर नीले पत्ते डालना, ऊपर चन्दन के छींटे डालना । एक माशा अथवा आधे माशे की सोने की बुध की मूर्ति बनाकर इस विधि से पूजा करना । हे युधिष्ठिर इस मंत्र से अभिसित करना ।

बुधः सौम्यस्तार केशोराजपुत्र इलापतिः ।
कुमारो राजमानश्चयः पुरूरवसः चिता ।
उर्वस्याः श्वशुरोयश्च स बुधोनः प्रसीद तु ॥१॥

इण मंत्र सु' आवाहन कीजै, पछै इण मंत्र सु' अष्टांग पूजीजै–

नमो बुधाय चरणौ १ सोम पुत्राय जानुनी २ तारेशाय कटिं पूज्य ३ राज पुत्राय भूदरं ॥४॥ बाहू पुरूरवः पित्रे ५ उर्वश्याः श्वशुरायच मुखं सं पुजयेद्भक्तया ॥६॥ ग्रहाय नयन द्वयं ७ बोधनायेति मूर्द्धान ८ मष्टांगेत्वर्चये द्बुधं ॥१॥

इसी भांति बुध देवतारी पूजा करि पछै वेदरौ जाण इसे ब्राह्मण नै दक्षिणा देकरि अक्षत वस्त्र समेत ब्राह्मण नै समर्पण कीजै । इण मंत्र सु' विसर्जन कीजै ।

बुधः सौम्यस्तार केशो राजपुत्र इलापतिः ।
कुमारो राजमानश्चयः पुरूरवसः चिता ।
उर्वस्याश्वशुरोयश्च स बुधोनः प्रसीदतु ॥१॥

इस मंत्र से आहवान करना फिर इस मंत्र से आठों अंगों सहित पूजा करना—

नमो बुधाय चरणौ ॥१॥ सोम पुत्राय जानुनी ॥ २ ॥
तारेशाय कटि पूज्य ॥३॥ राज पुत्राय भूदरं ॥४॥

बाहू पुरुरवः पित्रे ५ उर्वश्याः श्वशुराय च मुखं सं पूजयेद्भक्तया॥६॥
ग्रहाय नयन द्वयं ७ बोधनायेति, मूर्द्धान ८ मष्टांगे लर्चये द्बुधं ॥१॥
इस प्रकार बुध भगवान की पूजा करने के उपरान्त वेदों के जानने वाले ब्राह्मण को दक्षिणा देकर उसे अक्षत और वस्त्र समर्पित करना चाहिए—

बुधीयं प्रति गृह्णाति, द्रव्य स्थोपि बुधः स्वयं ।
दीयते च बुधे नैव, प्रीयतां में बुधो ग्रहः ॥१॥

बुघोयं प्रति गृह्णाति, द्रव्य स्थोपि बुधः स्वयं।
दीयते च बुधेनैव, प्रीयतांमे बुधोग्रहः ॥ १ ॥
दुर्बुद्धि दुरितं दुःख नाशयित्वा बुधो मम।
सौख्यं पुत्रान्सौ मनस्यं करो तु शशिनदवः ॥ २ ॥

जिण मास मैं चांदणै पक्ष बुधवार हुवै, तिण दिन ओ व्रत कीजै। युधिष्ठिर उवाच–हे कृष्ण, इण व्रत रौ महातम मोनैं प्रसन्न हुई विस्तार सौं कहो। श्री कृष्ण उवाच–सुणि युधिष्ठिर बुधाष्टमी व्रत रौ महातम हुं कहुं छुं। जिण व्रत सुं मनुष्य नरक कदेही देखै नहीं। इण व्रत रौ इतिहास कहुं छुं। पूर्व कृत युग मांहे इलापति नामैं राजा हुतौ। घण चाकर मित्र-मंत्री समेत हिमाचल पर्वत समीपै एकदा समैं आय नीकल्यौ। उठै महादेव जी री आग्या छै, जिकौ पुरूष उण वन मैं आवै, तिकौ इस्त्री हुइ जावै।

दुर्बुद्धि दुरितं दुःख, नाशयित्वा बुधो मम।
सौख्यं पुत्रान्सौ मनस्यं, करोतु शशिनदनः ॥२॥

जिस महीने में शुक्लपक्ष हो और बुधवार हो, उस दिन इसप्रकार का व्रत करना चाहिए। युधिष्ठिर बोला—हे कृष्ण, इस व्रत का महात्म्य सुनकर मुझे प्रसन्नता हुई, इसे विस्तार से कहें। श्री कृष्ण ने कहा—हे युधिष्ठिर सुनो, मैं बुधाष्टमी का व्रत कहता हूं, जिससे मनुष्य कभी भी नर्क की यातनाएं नहीं भोग सकता। इस व्रत का इतिहास कहता हूं।

पहिले युग में इलापति नामक एक राजा हुआ। बहुत से नौकरों व मित्रों और मंत्रियों के साथ वह एक दफा हिमालय पर्वत के पास आकर ठहरा। वहां महादेव जी की आज्ञा थी कि जो पुरुष उस वन में आ जाय, वह स्त्री बन जाय। इस बीच में राजा हिरणी की शिकार के लिए घोड़े पर बैठा उस वन में आ घुसा। घुसने के साथ ही (जैसे

तिण प्रस्ताव राजा मृगरी सिकार रै वास्तै उवा वन मैं एका की छोडै चढीयो वन मैं पैठो। पैठन समान अस्त्री रूप हुइ गयौ। हिमैं तिका स्त्री वन मैं भ्रमण करै, सु युं न जाणै हुं कुण छुं, कठै आई, दिसा भूली हुइ गई। उण समैं बुध देवता उवा इस्त्री दीठी, महा रूपवंत अनेक गुण युक्त देखि नैं प्रसन्न हुवौ। अष्टमी बुधवार रै दिन तुष्टमान हुइ नै उण स्त्री सुं गृहवास कीयौ। कितरेक दिन उण इस्त्री रै पुत्र हूवौ, जिण रौ नाम पुरूरवा दीयौ। चंद्रवंश रौ करणहार, सगळां ही राजा मांहे मुख्य हुवौ। तिण दिन सुं आ बुधाष्टमी पूज्य हुई-सर्व मनोवांछित री पूरणहार, सर्व पाप री हरणहार छै। हिमै श्री कृष्ण बुधाष्टमी रौ इतिहास कहै छै। मिथिला नाम नगरी मैं निमि नामैं राजा हुओ, तिको राजा संग्राम मैं बलवंत वैरीयै हण्यौ, राज्य छै सौ शत्रवै लीयौ।

ही वह यहाँ बैठा) वह स्त्री रूप बन गया। अब वह स्त्री बन में घूमने लगी, उसे यह ज्ञात नहीं, मैं कौन हूँ ? कहां आ गई ? दिशा भूली हुई वह आगे को बढ़ी। उस समय बुध देवता ने उस स्त्री को देखा। बड़ी रूप वाली (अति सुन्दर) और अनेकों गुणों से युक्त, उसे देखकर उसपर प्रसन्न हुए। अष्टमी को बुधवार के दिन उस पर तुष्टमान (प्रसन्न होकर) उस स्त्री से संभोग किया।

कुछ दिनों के उपरान्त उस स्त्री के लड़का हुआ, जिसका नाम पुरुरवा रखा गया। वह चन्द्रवंश का प्रकाशन स्थापन करने वाला ? वह सभी राजाओं में प्रधान रहा। उस दिन से यह बुधाष्टमी पूज्यनीय मानी गई। यह सब प्रकार की मन की इच्छाओं को पूर्ण करने वाली है, सब पापों को हरने वाली है।

अब श्री कृष्ण बुधाष्टमी का इतिहास कहते हैं। मिथिला नाम नगरी में निमि नाम का राजा हुआ, उस राजा को युद्ध में बलवान

तिणरी अस्त्री दरिद्रणी ऊर्मिला नामैं दोय बाळक समेत पृथ्वी रै विषै भ्रमण करै छै । उजेणी नगरी मांहे ब्राह्मण रै घरै आई । ऊर्मिला पेट भराई निमित्त ब्राह्मण रै घरै पीसणो खांडणो करै छै । एकै समीयै सात ७ गोहूं चोरिनैं दोऊं बाळकां नै भूखा जाणि दीया । इयै भांति आपरो नै दोउं बाळकां रो भरण-पोषण करती कितरेक दिने ऊर्मिला परोक्ष हुई । उणरा पुत्र मिथिला नगरी जाइनैं आपरै पिता रो राज्य लीयो । पुण्य योग सुं भली तरै राज पाळै छै । आपरी बहिन थी-सो धर्मराज नै परणाई । धर्मराज एकै समीयै आपरी अस्त्री नुं कहण लागो-अस्त्री रूप मैं श्याम थी । हे श्यामे ! तूं म्हारा घर मैं चाकरां नै दान-मान कीया कर । भली भांति रह्या कर । वळे तूं सुणि-म्हारा घर मांहे सात विवर छै । सात ७ ताळा जड्या छै, तिकै तूं

बैरियों ने हराया, उसका जो राज्य था वह शत्रुओं ने ले लिया । उसकी स्त्री दारिद्रणी (भिखारिन) उर्मिला नाम की अपने दोनों लड़कों सहित पृथ्वी पर भ्रमण करती है । वह नगरी में एक ब्राह्मण के घर में आ गई । उर्मिला अपना पेट भरने के लिए (गुजारे के लिए) ब्राह्मण के यहाँ पीसना आदि (कार्य) करती है । एक समय अपने दोनों बालकों को भूखे समझ कर उसने सात गेहूँ (गेहूं संख्या में सात) उन्हें खाने को दिए । इस प्रकार अपना और अपने बालकों का पालन-पोषण करती हुई कुछ दिनों के बाद उर्मिला इस संसार से चल बसी । उसके पुत्रों ने मिथिला नगरी में जाकर अपने पिता का राज्य संभाला ।

अच्छे पुण्य के कारण अच्छी प्रकार से राज्य करता है । अपनी बहन थी वह उसने धर्मराज को विवाह दी । धर्मराज, एक समय अपनी स्त्री से कहने लगे-स्त्री रंग रूप की श्याम वर्ण की थी । हे श्यामे ! तू मेरे घर में नौकरों को दान-पुण्य खूब दिया कर । बड़ी अच्छी प्रकार

उघाडै मत। तद अस्त्री बोली–भलां स्वामी, कोई उघाडु' नहीं। एकदा समै धर्मराज कीणही कार्य लागौ, तद एक विवर अस्त्री उघाड्यौ। मांहे आपरी माता दीठी। यम किंकर मारै छै। आक्रंद करै छै– वातै तेल मैं पचावै छै। श्यामला माता नैं इसी अवस्था देखि नै चितातुर हुई। वळै एकै समीयैं बीजो ताळो उघाडीयौ। आगै देखै तौ उण मांहे पिण आपरी माता नै पथर सौं, शिला सौं यम किंकर ताड़ै छै। वळै तीजो ही विवर उघाडोयौ। आगै देखै तौ आपरी मांनै करवत सौं माथौ विदारै छै। कोरडां मारै छै। वळै चौथौ विवर उघाडीयौ, उठै यमदूत कूतै रौ रूप करि माता रा पग काटै छै, आक्रंद करै छै। युं पांचमो विवर उघाडीयौ। आगै देखै तौ माता रै गळै ऊपरा पग देनैं मुदगरां सुं कूटै छै। वळै छठो ही विवर उघाडीयौ आगै

से रहा कर। और सुनो, मेरे घर में सात कोठे हैं। और सात ही ताले लगे हैं, उन्हें तुम खोलना मत। तब स्त्री ने कहा—अच्छी बात, मैं उन्हें नहीं खोलूंगी।

एकदफा, धर्मराज किसी काम में लग गया, तब स्त्री ने-एक कोठार खोला। उसमें उसने अपनी माता को देखी। यमराज के नौकर उसे मारते हैं। वह बड़ी दुखी होकर चिल्लाती है। उसे गर्म तेल में पकाते हैं। श्यामला ने माता को ऐसी हालत में देखी, तो वह बड़ी ही दुःखी हुई। फिर एकबार दूसरा ताला खोला। उसमें भी उसकी माता को यमराज के नौकर (दूत) पत्थर और शिलाओं से उसे मारते हैं। फिर तीसरा कोठा खोला, उसने आगे देखा, उसकी माता का सिर आरे से (करोती से) काट रहे हैं। फिर चौथा कोठार खोला, उसमें यमदूत कुत्ते का रूप बनाए, उसकी माता का पाँव काटता है, (वह) चिल्ला रही है। इस प्रकार पांचवां कोठार खोला। वहाँ उसने

देखै तौ माता नै तिल पीलीजै त्यौ पील रह्या छै। वळै सातमो ही विवर उघाडियौ। आगै देखै तौ माता लोही राध मैं भीनी लटां किला विलाट करै छै। यु देखि नैं, श्यामला घणु दुःखित हुई। एक दा समै यमराज नु श्यामला पूछण लागी–स्वामी, इण किसा पाप कीया, जिण सु आ म्हारी माता सातां ही विवरां मैं घणु पीडीजै छै। तद यम बोल्यौ कोप करिनै–हे प्रिये! तैं साते विवर क्यु उघाड्या; मैं तोनै पहिली वरजी थी नहीं। थारी माता पुत्र रा स्नेह सौं गोहूं चोर नैं दीया था, सो तूं न जाणै। सैं ब्राह्मस्व खायौ थकौ सात कुळ बाळै तिणहीज कर्म सौं या नरक री स्थिति देखि। गोहूं था तिकै कृमि हुइ दुख देवै। थारी माता कीया कर्म भोगवै छै। आ बात सुणि नै श्यामला बोली–महाराज, थांहरै कहणसु हुं सर्व जाणु छु जिकु माहरी माता

देखा–उसकी मां के गले के ऊपर पैर रखकर उसे (यमदूत) मुगदर से कूट रहे हैं। फिर छठा कोठार खोला, देखा तो माता को जिस प्रकार तिलों को पेले जाते हैं (तिलों का तेल निकाला जाता है) उसी प्रकार पेल रहे हैं। फिर सातवां कोठार खोला–देखा तो मां के सामने लहु में सिजोई हुई लटें (कीड़े मकोड़े) किलबिलाहट कर रही हैं। ऐसा देखकर श्यामा बड़ी ही दुःखी हुई।

एक समय श्यामा यमराज से पूछने लगी—इसने ऐसे कौन से पाप किए, जिससे मेरी यह माता सातों ही कोठरों में बड़े कष्ट पा रही है। तब यम क्रोध करके बोला—हे प्रिये! तुमने सातों कोठार खोल दिये! मैंने तुम्हें पहिले ही इन्कार किया था। तेरी माता ने पुत्र–स्नेहवश गेहूँ चोर कर (पुत्रों को) दिए थे—वह तुम्हें मालूम नहीं है। ब्राह्मण का अन्न खाने से सात–कुल में दाग लगाती हुई उसी कर्म से इसने यह नर्क की स्थिति देखी है। गेहूँ थे, वे कीड़े होकर दुःख दे रहे हैं।

कीयो सो। तौ पिण हे भर्त्तार, म्हारी माता इण कृमि राशि सुं छूटै सो विधि करौ। इसौ सुणि धर्मराज विचारिनैं बोल्यौ आपरी सासू मोचन रै अर्थ श्यामला प्रियारी प्रार्थना सौ कहण लागौ। हे प्रिये, तूं सुणि-इण जन्म सुं तूं सातमैं जन्म तैं मालिनी सखी रै संग स्युं बुधाष्टमी रौ व्रत कीयौ थौ । महा फळदायी तिण व्रत रौ फळ थारी माता नै देवै तौ थारी माता नरक सौं छूटै। इसौ सुणि श्यामला ऊंतावळी स्नान करि बुधाष्टमी रौ पुण्य वाचा दे करि माता नैं दीयौ, तिण सुं ऊर्मिला नरक सुं मुक्त हुई। तत्काळ दिव्य रूप धारि विमान मैं बइठी दिव्य वसतर पहिर स्वर्गि गई। भर्त्तार निमि राजा रै पास गई। अद्यापि बुध रै तारै कन्हैं आकास मांहै देदीप्यमान दीसै छै—बुधाष्टमी रै प्रभाव सौं। इसौ सुणि श्रीकृष्णजीरा मुख सौं युधिष्टिर कहै छै-

---

तुम्हारी माता अपने किए हुए कर्मों को भोग रही है। यह बात सुनकर श्यामा बोली महाराज, आपके कहने से मैं सब जान गई जो कार्य मेरी माता ने किये। तब हे प्रिय, प्राणप्यारे! मेरी माता इन कीड़ों से छूटे (किस प्रकार मुक्ति पासके) वह विधि बतावें।

ऐसा सुनकर धर्मराज विचार कर अपनी पत्नी की प्रार्थना पर सास के पाप के छुटकारे का उपाय कहने लगा। हे प्रिये, सुनो! इस जन्म से सातवें जन्म में तुमने एक मालिनी सखी की संगति से बुधाष्टमी का व्रत किया था। (उस) महाफल-देने वाले व्रत का फल तुम यदि अपनी माता को दे दो तो वह नर्क से छूट जाय। ऐसा सुनकर श्यामला ने जल्दी से स्नान किया। बुधाष्टमी के पुण्य के फल का माता को वचन दिया, इससे उर्मिला नर्क से छूट गई। तत्काल वह दिव्य रूप धारण करके, विमान में बैठकर सुन्दर कपड़े पहिन कर स्वर्ग को चली गई। वह अपने पति-राजा निमि के पास में आई। आज भी बुध के तारे के

आ बुधाष्टमी अतीव श्रेष्ठ छै। हे कृष्ण, इण व्रत रो विधान मोनैं कहो। श्री कृष्ण उवाच। हे युधिष्ठिर, तूं सुणि बुधाष्टमी व्रतरो विधि। जिण दिन चांदणै परव आठिम बुधवार हुवै, तिण दिन ओ व्रत सर्व व्रतां में प्रधान लीजै। प्रभातै नदीरै विषै स्नान करि दांतण करि पूर्वोक्त विधि सौं बुधरी पूजा करि, गोधूम रै आटे सुं जुदो-जुदो नेवज करि ब्राह्मण नै पकवान करि भोजन दीजै। पहिली बुधाष्टमी मोदकां सुं करणी, दूसरी बुधाष्टमी फीणां सुं करणी। तीजी घेवरां सुं करणी। चौथी वडां सुं करणी। पांचमी मांडा सुं करणी। छठी सुंहाळीयां सुं करनी। सातमी मिश्री-घृत-युक्त सेवां री करणी। आठमी फळां सुं करणी। ऊपर दक्षिणा यथाशक्ति देणी। इण अनुक्रम सौं बुधाष्टमी आठ करणी। सगळा भाई-भाई बंधु भेळा करि जीमावणा-उपाख्यान

पास आकाश में (वह) चमकती हुई दिखाई देती है बुधाष्टमी के प्रभाव से। ऐसा श्री कृष्ण के मुंह से सुनकर युधिष्ठिर जी कहते हैं—यह बुधाष्टमी बड़ी ही श्रेष्ठ है। हे कृष्ण इस व्रत का विधान आप मुझसे कहें। श्री कृष्ण बोले—हे युधिष्ठिर बुधाष्टमी के व्रत की विधि सुनो-जिसदिन शुक्लपक्ष आठम बुधवार हो, उस दिन इस व्रत को जो सब व्रतों में प्रधान है, करना चाहिए। सुबह नदी पर जा स्नान, दांतुन करना चाहिए। ऊपर बताई विधि से बुध की पूजा करने के बाद गेहूं के आटे से अलग-अलग नैवेद्य कर, पकवान बनाकर ब्राह्मण को भोजन देना चाहिए।

पहली बुधाष्टमी लड्डूओं से करनी, दूसरी बुधाष्टमी फीणियों से करनी चाहिए। तीसरी बुधाष्टमी घेवरों से करनी। चौथी बड़ों से करनी चाहिए। पाँचवीं मांडा से करनी चाहिए, छठी सुहालियों से करनी चाहिए, सातवीं मिश्री और घी से युक्त (मिली हुई) सेवों से

ओ ब्राह्मण रा मुख थी सांभलीजै। जितरै आ कथा न सुणीजै, इतरै जीमीजै नहीं। बुधरी पूजा करि एकासणो करि आचमन करि वेदरा जाणणहार पंडित ब्राह्मण नै अच्छत समेत कलश, अनेक प्रकार रा फूल-फळ, धूप-दीप करि पीळा वसतरां सौं नेवज्जं सु पूजा करि समर्पण करणौ। मासै एक सोनैरी अथवा अधमासै री बुध री प्रतिमा करि पछै ब्राह्मण नै दीजै। जद व्रत पूर्ण हुवै तद आठ ब्राह्मणां नै भोजन कराइ, आठ गाय आठ बछै समेत वस्त्र अलंकार सौं सिणगार करि बहुत दूधरीदेवाळ नवी इसी आठ गायां दैणी। ब्राह्मण-ब्राह्मणी स-जोडै नै जीमाय वसतर अलंकार पहिरावणी करि पछै इण मन्त्र सौं बुधरी मूर्ति समर्पण कीजै—

बुधोय प्रति गृण्हाति द्रव्यस्योपि बुधः स्मृतः।
दीयते बुध राजेन, तुष्यतांच बुधो मम ॥

करनी चाहिए। आठवीं फलों से करनी चाहिए। साथ ही दक्षिणा—यथा शक्ति अपनी सामर्थ्य के अनुसार देनी चाहिए। इस क्रमः से बुधाष्टमी आठ करनी चाहिए। तमाम भाई-बन्धुओं को इकट्ठे करके उन्हें भोजन करवाना—ब्राह्मण के मुँह से कथा आदि सुननी ....।

जब तक यह कथा नहीं सुनी जाय—तब तक भोजन नहीं करना चाहिए। बुध की पूजा करके, उपवास खोलकर, उज्जाना करके, वेदों के जाननेवाले को अक्षत-सहित कलश (और) अनेक-प्रकार के फल-फूल, धूप-दीप सहित पीले-वस्त्र से विधिपूर्वक पूजा करके देना चाहिए। मासा अथवा आधा-मासे की बुध की प्रतिमा (मूर्ति) ब्राह्मण को देना। जब व्रत समाप्त हो तो आठ-ब्राह्मणों को भोजन करवाकर, आठ गायें आठ बछड़ों सहित वस्त्रालंकारों से शृङ्गार करवाकर बहुत दूध देनेवाली ऐसी आठ गायें देनी चाहिए। ब्राह्मणी और

बुधः सौम्यस्तार केशो राजपुत्र इलापतिः ।
कुमारो ग्रहराजश्चयः पुरुरवस पिता ॥
दुर्बुद्धि दुरितं दुःखं नाशयित्वा बुधोमम ।
सौख्यं श्रियं सौमनस्य करोतु शशिनन्दनः ॥१॥

इण विधि सुं जिकै बुधाष्टमी रौ व्रत करै, पुरुष अथवा स्त्री तिको सात जन्म तांई राज्य पावै, उत्तम विद्या पावै, वळे घर मांहे धन-धान्य लक्ष्मी बहुत हुवै। जिका लुगाई इण व्रत नुं करै तिका सुख-सोहाग पावै, रूप पावै, पुत्र-पोतरा बहुत संपदा पावै। दीरघ आउ संसार रा भोग लील-विलास भोगवै। इह लोक मैं सुख पावै—परलोक मांहे भली गति पावै; इन्द्र पद पावै। जितरै तांई आ सृष्टि छै, इतरै तांई प्राणी सुख भोगवै। श्री कृष्ण जी कहै छै, हे युधिष्ठिर ओ प्रबन्ध मैं तोनुं

ब्राह्मण को जोड़े सहित, वस्त्र और अलंकार आदि पहिनवाकर, फिर इस मंत्र से बुध की मूर्ति समर्पण करना।

मंत्र—बुधोय प्रति गृण्हाति द्रव्यस्थोपि बुधः स्मृतः।
दीयते बुध राजेन, तुष्यतांच बुधो मम ॥
बुधः सौम्य सार-केशो, राज तुत्र इलापति।
कुमारो ग्रहराजश्चयः, पुरूरवस पिता ॥
दुर्बुद्धि दुरितं दुःखं नाशयित्वा बुधोमम ।
सौख्यं श्रियं सौमनस्य करोतु शशिनंदन ॥

इस प्रकार से जो व्यक्ति भी बुधाष्टमी का व्रत करता है, चाहे वह स्त्री हो और चाहे पुरुष—उसे सात-जन्म तक राज्य की प्राप्ति होती है। उसे अच्छी विद्या प्राप्त होती है; फिर, उसके घर में धन-धान्य, लक्ष्मी की बहुत वृद्धि होती है। जो औरत इस व्रत को करे, उसे सुख-सुहाग मिले, बड़ी रूपवाली हो—बहुत से पुत्रों व पोतोंवाली व संपत्तिवाली

कह्यौ। इण व्रत सुं ब्रह्म हत्या रौ करणहारौ, गो-हत्या रौ करण वाळौ, मद्यापांनी, गुरु तल्य गामी, इतरा पाप सर्व दूर हुवै। काया वाचा, मन सारो कीयौ पाप, इण व्रत सुं दूर हुवै। अष्टमी बुध संयुक्त चांदणै परवरी इण तरह सुं पाणी समेत कुंभ द्रव्य समेत जिको मानवी वेदरौ जाणणहार ब्राह्मण नै भली भक्ति सुं देवै, तिको पुरुष यमलोक कदै ही न देखै, स्वर्ग रा सुख भोगवै। इण कथा नै पढै, सुणै तिको प्राणी यमलोक न देखै। हे युधिष्ठिर, सद्गति पावै ॥इति श्री भविश्योत्तर पुराणे श्री कृष्ण-युधिष्ठिर संवादे बुधाष्टमी व्रत कथा सम्पूर्ण।

हो। लम्बी आयु पाकर संसार के ऐश-आराम (वह) भोगती है। इस संसार में सुख की (उसे) प्राप्ति हो और परलोक में भी सुख की (वह) प्राप्ति करे; इन्द्र का वह पद प्राप्त करे। जब तक यह सृष्टि है (संसार है) तब तक प्राणी सुख लाभ करता है। श्री कृष्ण जी कहते हैं—हे युधिष्ठिर, यह कथा मैंने तुम्हें कही है। इस व्रत से ब्रह्महत्या जैसा भयंकर पाप करने वाला, गो-हत्यारा, मद्यपान करने वाला, गुरु की पत्नी के साथ गमन करनेवाला—इतने सभी पाप सब दूर होते हैं। मन, बचन, कर्म से किए गए सब पाप इस व्रत से दूर होते हैं। शुक्लपक्ष की बुधवार की आठम को इस प्रकार जल से भरा कुम्भ का पात्र उसमें द्रव्य डाला हुआ हो—कोई व्यक्ति भक्ति सहित ऐसे ब्राह्मण को जो वेदों का जाननेवाला हो, उसे दे, तो वह पुरुष यमलोक कभी भी नहीं जाये और वह स्वर्ग का सुख लाभ करता है। इस कथा को जो प्राणी पढ़ता हो अथवा सुनता हो वह यमलोक को कभी भी प्राप्त न हो। हे युधिष्ठिर—वह सद्गति को प्राप्त करे।

१३–श्री अगस्त जी री कथा

श्री गणेशायनमः ।। श्री अगस्त जी कस्य कथा लिख्यते । श्री कृष्ण जी तेतीस कोडि देवता सहित कुरूखेत्र आया । तब राजा युधिष्टिर जी श्री कृष्ण नै पूछ्यो कुण विधि सूं धर्म वधै जी, कुण विध सूं धर्म घटै, सु कथा कहौ । श्री कृष्णोवाच । राजा, अगस्ति की कथा सुण्यां धर्म की वृद्धि होइ–कथा सुणै नहीं तो दसवा अंस पुण्य व्रत कियो होइ सो दूरि होइ । तब राजा कही–श्री कृष्ण अगस्ति की कथा किसी विधि छै–अगस्त जी कुण को पुत्र छै, कठै थांनक छै । श्री कृष्ण जी कहै छै–एक ताला नामा दैत्य महादेव की तपस्या करी, वरस सहस्त्र तब रुद्र प्रसन्न हुवा । थारो नाम कांई ? तब दैत्य कह्यौ—महादेवजी कहै सोई नाम । तब महादेव जी कही–थारो नाम तालानामा दैत् । ताल व मींच

कथा श्री अगस्त जी की

श्रीगणेशायनमः । श्री अगस्त जी की कथा लिखते हैं—श्रीकृष्ण जी तैंतीस करोड़ देवताओं सहित कुरुक्षेत्र आए । तब राजा युधिष्ठिर जी ने श्री कृष्णजी से पूछा—कौनसी विधि से धर्म बढ़ता है—कौनसी विधि से धर्म घटता है—वह कथा कहें । श्री कृष्ण जी ने कहा—राजन् ! अगस्त जी की कथा सुनने से धर्म की वृद्धि होती है—कथा जो न सुने, तो उसके पुण्य और व्रत के दशवें अंश का नाश हो । तब राजा ने कहा—हे श्री कृष्ण जी, अगस्त जी की कथा की विधि कैसी ? अगस्त जी किस के पुत्र हैं ? उनकी कथा कैसी है ? तब श्री कृष्ण जी कहते हैं—एक ताला नामक दैत्य ने महादेव जी की सहस्त्र वर्ष तक तपस्या की, तब महादेव जी प्रसन्न हुए । तुम्हारा क्या नाम ? तब दैत्य ने उत्तर दिया—जो नाम महादेव जी कहें, वही मेरा नाम । तब

की देही वर पाया। दैत्य घरि आयौ। बहुस्यै कही–महादेव जी मुनै वर दीयौ। तब दैत्यणी कही–क्या भली करसौ! बुरी तौ थांकै बांटै आई ही छै। वर पायां भली करो तब वर कौ फळ होई। तब दैत्य बहु नै कही–चांडाली, असी बात सु तै कही, क्याहुं रिखीसुरां नै मारीस! तब दैत्यणी कही–रिखीसुर गोदावरी नदीका तट तप करै छा। तठै दैत्य गयौ, रिखीसुरास्यु कही–मोसै युद्ध करौ। रिखां कही–थारा कुळ सूं युद्ध कर, म्हा रवने हथयार डाल की कुश छै। तदे कही–मारसां थानै। तद रिखीसुर सब विश्वामित्र जी, जमदग्न जी, भारद्वाज जी, कस्यप जी, गौतम जी वसिष्ट जी, इतना रिखीसुर उठी जाता रह्या। एक वसिष्ट जी रह्या। ध्यान कर देखै तो महादेव जी वर दीयौ छै 'ताल वै मींच छै' डाभ की धणीतीर वणाय राखी। गोडा नीचै दे राखी। दैत्य आय लडे लागो। तब वसिष्ठ जो कही–रूंख चढ म्हारो

महादेव जी ने कहा—तुम्हारा नाम 'ताला नामा दैत्य'! ताला ने मृत्यु इस देह से नहीं होने का वर पाया।

दैत्य घर आया। पत्नी से कहा—महादेव जी ने मुझे वर दिया है। तब दैत्यणी (राक्षस की पत्नी) ने कहा—क्या भलाई करोगे ? बुराई करना तो तुम्हारे हिस्से में आई हुई है। वर पाकर भलाई करो तब वर का फल हो। तब दैत्य ने पत्नी से कहा—चंडालनी! तुमने ऐसी बात कैसे कही ? क्या मैं ऋषियों को मारूंगा ? तब दैत्यणी ने कहा—ऋषि लोग गोदावरी के किनारे पर तपस्या करते हैं। दैत्य वहाँ गया—ऋषि लोगों से कहा—मुझ से युद्ध करो। ऋषि लोगों ने कहा—अपने कुल से युद्ध करो। हमारे पास डाभ की कुश है (१) डाभ की टहनी (२) डाभ अथवा कुश है। तब कहा—आपको मारूंगा। तब सब ऋषि विश्वामित्र जी, जयदग्न जी, भारद्वाज जी, कस्यप जी, गौतम जी, वशिष्ठ जी इतने ऋषि लोग उठकर जाते रहे।

थारौ साखी बुलाई, जो जीतै सो कहै लौ। तब दैत्य रूख चढि हेलो दीयौ। रिखीसुर नीचै सूं ताल नै तीर की दीन्ही। दैत्य मूवौ। दैत्यणी नै कही–थारौ भरतार मारीयौ। दैत्यणी कही भली हुई। रिखीस्वरां नै सतावै छौ। आपणौ कीयो पायौ। तब दैत्यणी नै गर्भ छयै। तिण कै पुत्र दोइ हुवा। शुक्र देवता दैत्या रो गुरू छै। सो नांव काढवा आयौ। दोनों पुत्रां का नाम काढ्या। एके को नाम इलवा दूसरा को नाम वातापी। बरष दस का पुत्र हूवा। सिकार जाइ सभा में कहै लागा–म्हां सारीखो जोधा कोई और भी छै। तब दैत्या कही–बाप कौ तो वैर लीयो जाइ ही नहीं, थे क्या योधा छौ। तब इलवण वातापी माता पूछी–म्हां को बाप कुणे मारियौ। तूं बताय, नीतर तूने मारस्या। माता कही–पुत्र जणिया रौ फळ भलो दियो। थांकै

एक वशिष्ठ जी रह गये। ध्यान कर देखा तो महादेव जी ने वर दिया—(ताल अमर है)। डाभ का तीर धनुष्य बनाकर रखा। गोडे के नीचे रखदी। दैत्य आकर लड़ने लगा। तब वशिष्ठ जी ने कहा– पेड़ पर चढ़ो, तुम्हारा और मेरा साक्षी बुला। जिसकी विजय होगी—वह कहेगा। तब दैत्य ने पेड़ पर चढ़कर आवाज लगाई। ऋषि ने नीचे से ताल को तीर मारा। दैत्य मरा। दैत्यणी से कहा—तुम्हारे भरतार (पति) को मारा। दैत्यणी ने कहा, अच्छा हुआ। ऋषि लोगों को सताया करता था। तब दैत्यणी को गर्भ रहा। उसके दो पुत्र हुए। शुक्र देवता दैत्यों का गुरु है। वह नाम रखने के लिए आया। दोनों पुत्रों का नाम निकाला। एक का नाम 'इलवा' दूसरे का नाम 'वातापी'। पुत्र दस वर्षों के हुए। शिकार को जाते एक सभा में कहने लगे—हमारे समान दूसरा कोई योद्धा है। तब दैत्यों ने कहा—पिता का तो बदला लिया भी नहीं जाता, तुम क्या योद्धा हो ? तब इलवण–वातापी ने माता से पूछा—हमारे पिता को किसने मारा ? तू बता, नहीं तो

पिता हजार वरष महादेव जी री पूजा करी। एक पग कै पाणि उभो रह्यौ, तब वर दीयौ। तब रिखीस्वर संताया। कह्यौ, रिखि सुरां मारियौ। तब पुत्रां दोनां जाय कैलास उपरि तपस्या करी। नीची नाडि करी, ऊंचा पग किया। वरष हजार हूवा। तब महादेव जी वरदान कै वासते पार्वती जी देखवा खंदाई; कुण छै। तब पार्वजी पूछ्यौ थे, कुण छौं। इलवण वातापी कह्यौ माताजी म्हैं ताल नाम दैत्य रा पुत्र छां। पिता रै वैर कै वास्ते वर मांगा छां। पार्वती जी जाइ महादेव जी सौं कह्यौ-तालनामा दैत्य का पुत्र छै। पिता कै वैर वास्ते वर मांगै छै जी। महादेव जी वर दियौ-जननी का गर्भ सैं नीसरै छै सौ थांस्यै कोई जीतौ मती। तब पार्वती कही-जननी सूं सारो सृष्टि उपजै छै। देवता

तुम्हें मारेंगे। माता ने कहा—पुत्र पैदा करने का अच्छा फल दिया। तुम्हारे पिता ने हजार वर्ष तक महादेव जी की पूजा की—एक पैर के सहारे खड़ा रहा—तब वर मिला। तब ऋषियों को सताया। कहा—"ऋषियों ने मारा"। तब दोनों ने उसकी लाश पर तपस्या की। सिर नीचा किया, पैर ऊपर को किए। हजार वर्ष हुए। तब महादेव जी ने वरदान के लिए पार्वती को देखने को भेजी। कौन है ? तब पार्वती ने पूछा—आप कौन हैं ? इलावा-वातापी ने कहा—माता जी, हम ताल-दैत्य के पुत्र हैं। पिता के वैर के लिए वर माँगते हैं। पार्वती ने जाकर महादेव जी से कहा—ताल नाम के दैत्य के पुत्र हैं। पिता के वैर (वैर का बदला निकालने) के लिए वर मागते हैं। महादेव जी ने वर दिया—माता के गर्भ से जो पैदा हो (निकले) वह आपसे कभी जीत नहीं सके।

तब पार्वती ने कहा, माता से तो सारी सृष्टि पैदा होती है; देवता, असुर, मनुष्य। सब पृथ्वी को (यह) मारेगा। महादेव जी ने कहा—अब तो मैंने वर दे दिया है।

असुर, मनुष्य । सारी पृथ्वी नै मारसै । महादेव जी कही-अब तो मैं वर दियो छै । तब दैत्यां कही-म्हे सारी पृथ्वी जीतसां, थे आय नै म्हाने मारो तो मरां । महादेव जी कही, हुं ही वर देवां, हुं ही मारां नहीं । तब दोनां भाई गोदावरी नदी आया । गोदावरी सदा मेळो होय छै । अठयासी हजार रिखीसुरां कृष्णदेव जी सदा देवता सूधा आवता । तठै दोनों भाईयां कुटी बांध तुळसी वाही, रिखीसुर को रूप कीयो । संघ की संक्रान्त का बाईस दिन जाय छै-आठ रहै छै, तठै मेळौ होइ छै । तठै रिखिसुर आवै छै, सो दोनां भायों में एक तो मीठो होइ । [वातापी] दूसरो इलवण मीठा नै रांधै । रिखिसुरा नै नैतो । काका पिता को श्राद्ध छै—तब रीखीसुर जीमावै । तब पंचामृत पुरूसै, मीठा कौ मांस पुरूसै । तब धाया-तब आसी वचन दीयो । तब सांरा का पेट फोड़ मीठो नीसरीयो । इणभांत

दैत्यों ने तब कहा—हम तमाम पृथ्वी को जीतेंगे—आप आकर मारेंगे, तभी मरेंगे । महादेव जी ने कहा—मैं ही वरदूं, मैं मारता नहीं । तब दोनों भाई गोदावरी-नदी पर आये । गोदावरी में हमेशा मेला होता है । इक्यासी हजार ऋषि लोग, कृष्ण जी सहित सदा आते । वहाँ दोनों भाईयों ने कुटिया बनाकर तुलसी उगाई, ऋषियों का रूप बनाया । सिंह की संक्रान्ति के बाईस दिन बीतते हैं—अठारह रहते हैं, तब (यह) मेला होता है । तहाँ ऋषि लोग आते हैं—वहाँ दोनों भाईयों में से एक तो मिठाई बनाता है (वातापी)। दूसरा मिठाई को तैयार करता है । ऋषि लोगों को निमंत्रित करते हैं । हमारे पिता का श्राद्ध है— तब ऋषि लोगों को भोजन करवाते हैं । तब पञ्चामृत परोसते हैं—मीठा मांस परोसते हैं । तब (ऋषियों ने) छककर खाया, आसीस वचन कहे । तब सबका पेट फोड़कर मीठा (बाहिर) निकाला । इस र दस हजार ऋषियों को मारा । तब गोदावरी (नदी के तट) पर

रिखीसुर दस हजार मारिया । तब । तब गोदावरी जी श्रीकृष्णजी आया । तब बृहस्पति देवता नैं श्री कृष्ण जी पूछ्यो जो रिखीसुर घंट आया, कुण वास्तै। बृहस्पति जी कही–ताल नाम दैत्य का पुत्र पिता के बैर कै वास्ते महादेव की तपस्या करी । वर दियो— माता की योनि स्यौ निकसे, ऊपजै छै सो थांसो मत जीतो । सो हजार दस रिखीसुर मारिया । तब श्री कृष्ण जी कही–महादेव जी भस्मा दैत्य नै वर दियो छो । ताही कै माथै हाथ धरै सोई भस्म होइसी । तब दैत्य महादेव के माथे हाथ धरबा दौड्यो । महादेव जी भागा । तब नारद जी श्री कृष्ण नै कही–महादेव नै संकट छै । तब कृष्ण जी मोहनी रूप पार्वती जी को कीयो । तब दैत्य मोह्यौ । कही थार चालु । थारै ही वास्तै महादेव को लार कीवी छै जी । तब श्री कृष्ण जी पार्वती का रूप कीया । कही तूं थारै माथै हाथ देय कै नाचै तो थारै लारै चालु । तब

श्री कृष्ण आये, तब वृहस्पति देवता से श्रीकृष्णजी ने पूछा—ऋषि लोग संख्या में कम आए–क्या कारण है) वृहस्पति ने कहा ताल नाम के दैत्य पुत्र ने पिता के बैर के लिए महादेव जी की तपस्या की । महादेवजी ने वर दिया—माता की योनि जो निकलेगा; पैदा होता है, वह तुम से नहीं जीत सकता । अत: (उसने) दस हजार ऋषि लोगों को मारा । श्री कृष्ण जी ने कहा – महादेव जी ने भस्मासुर दैत्य को वर दिया था । जिसके सिर पर वह हाथ रखे, वही भस्म हो जायगा । तब दैत्य महादेव जी के ही सिर पर हाथ रखने को दौड़ा । महादेव जी भागे । तब नारद जी ने श्री कृष्ण जी से कहा—महादेव जी को संकट है। तब श्री कृष्ण जी ने मोहनी रूप में पार्वती का रूप धारण किया । तब दैत्य को मोहित किया । कहा, तुम्हारे साथ चलती हूँ । तुम्हारे ही लिये महादेव जी ने पीछे जाने को कहा है । तब श्री कृष्ण जी ने पार्वती जी का रूप बनाया । कहा—तू अपने सिर पर हाथ धरकर नाचे तो

दैत्य माथै हाथ धर नै नाचण लागौ । भस्म हूवौ । सु महादेव जी ऐसा वर देवै छै । तब सारा रिखीसुरा नु कृष्ण कही-थे मित्रा, वरूण रिखीसुर को आराध करो । तत सारा रिखीसुर देवता, मित्र, वरूण कै जाय आरध कीयो । मित्रा, वरूण प्रसन्न हुवौ । तव देवता कही-ताल नाम दैत्य का पुत्र पित्रा के बैर कै वास्तै रिखीसुर हजार दस मारचा । सु थै सहाय करौ । मित्रा, वरुण कुंभ थाय, उपरि नालेर राखि मांही कास का फूल मेल्या । तिही कलस मांहै अगस्ति जी नीसरचा आगासी माथो; पाताळ पग । ऐसो अगस्ति ऊभौ होइ वन मैं चाल्यौ । तब रिखीसुर कही मित्रा, वरुण जो जा, रिखा को काम करि । अगस्ति जी कही मनै ठिकाणौ बतावौ । कन्या रिखीसुर देसी तौ दैत्य मारीस । तब श्री कृष्ण जी, लोया मुद्रा रिखीस्वर की बेरी दीन्ही । लंका कै द्वारि थांको घर । खावानै जोवो-कथा थांरी सुंणे नहीं, तिहीं

तुम्हारे साथ चलूं । तब दैत्य सिर पर हाथ धर कर नाचने लगा । भस्म हो गया । अतः महादेव जी ऐसे वर देते हैं । तब तमाम ऋषि लोगों से कृष्ण जी ने कहा—आप सूर्य, वरुण ऋषियों की आराधना करें । तब ऋषि लोगों ने देवताओ सूर्य, वरुण के यहां जाकर आराधना की । सूर्य और वरुण प्रसन्न हुए । तब देवताओं ने कहा—ताल नाम दैत्य के पुत्र ने पिता के बैर के लिये दस हजार ऋषियों को मारा है । अब आप (हमारी) रक्षा करें सूर्य और वरुण । घड़ा लेकर ऊपर नारियल रख उसमें कास के फूल रखे । इस कलस में से अगस्त जी निकले—आकाश की ओर सिर,पाताल की ओर उनके पैर । ऐसा अगस्त जी खड़ा होकर वन की ओर चला । तब ऋषियों ने कहा—हे सूर्य और वरुण, जावो ऋषियों का काम करो । अगस्त जी ने कहा—मुझे ठिकाना बताएँ । मुझे ऋषि लोग कन्या देंगे, तो दैत्य को मारूंगा । तब श्री कृष्ण जी ने लोयामुद्रा ऋषि की पुत्री दी । लंका के द्वार पर तुम्हारा

कौ दशवांश धर्म तूं लै। वो कथा सुणै तिही नै फळ दै । तब गोदावरी जी, श्री अगस्तिजी आया । तब इलवण वातापी देख्यौ म्हां का पिता को बैरो आयौ । इह्नै मारां । तब जाय डंडोत कीया-थे म्हाकै भोजन करो । तब अगस्ति जी कह्यौ, घणौ खाऊं छूं । धापसौं नहीं । तब,अगस्तिजी बैठौ-पातली दीन्हीं । तब अगस्तिजी कही-पातली में धापौं नहीं । तब एडी को खाडो कीयौ-मण हजार वीस मावै, तव जह को भोजन करावां छां । सो सारौ पुरूसै मण सै पांच रांधो छै, तिहको हलको सो ग्रास कीयौ । तब इलवण कही तृप्तोस्क्तु,भाई जी पुरूस्क्तुयो । ऊंरा का तो पेट फाडि निसरे छै । अगस्ति का पेट में हुंकारो कीयो । तब अगस्ति पेट ऊपरि हाथ फेरि भस्म कीयो । तब इलवण भागौ । अगस्ति गेल करी । सुमेर परबत में गयो । तब सुमेर ऊपर चाढ़ाय राख्यौ । तब अगस्तिजी यों कही-म्हारो चोर थांरै खनै आयौ छै, तूं

घर । खाने के लिये देखो—कथा तुम्हारी जो न सुने, उसके धर्म का दशवाँ हिस्सा तुम लेलो । जो कथा सुने, उसे फल देना । तब श्री अगस्त जी गोदावरी पर आये । तब इलवण-वातापी ने देखा, हमारे पिता का शत्रु आया, इसे मारें । तब जाकर दंडवत् (नमस्कार-प्रणाम) किया—आप हमारे यहां भोजन करें । तब अगस्त जी ने कहा—मैं अधिक खाता हुँ अघा नहीं सकूंगा । तब अगस्त जी बैठे—पत्तल दी गई । तब अगस्त जी ने कहा—मैं पत्तल से नहीं धाप सकता । तब एडी से एक खड्डा किया—उसमें मण-हजार बीस (चीज) समावें । जब गहरा (डटकर) भोजन करते हैं । इसलिए सारा पुरसा-पाँच सौ मण रांधा है, उसका छोटा-सा ग्रास किया । तब इलवण ने कहा—तृप्त हो जाइये, भाई को भी परोस दिया । औरों के तो पेट फाड़कर निकलता है । अगस्त जी के पेट में 'हूँकारा' (हाँ भरना) किया । तब अगस्त जी ने पेट पर हाथ फेर कर भस्म किया । तब

काढ़ दे । सुमेर कही–तूं म्हारौ कहा करसै । तब अगस्ति कही–पछतावै लो । मानी नहीं । चिटी आंगळी पर्वत ऊपर म्हेलही–बीस हजार भौमी में गडि गयौ । पगों पडै मुनै सारौ, मती गाडयौ । तब चोर भागौ–नरबदा जी खनै गयौ, नर्बदा जी पार उतार घसोइ राख्यौ । अगस्ति जी कही–नरबदा, चोर आयौ, तूं काढ़ दे । नरबदा मानी नहीं । तब अगस्ति जी एडी म्हेल्ही पाणी सोख लियो । रेत उडै लागो । नर्बदा पगां पडी । म्हें थांको भेद जाण्यौ नहीं । तब मरजाद में राखी । चोर भाग समुद्र में गयो । समुद्र घसोइ राख्यौ–गाजै लागो । अगस्तजी कही–समुद्र चोर काढ़ दै । समुद्र कही–कदै सरणै आया दीजै छै अगस्त जी कही–पछतावोला । समुद्र कही–म्हांको थे कासु करोला । तब अगस्ति जी तीर बैठा आचमन कीयो । दोय आचमन किया–

इलवा भागा । अगस्त जी ने पीछा किया । सुमेरु पर्वत पर गया । तब सुमेरु पर्वत ने चढ़ाकर रखा । तब अगस्त जी ने ऐसा कहा—मेरा चोर तुम्हारे पास आया है, तू निकालकर दे । सुमेरु ने उत्तर दिया—तुम मेरा क्या कर लोगे ? तब अगस्त जी ने कहा—पछतावोगे ! (उसने) माना नहीं । कनिष्ठका अंगुली पर्वत के ऊपर रखी, बीस–हजार भूमि में (नीचे की ओर) गड़ गया ।

पांव पड़ता है—मूझे सारा ही मत गाड़ो । तब चोर भागा नरबदा जी के पास गया । नरबदाजी ने पार उतार कर छिपा रखा । अगस्त जी ने कहा—नरबदा, चोर आया है, तू निकाल दे । नरबदा मानी नहीं । तब अगस्त जी ने एड़ी रखी—पानी सोख लिया । धूल उड़ने लगी । नरबदा पांव पड़ी—मैंने आपका भेद जाना नहीं । इसलिये मैं अपनी सीमा में रही । चोर भागकर समुद्र में गया । समुद्र ने छिपा कर रखा—गर्जने लगा । अगस्त जी ने कहा—समुद्र ! चोर को निकाल दे । समुद्र ने कहा—शरण में आया भी कहीं दिया जाता है । अगस्त जी

तीसरो आचमन कियौ पांणी रह्यौ नहीं। तब समुद्र पगां पड़ियौ-म्हैं थांहरौ भेद जाण्यौ नहीं, जीव की दया करौ। तब अगस्तजी कही—समुद्र रीतौ किसी भांत भरै! तब अंग अंग महा पसेव की नदी नौ सै निवासी खंदाय चलाय समुद्र भरयौ। तब से खार समुद्र हुवौ। चोर आंणि समुद्र दियौ। दोय फांट करि अगस्त जी खाय गयौ-सीक करतां छोटी-सी डळी मुख माहा गिरिपड़ी, तिही की मारवी हुई। वड़ी पडै तो पेट फाड़ नीसरै, छोटी पड़ी तोही अपुठी मुहडे माहोइ नीसरै। असी विधि अगस्ति रिखी सुरां की सहाय कीवी। श्री कृष्ण जी कहै छै। राजा ऐसी विधि अगस्त जी की कथा छै, जोणै तिही कौ धर्म वधै। न सुणै तिही कौ धर्म घटै—अस्वमेघ जग्य को फळ होइ। कथा कहि पाछै जळ सौं अर्घ दीजै।

ने कहा—पछतावोगे। समुद्र ने कहा—मेरा तुम क्या कर लोगे? तब अगस्त जी किनारे पर बैठे—आचमन किया। दो आचमन किये, तीसरा आचमन किया, पानी रहा भी नहीं। तब समुद्र पैरों पड़ा, मैंने आपका भेद समझा नहीं, मुझे प्राणदान दें। तब अगस्त जी ने कहा—खाली समुद्र किस प्रकार भरा जा सकता है। तब अङ्ग-अङ्ग में से पेशाब की नव सौ नदियां निकाल—धार चला, समुद्र भरा। तब से समुद्र खारा हुआ। समुद्र ने चोर को लाकर दिया, दो टुकड़े कर अगस्त जी खा गये। छींक करते छोटी सी डली मुंह से गिरी, उसकी मक्खी हुई। बड़ी गिरे तो पेट फाड़कर निकले, छोटी गिरी तो भी फिर मुंह में से होकर निकले। इस प्रकार से अगस्त जी ने रखी—देवताओं की रक्षा की। श्रीकृष्ण जी कहते हैं—राजा, इस प्रकार अगस्त जी की कथा है। जो सुने उसके धर्म की वृद्धि हो। न सुने, उसका धर्म घटे। अश्वमेध यज्ञ का फल हो। कथा कहकर फिर जल से अर्घ देना।

तत्रमंत्रः--

वातापी भक्षितोयेन, पीतोयेन महोदधिः ।
समुद्र सोषितोयेन, गृहाणा घर्ममोस्क्तते ॥१॥

कळस माटी को थापीजै, नीचै आरवा मेलीजै । ऊजळो नाळेर ऊपरै मेल्हीजै । मोती मुग्यो पंचरत्न नाळेर मैं राखीजै । काकासिका फूल मेल्हीजै । दरवणा सोपारी मेल्हीजै । पूरी हुई तब ब्राह्मणां नां सीधो, कळस; नाळेर दरवणा दीजै । जो वाचै तिही नैं अगस्ति फळ देवै । घड़ी च्यार अथवा दोइ पाछली रात्रि रहै तब कहीजै तो पुण्य घणो छै, कहै तैनै पुण्य फळ विष्वा अठारा होइ । सुणै तिही तैं फळ घणौ होई । पणि हाथ मांडै तिहि सै सुणै तिही नै फळ घणौ होई, जिम ब्राह्मण को आशीर्वाद होइ ।

तत्र मंत्र—

वातापी भक्षितो येन पीतो येन महोदधिः ।
समुद्र सोषितो येन, गृहाणा धर्मभोस्क्तते ॥

मट्टी का कलश स्थापन करना, (उसके) नीचे अक्षत रखना । अच्छा नारेल उसके ऊपर रखना । मोती, मूंगिये, पञ्चरत्न नारेल में रखना । कोकासिका के फूल रखना । दक्षिणा और सुपारी रखना । (कथा) पूरी होने पर ब्राह्मणों को सीधा, कलश, नारियल, दक्षिणा देना । जो पढ़े, उसे अगस्त जी फल दें । घड़ी चार अथवा दो—पीछे की रात्रि रहे, तब कहे–तो पुण्य बहुत हो—कहे उसे युण्य अठारह विश्वा (अर्थात् निश्चित ही) हो । सुने, उसे फल बहुत हो । हाथ में पानी ले (संकल्प ले) उससे सुनने वाले को फल अधिक हो, ऐसा ब्राह्मणों का आशीर्वाद है ।

१४–अथ चौथ मासती री कथा

उजैण नामा एक नगरी तहां अरिमर्दन राजा राज्य करै है। तिण कै नगर मैं देवश्रम ब्राह्मण रहै। ऊ ब्राह्मण बहुत धनवंत, लिछमी रौ पार कोई नहीं। उण ब्राह्मण कै अस्त्री हुती सो मृत पांमी। तिण कै कन्या एक हुँती सो जीवती रही। ब्राह्मण और विवाह कियौ, उणकै एक कन्या भई। ब्राह्मण दोनूं कन्या नै पाळै–दोनूंई वर प्राप्त हुई। ब्राह्मण कन्या रौ पांण ग्रहण रौ आरंभ कियौ, दोनूंई जान साथै आई। पांण ग्रहण करायौ। माट भरता साथै एक माट मैं छांणा, पत्थर, छोडा भरिया। जिणरी माता मर गई थी, जिणरै मांट मांहे भरिया। माय नै राखता कन्या दीठी। तद कन्या मन मैं विचारीज हूँ क्यूं ही कहस्यूं तौ बाप इण नूं दुख देसी। तिण सूं विचार कर किण ही नूं नहीं कह्यो। जान नै ब्राह्मण सीख दीघी। कन्या मन मैं विचार करै

कथा चौथ माता की

उज्जैन नामक एक नगरी, वहां अरिमर्दन राजा राज्य करता है। उसके नगर में देवश्रम नामक एक ब्राह्मण रहता है। वह ब्राह्मण बड़ा ही धनवान लक्ष्मी का पार नहीं (उसके)। उस ब्राह्मण की स्त्री थी, वह मृत्यु को प्राप्त हुई। उसके एक कन्या थी, वह जिन्दी रही। ब्राह्मण ने विवाह दूसरा किया (दुबारा किया)—उस स्त्री से एक कन्या हुई। ब्राह्मण दोनों ही कन्याओं को पालता है—दोनों ही 'वर-प्राप्त' के योग्य हो गयीं। ब्राह्मण ने कन्याओं का विवाह प्रारम्भ किया—दोनों की जान (बरात) एक साथ आई। उनका विवाह किया। 'मांट' (मिट्टी का एक बड़ा बर्तन) को भरते समय एक माट में कण्डे, पत्थर और लकड़ी के छिलके भर दिए। यह उस 'माट' में भरे गये, जिस कन्या की माता मर गई थी।

छै-इण सासरै मैं ब्राह्मणांमैं माहरौ काम-सिध हासौ होसी। कन्या मन मैं दुचिती करण लागी। तितरै एक नदी सिप्राजी माथै, वृच्छ भाँत-भाँत, कंवळ फूल रह्या। तठै निरमळ जळ भर रह्यौ है। अपछरा रौ रथ पडियौ दीठौ। ब्राह्मणी मन में विचारियौ, अै देव मूरत रंभा दीसे छै। ब्राह्मणी, अपछरा बैठी जठै आय ऊभी रहो। पूछियौ, तुमैं कौण देसरी राज कन्या छौ। गंधर्व कन्या, नाग-कन्या, यच्छ, किन्नर, देव अपछरा छौ—म्होंमूं कहौ-उतर द्यौ। तब देव कन्या बोली हे ब्राह्मणी, म्है इन्द्रलोक सूं आई इन्द्र री अपछरा हां। माहरै आज चौथ माता रौ व्रत है, सो म्है आज चौथ-माता री पूजा करण वासतै, इण सरोवर आई हां। सो अठै चौथ रौ वरत करस्यां-मद-मासं समेत पूजा करस्यां। तिण सूं देवी बहुत वरदाता होसी, मनकामना सिध होवै। तद ब्राह्मणी मन में सोच करण लागी-माहरौ मन कहै

माट के अन्दर रखते समय कन्या ने यह सब देखा। तब कन्या ने मन में विचारा, यदि कुछ कहूँगी तो पिता इसे (दूसरी माता को) कष्ट देगा। ऐसा बिचार कर किसी से भी नहीं कहा।

ब्राह्मण ने बरात को बिदाई दी। कन्या मन में विचार करती है— मेरी ससुराल में, ब्राह्मण-समाज में निश्चय ही मेरी हँसी होगी। कन्या मन में चिन्ता करने लगी। इतने ही में नदी सिप्राजी आ गई। उसके किनारे पर तरह-तरह के पेड़ और कमल फूल रहे हैं। वहां निर्मल जल भरा हुआ है। वहां अप्सरा का रथ खड़ा देखा। ब्राह्मणी ने सोचा—यह देवमूर्त रम्भा दिखाई देती है। जहाँ अप्सरा बैठी हुई थी, ब्राह्मणी भी वहीं आकर खड़ी हो गई। पूछा—तुम कौन देस की कन्या हो ? गन्धर्व कन्या, नाग कन्या, यक्ष, किन्नर, देव अथवा अप्सरा हैं—मुझे बतावें, मुझे उत्तर दें।

ज्यूं चौथ माता करै तौ वरत हूं झालूं। अब अपछरा बोली- हे बांभणी तूं वरत झाल-चौथ माता थारी मन-कांमना सिद्ध करसी। मद-मांस समेत पूजा करसी तोनूं बहुत राजी होसी। वरत बांभणी संभायौ। आंपणैं डेरैं आई। आगै माट मांहे एयु मेवा मिष्ठान भाँत-भाँत रा होय गया। ब्राह्मणी नै तुरंत चौथरौ परचौ पायौ। बांभणी हरसवंत हुई। उठासूं घरै आई। अबे हमेस, चौथ आवै तद वरत करै। मद आध सेर, मांस अधसेर आंण, व्यंजन समीचीन कर श्री भैरवी चौथ नै पूजै। धूप करै। दीप जोति कर पाठ आगै करै, नीळी द्रोब चाढ़ै, अखत्र चढ़ावै, मंगळ गीत गावै, कथा वार्ता सुणै- बचावै।

अैसी तरै ब्राह्मणी वरत करै, माता चौथ री सेवा करै, पछै हरियै गोबर री गुहळी दिराय स्नान कर, कुंकुं चाढ़णां।

तब देव कन्या बोली—हे ब्राह्मणी मैं इन्द्रलोक से आई हूँ—इन्द्र की अप्सरा हूँ। मेरे आज चौथ-माता का व्रत है—अतः मैं चौथ-माता की पूजा करने के लिए इस तालाब पर आई हूँ। यहाँ चौथ का व्रत करूँगी—मद-माँस सहित पूजा करूँगी। इससे देवी बहुत से वर को देने वाली होगी, और मनोकामनाएँ सिद्ध होंगी। तब ब्राह्मणी मन में विचार करने लगी—मैं भी ऐसा ही सोचती, यदि चौथ-माता की कृपा रहे तो मैं भी इस व्रत का नियम पकड़ लूँ। इस पर अप्सरा बोली—हे ब्राह्मणी, तू भी व्रत करने का शंकल्प करले, चौथ-माता तुम्हारी मनोकामना सिद्ध करेंगी। मद-मांस सहित यदि पूजा करोगी, तो तुमसे (वे) प्रसन्न होंगी।

ब्राह्मणी ने व्रत का निश्चय किया। अपने स्थान पर आई। (आकर देखा) 'माट' के भीतर तरह-तरह के फल एवं मिठाईयाँ बन

धूप-दीप अखत्र कर सुगंध-पुहप चढ़ावणा। गुळ आण पांचडळी कर चढ़ावणा। आप ब्राह्मणी चूरमौ कर पछै दोय घड़ी दिन रहै तरै भोजन, प्रसाद, आचमन करै। माता रै आखाडै गीत, चरचा, आवाहन गायबौ करै; यु करतां बरस द्वादस भया। मद-मांस ल्यांवतां बहु रां देवरां जेठ दीठी। पांच-सात वेळा चरत जोया।

एक दिन ब्राह्मणी मद-मांस लैनै आवै है। कुटंब रै आदमी कोटवाळ ज्यादा बांभण साथै मेलिया। ब्राह्मणी नै आय मिलिया। ब्राह्मणी मन में डरण लागी। जितरै चौथ रौ ध्यांन कीयौ, तितरै चौथ माता कह्यौ 'डर मता' प्रोहित अर प्यादा बूझियौ-बांभणी थारै पास कहू है। बांभणी उन कहै- गुळ, घिरत, माता चौथ नै चढावण वासतै है और तो क्यु ही नहीं। तद बांभण कहै-कूड़ भाखै हैं, असत वचन कहै है। दरबार रा प्यादां पल्लौ परहौ

गई। ब्राह्मणी ने तत्क्षण ही चौथ का चमत्कार पा लिया। ब्राह्मणी बड़ी प्रसन्न हुई। वहाँ से वह घर आई।

अब हमेश, जब भी चौथ आती, वह व्रत किया करती। आधा-सेर मद, आधा-सेर माँस और व्यञ्जन इकट्ठे करके श्री भैरवी-चौथ की पूजा करती। धूप करती, दीप जलाकर उसके सामने बैठकर पूजा किया करती, हरी-दूब चढ़ाती, अक्षत्र चढ़ाती, मंगत गीत गाती, कथा-वार्त्ता सुनती और पाठ भी करवाती।

इसी प्रकार ब्राह्मणी व्रत करती, माता-चौथ की सेवा करती। इसके बाद हरीये गोबर की गार लगानी, स्नान करनी और कुंकुम चढ़ाना। धूप-दीप, अक्षत्र और सुगन्धित पुष्प चढ़ाना। गुल लाकर उसके पाँच चढ़ाने (चाहिए)।

ब्राह्मणी स्वयं चूरमा बनाकर, दो घड़ी दिन रहता, तब भोजन, प्रसाद और आचमन करती। माता के स्थान पर उनके गीत, उनकी

करनै जोयौ-गुळ, घिरत निजर आयौ। तद्दूत बांभणी रै पगै लागा, आपणै कोटवाळ कन्हैं पाछा आया, कह्यौ—बांभण भूठ कहै है। बात खिलाफ सब कूड है। कोटवाळ बांभण नै दूर कियौ, ब्राह्मणी नै नमस्कार कियौ, सनमांन कर घर नै, सीख दीधी। बांभणी घर आई, पूजा कीधी, आप पिण प्रसाद लियौ। हमैं बांभणी वरत करै पण मद-मांस न चढ़ावै। यं करतां बरस पांच सात यूंही गुळ सूं करिया। चौथ माता बैराजी हुई।

हमैं एक दिन राजा रौ कुंवर उण बांभणी रै सुसरै रै घरै आयौ। उण ब्राह्मण, कुंवर नै ऊंचौ लियौ। तत्काळ प्राण छूटा, कुंवर हाथां मांहै मृत पायौ। उवा बात राजा नै ठीक पुहती। राजा कह्यौ—ब्राह्मण डाकी है। ब्राह्मण नै जलायद्यौ, नहींतर कुंवर जीवतौ हुवै। तद बांभणो, बांभणी दोनूंई माता चौथ रै

चर्चा, आमंत्रित करने के गीत आदि गाया करती। इस प्रकार व्रत करते बारह वर्ष होगये। मद-मांस लाते बहु के देवर और जेठ ने (उसे) देखी। पाँच-सात बार इस विषय की चर्चा हुई।

एक दिन ब्राह्मणी मद-मांस लेकर आती है। कुटुम्ब के आदमी ने कोतवाल को और सिपाही को ब्राह्मण के साथ भेजे। वे लोग ब्राह्मणी से आकर मिले। ब्राह्मणी मन में भय खाने लगी। इतने में चौथ-माता का ध्यान किया। चौथ-माता ने उस समय कहा—'डरो मत'।

प्रोहित और प्यादा-सिपाही ने पूछा—'ब्राह्मणी तुम्हारे पास क्या है ?' ब्राह्मणी ने उनसे कहा—गुड़, घी माता-चौथ के भोग लगाने के लिए है। और तो कुछ भी नहीं है। तब ब्राह्मण ने कहा—झूठ बोलती है—असत्य वचन कहती है। सरकारी प्यादे-सिपाही ने पल्ला दूर करके देखा। तो (उसे) गुड़-घी नजर आया। तब दूत ब्राह्मणी के पाँवों पड़ा। उसने अपने कोटवाल के पास वापिस जाकर कहा—ब्राह्मण झूठ कहता

रैथांन मैं बैठा, कुंवर उठै पौढ़ियौ। ध्यान माता चौथ रौ कर रह्या छै। ध्यान करतां पुहर छः व्यतीत भया। आधी रात हुई, तितरै माता चौथ च्यार हस्त सूं आण दरसण दियौ। बांभण-बांभणी पगै लागा। माता कह्यौ-थै क्यूं आवाहन कियौ ? बांभणी बोली, म्हांमैं बहुत संकट पड़ियौ, सो संकट भांजौ। जद माता बोली-तैं बांभणी मद-मांस क्यूं टाळियौ, हूं आफैही साभ्रती हुती। पण तौमैं बडौ खून पडियौ-पण-मद-मांस क्यूं चढ़ायौ कर। बांभणी कह्यौ-हे माता, तोनूं चौडै—भालै आंण चढास्यूं तूं मांहरौ संकट भांजा। तो बाहिरौ माहरौ संकट कुंण काटै। तूं भवांनी संकट री भांजणहार छै। इतरौ सुण भवांनी बोली तूं इण कुंवर री मारवी राखै, हूँ अमृत ले आऊँ। भवांनी शिवजी कनहै कैलास परबत गई। शिव भवांनी नै उठ आदर

है। इसके विरुद्ध सारी बातें झूठी हैं। कोटवालने ब्राह्मण को एक ओर किया—ब्राह्मणी को नमस्कार कर उसे सम्मान सहित घर को प्रस्थान की।

ब्राह्मणी घर आई, उसने पूजा की—और फिर स्वयं प्रसाद लिया। अब ब्राह्मणी-व्रत तो करती है लेकिन (आसमाता को) मद-मांस नहीं चढ़ाती है। इस प्रकार करते-करते पांच सात वर्ष गुड़ (प्रसाद लगाकर) पूजा करती रही। चौथ-माता इस प्रकार नाराज होगई।

अब एक दिन राजा का कुँवर उस ब्राह्मणी के ससुर के घर आया। उस ब्राह्मण ने (प्रेम करने के लिए) कुँअर को ऊपर उठाया। उसी समय उसके प्राण छूट गए—कुँअर हाथों में ही मर गया। यह बात ठीक इसी प्रकार राजा के पास पहुँची। राजा ने कहा—ब्राह्मण डाकी है। या तो कुँअर को ब्राह्मण जिलादे, अन्यथा उसे जलादिया जाय। तब ब्राह्मण और ब्राह्मणी दोनों ही माता-चौक्ष के मन्दिर में जा बैठे। कुँअर को वहीं सुलाया गया। माता का ध्यान करते छः पहर व्यतीत

दियौ, कह्यौ–भवांनी, क्यूं आई ? तद चौथ माता बोल नै कह्यौ, म्हारै सेवक में संकट पडियो सौ अमृत रौ कुपौ द्यौ, ज्यूं हूं संकट भांजूं । तरै शिव जी कहै–चन्द्रमा कनहै जाय, तोनूं अमृत देसी । माता चन्द्रमा कनै आई । चन्द्रमा उठनै नमस्कार कियौ, पूछियौ हे भवांनी, आज धन–भाग तूं आई, कांम आई सो कहौ । तरै माता कह्यौ–चन्द्रमा मौनूं अमृत रौ कुपौ दे, ज्यूं हूं म्हारै सेवक रौ संकट भांजू । तरै चन्द्रमा कह्यौ-चौथ म्हारौ वरत में सीर करै तौ अमृत द्यूं । माता कह्यौ–चन्द्रमा च्यार घड़ी चौथ रै दिन रात जाता, तद चंद्रमा ऊगै तरै वरत हूसी । च्यार घड़ी रौ थारौ वरत है । तरै चन्द्रमा कह्यौ भला माता गणेश कनै हाल, ज्यूं अमृत ल्यावां । चन्द्रमा चौथ माता दोनूंई गणेश कनै आया । गणेश उठनै ऊभौ हूऔ । आज थै भलाई आया, माता

होगये । आधी रात हुई तब माता चौथ ने चार–भुजा धारण कर दर्शन दिए । ब्राह्मण और ब्राह्मणी पैर पड़े । माता ने कहा—आप लोगों ने मुझे क्यों निमन्त्रित किया ? ब्राह्मणी ने कहा—हम में बड़ा संकट आ पड़ा है हमारे संकट को आप काटें । तब माता ने उत्तर दिया—हे ब्राह्मणी, तुमने मद–माँस सेवा में चढ़ाना क्यों बन्द कर दिया ? मैं इसे अपने आप समझ लेती । आप लोगों पर संकट आया है—मद-मांस तो थोड़ा-बहुत प्रसाद–रूप में चढ़ाया ही कर । ब्राह्मणी ने कहा—हे माता, मैं आपको खुलमखुले आकर चढ़ाऊँगी—आप हमारा संकट काटें । आपके बिना हमारा संकट कौन काटे ? हे भवानी, आप संकट को दूर करने वाली हैं ।

इतना सुन भवानी बोली—तूं इस कुँवर की निगरानी रखते रहना—मैं अमृत लेकर आती हूँ ।

भवानी शिवजी के पास कैलाश-पर्वत पर गई । शिव ने उठकर भवानी को आदर-सत्कार दिया । कहा—'हे भवानी ! कैसे आना हुआ ?' तब चौथ-माता ने बोल कर कहा—मेरे भक्त पर संकट पड़ा

कह्यौ गणेश थां कनै अमृत है, सो म्हांनै द्यौ । तद कह्यौ, माता क्यूं ही एक यौ थारै वतर में म्हांनूई भेलौ ! तरै माता कह्यौ- म्हारै साथै तोनूई पूजसी । तरै गणेश अमृत दियौ । माता चौथ अमृत लै बांभणी कनै आय बांभणी नै अमृत दियौ । विनै कह्यौ- हिवै तूं बांभणी छांटौ नांख ज्यूं कुंवर उठ ऊभौ हुवै । बाभण उठ प्रदच्छिणा दीन्ही, अमृत रौ कळसियौ उरहौ लियौ । धूप खेव, छांटौ नांखियौ । राजा रौ कुंवर उठ ऊभौ हुवौ । देवी चौथ रै पगै लागौ । बांमणी माता रै पगै लागी । माता बांभणी नै कह्यौ, हे

है—अतः अमृत का कुप्पा आप दें । जिससे उसका संकट दूर कर सकूं । तब शिवजी ने कहा—आप चन्द्रमा के पास जायें । (वह) आपको अमृत देगा । माता चन्द्रमा के पास आई । चन्द्रमा ने उठकर नमस्कार किया । कहा—हे भवानी ! आज हमारे अहोभाग्य हैं, जो आप पधारी हैं । जिस काम के लिए आप आई हैं, कहें । तब माता ने कहा — हे चन्द्रमा, मुझे अमृत का कुप्पा दें जिससे मैं अपने सेवक का दुख दूर करूं । तब चन्द्रमा ने कहा—हे चौथ-माता, आप यदि अपने व्रत में मेरा भी हिस्सा रखें तो मैं आपको अमृत दे सकता हूं । माता ने कहा— चार पहर रात्रि बीतने पर अब तुम उदय होगे, तभी यह व्रत पूर्ण होगा समझा जायगा । इस पर चन्द्रमा ने कहा अच्छा (बहुत ठीक); माता, अब आप गणेश के पास चलें, वहीं से अमृत ले आवें । चन्द्रमा और चौथ-याता दोनों ही गणेश के पास आए । गणेश उन्हें देखकर खड़ा होगया । आज आपने पधार कर बड़ी कृपा की । माता (आने का कारण) कहिए ? गणेश, तुम्हारे पास अमृत है सो हमें देवो । तब कहा, माता तुम्हारे किसी एक व्रत में तो मुझे भी साथ रखें । माता ने कहा—मेरे साथ तुम्हें भी (लोग) पूजेंगे । तब गणेश नें अमृत दिया ।

बांभणी ! म्हारी पूजा करती पाछ मत राखै, थारौ संकट हूं भांज स्यूं माता पछै आपणै थान नूं मुकांम गई, राजा रौ कुंवर उठ आपणै घरै आयौ। राजा प्रभात रौ बांभणी रै पगै लागौ। बांभणी चौथ रै वरत री बात कही। राजा बांभणी रै मनरी लही। राजा पिण चौथ रौ व्रत झालियौ। चौथ रौ वरत बांभणी संसार मैं चलायौ। आगै वरत गुपत करता। देवता इन्द्र लोक मैं वरत करै है। चौथ रौ वरत करै है तिणनै चारूंईं खूंट आडी छड़ी

माता-चौथ अमृत लेकर ब्राह्मणी के पास आई—आकर अमृत ब्राह्मणी को दिया। उसे (ब्राह्मणी को) कहा—हे ब्राह्मणी तुम अब इस पर (मरे हुए राजकुमार पर) पानी के छींटें डालो—कुँवर अवश्य उठकर खड़ा हो जायगा। ब्राह्मण ने उठकर (चौथ माता की) परिक्रमा दी और अमृत का पात्र अपने पास लेलिया। धूप आदि करके, पानी का छींटा फेंका—राजा का कुँवर उठकर खड़ा होगया।

ब्राह्मणी माता के पैरों पड़ी। माता ने ब्राह्मणी से कहा—हे ब्राह्मणी ! मेरा पूजा करते समय किसी प्रकार की (पूजा में) कमी मत आने देना। तुम्हारा संकट में दूर करूँगी। माता इसके उपरान्त अपने स्थान को चली गई; राजा का कुँवर भी उठकर अपने घर आया। दूसरे दिन राजा ब्राह्मणी के पाँवों लगा। ब्राह्मणी ने चौथ के व्रत की ही महिमा हैं—ऐसा कहा। राजा ब्राह्मणी के मन की बात समझ गया। राजा ने भी चौथ का व्रत करने का शंकल्प कर लिया। (यह) चौथ का व्रत संसार में ब्राह्मणी ने प्रारम्भ किया। पहले व्रत गुप्त किया करते। भगवान 'इन्द्र-लोक' (स्वर्गलोक) में व्रत करते हैं—वे चौथ का व्रत करते हैं।

दैणवाळौ कोई नहीं । धूप खेवणा, दीवा करणा, सुगंध पुहप चढावणा, आखा चाढ़णा, चूरमौ कर श्री गणेश जी नै, श्री चौथ माता नै भैळा पूजणा । किरडवाळी तौ केरड़ा आया करणी । चांद ऊगाळी ऊगै करणी । चौथ'मातारौ वरत करै तिकण नै मन-कांमना पूरवै, लिछमी रौ सुख मिलै, रिण-संग्राम मैं जय प्राप्ति होय ।

मन कांमना उठै होय सो पावै, देवळोक वासौ हुवै, सातमैं जन्म मुगति होय ।

धूप करना, दीपक करना, सुगन्धित फूल चढ़ाने, अक्षत्र चढ़ाना—चूरमा बनाकर श्री गणेश जी को और श्री चौथ-माता को साथ ही साथ पूजना ।

चौथ-माता का जो कोई व्रत करता है—उसकी मनोकामना सिद्ध हो । उसे लक्ष्मी का सुख लाभ हो, युद्ध क्षेत्र में उसे विजय प्राप्त हो । जो कुछ भी मनोकामना हो, वही प्राप्त करे । देव-लोक में निवास हो और सात जन्मों में, जन्म से उसकी मुक्ति प्राप्त हो ।

१५—अथ कथा सोमवती की

अमूक नगर मांहें ब्राह्मण एक बसै। तेरै तीन पुत्र नै एक कन्या। कितरा एक दिन व्यतीत हुवा छै, एक दिन एक अतिथ भिच्छा नै आयौ। आई अर आशीरवाद कियो। ताहरां ब्राह्मणी बहूवां नूं कह्यौ; बेटा भिच्छा देवो। बहूवां भिच्छा दीवी। ताहरां ब्राह्मण आशीरवाद कियो—जु पुत्रवती सौभाग्यवती भव।

फेर ब्राह्मणी आपरी बेटी नूं कह्यौ, जु बेटा भिच्छा द्यौ। ताहरां बेटी ही उठी, भिच्छा दी। ताहरां ब्राह्मण आशीरवाद कियो, जु धर्मवती भव। ताहरां ब्राह्मणी रै मन मांहें आसंका हुई, जु बहूवां नैं और आसीरवाद दियौ, अर बेटी नै और भांति आशीरवाद कियौ। तांहरा ब्राह्मणी बेटी नै लेई नै ब्राह्मण रे

सोमवती की कथा

किसी नगर में एक ब्राह्मण रहता था। उसके तीन पुत्र और एक कन्या थी। बहुत दिन (जब) बीत गये, एक दिन एक जतिथि भिक्षा के लिये आया। आकर उसने आशीर्वाद दिया। तब ब्राह्मणी ने बहुओं से कहा—बेटी, (इसे) भिक्षा दे दो ! बहुओं ने भिक्षा दी। तब ब्राह्मण ने आशीर्वाद किया—(आव लोग) पुत्रवती और सौभाग्यती हों।

फिर ब्राह्मणी ने अपनी बेटी से कहा—बेटी तू भी भिक्षा डाल दे। तब बेटी भी उठी, भिक्षा डाल दी। तब ब्राह्मण ने आशीर्वाद किया—धर्मवती बनो। तब ब्राह्मणी के मन में संशय उत्पन्न हुआ—बहुवों को और आशीर्वाद दिया और बेटी को दूसरी भाँति का आशीर्वाद दिया। तब बेटी को लेकर ब्राह्मणी, ब्राह्मण के पीछे हो ली—उसके घर गई

रै वांसै लागि, घरै गई—ब्राह्मण रै पगै लागी। ताहरां ब्राह्मण पूछियौ जु बाई कूंण निमित्त आई। ताहरां ब्राह्मणी हाथ जोडि नै कह्यौ, जु स्वामी थां म्हारी बहूवां नै आशरीवाद और भांति कियौ, बेटी नै और भांति कियौ-सु कौण कारण ? ताहरां ब्राह्मण कह्यो जु बाई ईयै बात रौ पूछै मत—म्हें इवहीं कह्यो, स्वभाव सूं। ताहरां ब्राह्मणी बहुत हठ कियो जुई यै बात रौ निरणौ कह्यां हो जु वणै। ताहरां ब्राह्मण कह्यौ जु बाई कह्यां थकां तूं बहुत दुख पाईस। ताहरां ब्राह्मणी कह्यौ—अवस्य कर कहौ। ताहरां ब्राह्मण कहौ जु बाई ईयै कन्या रै विवाह विषै चौथे फेरै इण भांति रौ उपद्रव हुसी जु बाई रौ वर शान्त हुस्यै ताहरां ब्राह्मणी कह्यौ, जु भाई, ईयै बात रौ कहीं भांत जतन हुवै सू कहौ।

और ब्राह्मण के पैरों पड़ी। तब ब्राह्मण ने पूछा—बहन, तू कौन निमित्त (किस कारणवश) आई हो ? तब ब्राह्मणी ने हाथ जोड़कर कहा—स्वामिन् आपने बहुओं को तो आशीर्वाद और प्रकार से दिया और बेटी को दूसरी भाँति से दिया, इसका क्या कारण है ? तब ब्राह्मण ने कहा—बहिन इस बात को मत पूछो। मैंने वैसे ही स्वभाव-वश कह दिया। तब ब्राह्मणी ने बड़ा ही जिद्द कर लिया—आपको इस बात का कारण तो बताना हो होगा। ब्राह्मण ने तब कहा—बहन कहने पर तुम्हें बहुत दुःख होगा। तब ब्राह्मणी ने कहा—(आप) अवश्य ही कहें। इस पर ब्राह्मण ने कहा—बहन इस कन्या के विवाह के समय चौथे फेरे में इस प्रकार का उपद्रव होगा कि (उसमें) इस कन्या का पति शान्त हो जायगा (पति मर जायगा)। तब ब्राह्मणी ने कहा—हे भाई, इस बात का किसी प्रकार कोई उपाय हो वह बतलावें।

ताहरां ब्राह्मण कह्यौ—जु बाई एक जतन छै जु संघल द्वीप मैं सोमां छीपी रहै छै सु जे उवा वीबाह मांहैं आवै तो जतन हुवै। इतरौ पूछि ब्राह्मणी घरै आई। ताहरां आपरा बेटा नै कह्यौ जु थे कोई बाई रै साथै जावौ। बड़ा बेटा दोइ हुंता तिकां नाकारौ कियौ। छोटै भाई कह्यौ—मां हूं बाई रै साथै जाईस अवस्य। ताहरां बहिन-भाई दोनूं जणा प्रभात समा चालिया। चालता-चालता समुद्र रै तीर आइ रह्या। ताहरां समुद्र रै तीरै बडो एक वृक्ष हुंतौ, तै नीचै बहिन-भाई आइ वैसि रह्या। भूखाहीज बैठा रह्या—क्युं जुड्यौ नहीं। ताहरां उवै वृक्ष ऊपर गरुड़ रा बेटा हुता, ऊवां दीठो जु ब्राह्मण भूखा रह्या। ताहरां सन्ध्या रै समईयै गरुड रां बचां री माता चूण लेअर आई—भली चूण ल्याई। खुसी थकीं बेटां आगै— मेल्ही पण बेटा चूण

तब ब्राह्मण ने कहा—एक उपाय है, सिंघल द्वीप में सोमां छीपी रहती है। यदि वह विवाह में आ जाय तो कुछ यत्न हो सकता है। इतना पूछकर ब्राह्मणी घर पर आई। तब अपने पुत्र से कहा आप में से कोई बहन के साथ जायेगा? बड़े दोनों पुत्रों ने इन्कार कर दिया। छोटे भाई ने कहा -- मां, मैं बाई के साथ अवश्य जाऊंगा। तब दोनों बहन–भाई प्रभात के समय चले। चलते–चलते वे लोग लमुद्र के किनारे आ–पहुचे।

उस समुद्र के किनारे एक बड़ा वृक्ष था—उसके नीचे बहिन–भाई दोनों आकर बैठ रहे। भूखे ही बैठे रहे—कोई साधन जमा नहीं। तब उस वृक्ष के ऊपर गरुड़ के बेटे थे, उन्होंने देखा—ब्राह्मण भूखे रह गए। जब संध्या समय गरुड़ के बच्चों की माता उनके लिये चुग्गा लेकर आई—वह बड़ा अच्छा चुग्गा लाई। उसने प्रसन्न होकर बच्चों के आगे रखा। लेकिन बच्चे चुग्गा खा नहीं रहे हैं, माता से वे (लोग) बोल भी नहीं रहे हैं। इस पर माता ने कहा—बच्चों, आप

खावे नहीं, न माता सूं बोलै। ताहरां माता कह्यौ, रे बेटा थे बोलो नहीं, अर चूण खावौ नहीं—किसे वासतै। ताहरां लहूडौ बेटा बोलियौ, जु माता म्हें चूण क्यु करि खावां। म्हारै नीचे दोई ब्राह्मण भूषा बैठा छै। जे ऊवारों समाधान हुवै तो म्हैं चूण खावां। ताहरां गरुडहरी स्त्री नीचे आई। आइनै पूछियौ; जु थे कोण छौ, केथ जासौ। ताहरां उवां कह्यौ—थे जीमौ, अंन सामग्री हूं देईस। अर सवारै थानूं समुद्र उतारीस। ताहरां ऊवानूं अंन दियौ, ऊवै जीमिया। तापछै सवारै ऊवानू गरुडणी पार उतारिया। पछै उवे दोनूं जणा सोमांरो घर पूछिनै गया। उवे बहिन-भाई एकान्तडेरै रह्या। सोमांरै घरे मास छः तांई सेवा करी, सोमां न जांणै। एक दिन सोमां बहुवां नै पूछियौ, जु बेटा थे इतरो घर सास तौ क्यु लीपो, किसै कारण। ताहरां बहूवां

लोग बोलते भी नहीं रहे हैं और चुग्गा भी नहीं खा रहे हैं, इसका क्या कारण? तब छोटेवाला बच्चा बोला—मां, हम लोग चुग्गा किस प्रकार कर सकते हैं। हमारे नीचे (के स्थान में) ब्राह्मण भूखे बैठे हैं। यदि उनका काम बने तो हम चुग्गा कर सकते हैं। तब गरुड़ की स्त्री नीचे आई। आकर पूछा—आप कौन हैं? कहाँ जायेंगे? तब उसने कहा—आप भोजन करें, अन्न सामग्री आदि मैं आपको दूंगी और कल आपको समुद्र पार कर दूंगी। तब उनको अन्न दिया—उन्होंने भोजन किया। उसके बाद दूसरे दिन गरुड़नी ने उन्हें समुद्र पार किया। फिर वे दोनों सोमां का घर पूछकर (उसके) यहाँ गए। वे दोनों बहन-भाई अलग स्थान में रहने लगे। छः महीनों तक सोमां के घर की सेवा की, सोमां को मालूम भी नहीं हो सका।

एक दिन सोमां ने अपनी बहुओं से पूछा—बेटी, आपने इतना सुन्दर घर को क्यों साफ किया है—इसका क्या कारण है? तब

कह्यौ जु माजी म्हैं लीपा नहीं छां। तौ कुंण लीपे छे। ताहरां दिन एक सोमां जासूस कीवी। पाछली राति देखे तौ ब्राह्मणी लीपै छै अर भाई पाणी ल्यावे छै। ताहरां सोमां कह्यौ, थे कुंण छौ। उवै कह्यों—म्हैं ब्राह्मण छां। किसै कारण इतरौ हठ कियौ—सू कहौ। ताहरा भाई कह्यौ—म्हारै काम छै, ईयै वास्तै म्हैं आया छां ताहरां सोमां उवांरै साथै चली। वांसै बहूवाँ नूं कह्यौ—जुथे कोई बिगाड़ हुवै तो उपाडौ मतां, ज्युं होवै सूं ढांकि राखि ज्यो। सोमां उवां रै साथै गई। ब्राह्मणी रौ विवाह कियौ। सप्तपदी मैं कन्यारौ वर शान्त हुवौ। ताहरां सोमां एकै परिक्रमा तौ सोमवती रै दिन अश्वथरी, तेरौ पुन्न दियौ। तै कर बालक जीवियौ। उठि ऊभौ हुवौ, सगळे आनन्द बधाई हुई। सोमां आपरै घरै गई। आगै देखै तो घर मैं दोइ उपद्रव हुवा छै, ढांक

बहुओं ने कहा—हम लोग लीपा-पोता नहीं करती हैं। तो फिर कौन लीपता है ? तब फिर एक दिन सोमां ने जासूसी की। पिछली रात्रि में देखा—ब्राह्मणी लीप रही है और भाई पानी ला रहा है। तब सोमां ने कहा—आप कौन हैं ? उन्होंने कहा—हम ब्राह्मण हैं। कौन कारण इतना जिद्द कर रहे हैं—बतावें। तब भाई ने कहा—हमारा आपसे काम है—इसलिये हम लोग आये हैं।

तब सोमां उनके साथ चली। जाते समय बहुओं से कहती गई—यदि कोई कार्य में (पीछे से) कोई खराबी हो तो उसे आप उठाना मत, जैसा हो उसे उसी प्रकार ढ़ाँक कर रख देना। सोमां उनके साथ चली। ब्राह्मणी का विवाह किया। सप्तपदी (विवाह के समय सात वचन) में कला का वर मृत्यु को प्राप्त हुआ। तब सोमां ने एक परिक्रमा का पुण्य (जो सोमवती के दिन पीपल की परिक्रमा किया करती थी) दिया। इस कारण बालक जीवित हो उठा। वह खड़ा हो गया, सब

राषिया छै। पछै सोमवती अपावस्या आई, ताहरां सोमां फूल ले अर जाइ अश्वथरी परिक्रमा कीवी। पहिली एक अष्ठोटर शत परिक्रमा कीवी, तांहरां पहिली पडियो हुंतो सूं जीवायो। ता पछै वळै परिक्रमा कीवी। बीजी परिक्रमा पूरी हुई ताहरां बिन्हें पड़िया हुता सू जीविया। ता पछै तीसरी परिक्रमा देअर घरै आई। सगळे आनंद विनोद हुआ। सोमवती अमावस्या रै दिन जिका स्त्री अश्वथरी परिक्रमा धर्मशील सुं कर सै तिकै नै ईयै प्रकार रै पुन्य रौ फळ हुस्यै। इति सोमवती अमावसि अश्वथरी परिक्रमा।

लोगों में आनन्द और बधाइयां हुई। सोमा अपने घर आई।

यहाँ आकर वह देखती है कि घर में दो उपद्रव हुए हैं, उन्हें ढाँक कर रखे हैं। इसके बाद सोमवमी अमावस्या आई—तब सोमा ने पीपल की परिक्रमा की। पहले एकसौ आठ परिक्रमाएं कीं, इसपर जो पहले पड़ गया था, वह जीवित हुआ। इसके उपरान्त फिर परिक्रमा की। दूसरी परिक्रमा पूरी हुई—इसके उपरान्त तीसरी परिक्रमा देकर घर आई। सभी आनन्दित और खुशी हुए। सोमवती अमावस्या के दिन जो स्त्री पीपल की परिक्रमा धर्म-ध्यान के साथ करेगी, उसे इस प्रकार के पुण्य का फल होगा।

१६–अथ श्री सनीसर जी री वात लिख्यते

श्री उजेणी नगरी, श्री विक्रमादित्य राजा राज करै छै। तिण प्रस्तावै विक्रमादित्य नूं शनीसर-बारमो आवै छै। एकै प्रस्तावै राजा सिकार चढियो छै। एक सूवर वांसै उतरियो। फिरतां फिरतां सुग्रर लगोबग जायै छै। कितरी एक धरती युंहीज गयो। साथ सगळो वांसलो तूट थाको, घोड़ो पिण तूट थाको, राजा पिण तिसिड हुग्रो। तिसियै थकै अठै दुख पायो। राजा बाग खांच ऊभो रह्यो। सूग्रर ग्रलोप हुग्रो। घोडा रा पडत ही प्रांण छूटा। तिण प्रसतावै एक गोवाळियो ग्रायो-राजा नै बोलायो। तिसयो थको बोल सकै नहीं–हाथ सूं बोक मांडी। गोवाळियै राजानूं थोडो पाणी पायो। राजा सावचेत भयो। घोडा रो पिलांण सोनै री साकत थो सो गोवाळिया नै दीनौ।

कथा श्री शनिश्चर जी की

उज्जेनी नगरी—श्री विक्रमादित्य राजा राज्य करता है। उस समय विक्रमादित्य को बारवां शनीश्चर ग्राया है। एक समय राजा शिकार को चढ़ा है। एक सूग्रर के पीछे उतरा। इधर-उधर भागते बहुत दूर तक वह सूग्रर के पीछे लगा रहा। कितनी दूरी तक तो वैसे ही गया। सभी साथवाले थककर पीछे रह, घोड़ा भी थककर रह गया, राजा भी प्यासा हुग्रा। प्यास के मारे यहां दुःख पाया। राजा घोड़े को बाग पकड़ कर ठहर गया। सूग्रर ग्रदृष्य होगया (ग्रलोप होगया)। घोड़े के गिरते प्राण निकल चले। उस समय एक ग्वाला ग्राया। राजा को (उसने) बुलाया। प्यास के मारे बोला नहीं जा सका—हाथ से पानी पींने के लिए ग्रञ्जली मांडी। ग्वाले ने राजा को थोड़ा पानी पिलाया। राजा सचेत हुग्रा। घोड़े का पलाण (जींण ग्रादि) सोने

हिवै राजा नैडी वसती विचार नै एकै सहर आयो। आवीनै एक महाजन रै हाटै आय बैठो। बडो हाट विडांड, मोटो विवहारियो हुतो! सु दांमांसूं तूटो। लेहणा था तिकै पिण अटक गया, तिण रै हाट आय नै बैठो। साहरै, विणज घणो चालियो। धुरां धापटां आवण लागी, खत चुकावण लागो। घरै पिण हळ बहळ हुई। साह वीचारियो जे उत्तम पुरूष घरै आयो नै बैठो तिण रै प्रसादै लाभ घणो हुवो। ईतरै जीमण वेळा हुई-बोलाई नै साह विक्रमादित्य नूं घरै लेगयो। जीमायौ, जीमाइ नै माळिया मांहि विछामणो कर दीधो। आपरी स्त्री नै कह्यौ—ओ उत्तम पुरूष छै, इण रै पग छेह है, आंपांरो भलो हुओ। आंपांरै पुत्री मोटी छै, वर जोवता सो बैठां आय मिळियो। थे कहो तो इण नै परणावां तरै स्त्री कहण लागी-जिण रै पग छैरे आंपणौ भलो हुवो, धनवंत हुवा तिण नूं परणावो। तरै स्त्री कहण लागी-घणो भलो होसी,

---

का था वह ग्वाले को दिया। अब राजा नजदीक की बस्ती का सोचकर एक शहर में आया। आकर एक महाजन की दुकान पर जा बैठा। बड़ी दुकान, बड़ा उसका ठाठ—बाट, बड़ा व्यापार करने वाला था—सो पैसे हीन होगया था। उसका (लोगों में दाम) लेने थे—वह भी अटक गया, उसी की दुकान पर आकर बैठा। साह-(साहूकार) के व्यापार अच्छा चला। देनेवाले बड़े जोरों से दाम देने आने लगे—खत—हुण्डी आदि चुकाने लगे। घर पर बड़ी अमन-चैन हुई। साहूकार ने विचारा—शुभ मनुष्य घर आकर बैठा, उसी की कृपा से अधिक नफा हुआ। इतने में भोजन का समय हुआ—साहूकार विक्रमादित्य को बुलाकर घर ले गया। भोजन करवाया, भोजनोपरान्त महल में विस्तर लगा दिया। अपनी पत्नी से कहा—यह शुभ लक्षणों का व्यक्ति है, इसके पदार्पण से अपना कल्याण हुआ। अपने पुत्री बड़ी है, वर की खोज में हैं, तो यह घर बैठे ही भगवान मे मिला दिया। तुम कहो तो इसे ही

पिण भलै लगन जोय परणावो । साहरै जिम पैहली हुतो तमहीज हुओ । हिवै एक दिन साहरै राजारो बुलावौ आयो । हिवै रांणिया नै गैणा गाठां साहरी……हजूर घडावै । हजूर………घडाइजै छै । तिण प्रस्तावै एक सवालाख रो हार रांणीरै हुतो सो राजा साहनै कहण लागो, इण हार रो कीमत करावो । साह नै तेडनै हार सूंपियो । आणि नै माळियारी खूंटी मेलिये । साह मालिया में आडो हुवो, सूतां विक्रमादित्य बैठो छै । तिण मालिया में चित्रांम रो मोर सवालाख रो हार गिळियो । राजा विक्रमादित्य दीठो, पिण बोलियो नहीं । जितरै साह जागियो—हार सांमो जोयो, हार दीठो नहीं । जरै साह राजा विक्रम नै पूछियो—हार बतावो । जणा बिहुं मांणस था—तीजो मांणस कोई आयो नहीं । कैतो हार मो मांहै—कै तो मांहै ।

ब्याह दें । तब (साह की) स्त्री कहने लगी—जिसके पदार्पण से अपना कल्याण हुआ, धनवान हुए, उसी को विवाह दो । फिर स्त्री कहने लगी—बड़ा अच्छा होगा, यदि शुभ लग्न देखकर शादी करदें । साह की जैसी पहले स्थिति थी वैसी हो गई ।

अब एक दिन साह को राजा का बुलावा आया । ये अब गहने-गांठे साह की मारफत बनवाये । इसकी मारफत बनने लगे । इसी बीच में एक लाख का हार रानी का था, सो राजा साह को कहने लगा, इस हार की कीमत करवावो । साह को बुलाकर हार सौंप दिया । आकर महल में खूंटी पर रखा (खूंटी पर टांगा) । साह महल में थोड़ी देर के लिये सो गया, विक्रमादित्य बैठा है । उस महल में मोर का चित्र मांड़ा हुआ है । उस चित्र के मोर ने सवालाख के हार को निगल लिया । राजा विक्रमादित्य ने देखा, लेकिन (वह) बोला नहीं । इतने में साह जागा—हार को सामने देखा—हार दिखाई नहीं दिया ।

विक्रमादित्य नूं सोच हुइ रह्यो—कहूं जे चित्रांम रै मोर हार गिळियो तो कोई मानै नहीं। तरै तिण कह्यौ—हूं न मांनूं। हिवै सुसरो जमाई झगड़ता राजा पासै गया। राजा ! ओ कोई परदेसी छै—हूं ओ ळखूं नहीं। माहरै हाट आइ बैठो हुतो। भलो बींद देखिनै पुत्री परणाई। पिण—पलोतरा लखण जांण्या नहीं। आवो माळिया में बैठो—तितरै माळिया मांहै जाइनै हार खूंटी टेरयो हुंतो। बिहुं टाळ तीजो मांणस और को आयो नहीं—इणै चोरयौ। हिवै मुकर गयो। राजा न्याव करौ। राजा कह्यौ परदेसी हार परो दै। विक्रमादित्य कहण लागो, हूं न जाणूं—मैं न मेलियो। राजा हुकम कियौ—फिळसै जाय चौरंगो करो। चोरंगो कीधो। कितराक दोनां तांई विक्रमादित्य आ अवस्था भोगवी। तठै अवस्था भोगवतां साढो सात बरस पूरा हुवा।

तब साह ने राजा विक्रम से पूछा—हार बताओ। दो ही व्यक्ति थे, तीसरा कोई व्यक्ति आया नहीं। या तो हार मेरे पास है या फिर तुम्हारे पास। विक्रमादित्य को सोच हो गया—यदि कहूँ कि चित्र वाले मोर ने हार निगल लिया, तो कोई मानेगा नहीं। तब उसने कहा—मैं नहीं मानता (मैं नहीं जानता)। अब ससुर और दामाद लड़ते-झगड़ते राजा के पास गए। राजन् ! यह कोई विदेशी है—मैं जानता नहीं। मेरी दुकान पर आकर बैठा था। अच्छा वर समझ कर कन्या की शादी इससे की। लेकिन दुष्ट के लक्षण नहीं जान सका (लक्षण जानने में नहीं आ सकें)। महल में बैठा था—इतने में महल में जाकर हार खूँटी पर टांग दिया। हम दोनों के अतिरिक्त तीसरा कोई अन्य आया नहीं—इसी ने ही चोरा है। अब इन्कार कर गया। राजन्, न्याय करें। राजा ने कहा—परदेशी, हार दे दो। विक्रमादित्य कहने लगा, मैं नहीं जानता, मैंने नहीं रखा। राजा ने हुक्म दिया, फिल[1] से जाकर

[१] एक स्थान विशेष

दछ्या बाहुड़ी—तरै साहरी बेटी कहण लागी—म्हारै तो भरतार विक्रमादित्य छै–इण भव ए भरतार छै, इणरी खिजमत करीस। हिवै खिजमत करतां राजा मरणरो भाव छौड़्यो। हिवै खिजमत करतां थावर उतरियो। तिण समै थावर आपरै डील आयो, परतिख हुवो विक्रमादित्य कहण लागो—राज थी चूको, कुटंब थी टाळ्यौ, चोरंगो करायो। जिणनूं बारमो थावर आवै तिणनूं सुख कठाथी। थावर हस्यौ—हसनै प्रसन हुवो। राजा कहै दिन-दिन सराप हुवो, हिवै हाथ पग सूजण लागा। थावर कहण लागो, तूठो ! मांग-मांग !! राजा कहण लागो—तूं सजपूज आवै, तरै राज थी चुकायो, कुटंब थी टाल्यो, हाथ-पग बढ़ाया, चोरंगो कीधो, घणो दुख दीधो। हिवै उतरियो, तरै हाथ-पग नवा आया। माहरै हिवै सहू थोक छै—हुं मांगू किणही

इसके हाथ-पैर काट दो। उसे चौरङ्गा किया। कितने ही दिनों तक विक्रमादित्य ने (अपनी) यह हालत भोगी। इस प्रकार इस अवस्था को भोगते साढ़े सात वर्ष बीत गये। दशा पलटी—तब साह की पुत्री कहने लगी, मेरा पति तो विक्रमादित्य है—इस जन्म का यही पति है। मैं इसकी सेवा करूंगी। अब सेवा करते राजा ने मरने का भाव छोड़ा। इस प्रकार सेवा करते शनीश्चर की दशा उतरी। तब शनीश्चर अपने शरीर में उतरा—प्रत्यक्ष दर्शन हुए।

विक्रमादित्य कहने लगा—राज से हटाया, कुटुम्बी लोगों से दूर करवाया, चौरङ्गा करवाया (हाथ-पैर कटवाये)। जिसे बारवां शनिश्चर लगे, उसे सुख कहां ? शनिश्चर भगवान् हँसा—हँसकर प्रसन्न हुआ। राजा ने कहा—दिन-दिन शाप लगता रहा—अपने आप हाथ-पैर सूजने लगे। शनीश्चर भगवान् कहने लगा—तुम पर प्रसन्न हूँ मांग ! मांग !! राजा कहने लगा—तू सज-धज के साथ आया, तब

कनै नहीं। हूं विक्रमादित्य पर दुख हरता सो विदरूप हुओ। तिणरो दुख दूर कर। सनीसर कहण लागो। देवता रा दरसण यूं ही आपै निरफळ न जायै, तिण सूं हूं तूठो, तूं मांग! राजा कहै—वर द्यो। थावर वर दीधो। तूं, जिण नै बारमौ, जनमरो चौथो, बीजो, आठमो आवतो जे केई नूं कहै, अथवा बात सांभळै तिण नूं ई ग्यारमो रासरो फळ देसी—पीडा न करती। आ बात लिखनै देस परदेस चलाई, घरै संका रही। इनै सराप राजानुं उतरियो देखनै विवहारियो तरै कहै—घरै पधारो। विक्रमादित्य नै घरै ले गयो—पांच मांणस आय बैठा। पांचे ही बैठां, चित्राम रै मोर हार-गिळियो तिको काढियो खूंटी मूंकियो। खूंटीरी खूंटी मेलियो-पांचे ही बैठा। राजा तांई बात हुई। राजा विवहारिया नै तेडायो।

राज्य से छुड़वाया—परिवार से दूर किया, हाथ-पैर कटवाये, चौरङ्गा बनाया—बहुत दुःख दिए। अब उतरे, तब हाथ-पैर नये आए। मेरे अब सब आनन्द है—मैं किसी से भी कुछ नहीं मांगता। मैं विक्रमादित्य जो दूसरों का दुःख दूर करने वाला-कुरूप हुआ। उसका दुःख दूर करके शनीश्चर कहने लगा। देवता का दर्शन ऐसे ही निष्फल नहीं चला जाता—इसीलिए मैं प्रसन्न हुआ हूँ—तू माँग!!

राजा कहता है—वरदान दो। शनीश्चर ने वरदान दिया। तू जिसे बारवाँ, जन्म का चौथा, दूसरा, आठवां आता जो कहे, या बात सुने, उसे ग्यारवीं राशि का फल दोगे—उसे पीड़ा नहीं करोगे। यह बात लिखकर देश-परदेश भेजी—घर पर भी भेजी। यह शाप राजा का देखकर व्यापारी कहता है—घर पर चलें। विक्रमादित्य को घर पर ले गया—पांच व्यक्ति आकर बैठे। पाँचों के बैठे चित्र के मोर ने जो हार निगला था—उसे निकाला, खूँटी पर रखा। उसी खूँटी ही पर

विवहारियो हार लेनै पेस करण नै राजा रै पासै गयो—राजा, चित्रांम रै मोर हार गिळियो थो तिको मोर पाछो खूंटी मुंकितो सगळा सनमुख—इणरो दोस कोई नहीं। राजा कहण लागो—पाहुणा नै तेडो, विक्रमादित्य नै तेडो। रूप-सरूप सरीर देखनै राजा हेरांण हुओ—मैं चोरंगो कियो थो, नै माजो हुवो सो कासूं प्रस्तावै, राजा कहण लागो। राजा आप परकासियो। तरै विक्रम बात कही—सनीसर पूजतो थो तिण पीड़ा कीधी, थारो दोस किसो! हिवै सनीसर प्रसन हुओ, मोनै वाचा दीधा छै। देस-परदेस ए बात लिख मेलो जु माहरो साको रहै। ए बात दफतरे बिखांणी देस परदेस सांभल-सी तिणरै सु प्रसन्न होसी सांभळिनै मेली। राजा पिछतावो करण लागो—अन्याय मैं कीधो। विक्रमादित्व कह्यौ, थांरो दोस कोई नहीं, ग्रह पीडा

उसे रखा—पाँचों ही (व्यक्ति) बैठे थे। राजा के पास बात पहुँची। राजा ने व्यापारी को बुलवाया। व्यापारी हार लेकर—उसे उपस्थित किया। राजा के पास गया—राजन्, मोर के चित्र ने हार को निगला था, उसे मोर ने वापिस खूँटी पर लाकर रखा सबके सामने—इसमें उसका कोई दोष नहीं। राजा कहने लगा—अतिथि को बुलावो (विक्रमादित्य को बुलावो)। सुन्दर रूप शरीर का देखकर, राजा हैरान हुआ। मैंने इसे चोरङ्गा किया था, यह अङ्गोंवाला हुआ। यह कैसे? इस विषय में राजा कहने लगा। राजा ने स्वयं कहा। तब विक्रमादित्य ने बात कही—शनीश्चर की पूजा किया करता था, उसने कष्ट दिया, तुम्हारा क्या दोष? अब शनीश्चर प्रसन्न हुआ। हमें वचन दिए हैं। देश-विदेश (आप) यह बात लिखकर भेजें जिससे मेरी यह बात (प्रसिद्ध) रहे। यह बात आपके दफ्तर में लिखवानी, देश-विदेश सुनेंगे—सुनकर प्रसन्न होंगे। सुनकर (समझकर) भेजी।

कीधी । राजा कहण लागो तिण प्रस्तावै— आंपणै वड कुमार डीकरी छै, राजा दिक्रमादित्य नै परणाइजै। उठनै ओछव-मोछव करनै कुमरी विक्रमादित्य नै परणाई। घणा हसम घणा बाजा गाजा करनै उजेणी नगरी पोहचाया। सनीसर देवता पहीली विक्रमादित्य नूं पीड़ा कीधी तिसड़ी किणही नूं मत करजो । अनै पछै वर देनै सु परसन हुवो विसड़ो सगळां ही नै होज्यो । ए बात कहै अथवा सांभळै अथवा लिखै तिण नै ग्यारहमी रास को फळ देसी, शनीसर माठो ही भलो करसी । इति श्री शनिजी री वात सम्पूर्ण ।

राजा पश्चाताप करने लगा—मैंने अन्याय किया ।

विक्रमादित्य ने कहा, तुम्हारा कोई दोष नहीं—ग्रहों ने पीड़ा की। उसी बीच में राजा कहने लगा—अपने एक बड़ी कुँआरी लड़की है, राजा विक्रम को विवाह दें । उठकर उत्सव आदि करके (उसे) विक्रमादित्य को विवाह दी । बहुत-सा सामान (देकर) बाजे-गाजे के साथ उज्जेनी नगरी में पहुंचाया । शनीश्चर देवता ने जैसा विक्रमादित्य को कष्ट दिया, वैसा किसी को कष्ट न दें । उसके उपरान्त वर दे करके जैसा (शनि) प्रसन्न हुआ, वैसा सब पर होना । यह बात जो कहे या सुने या लिखे, उसे ग्यारवीं राशि का फल देगा—शनीश्चर यदि बुरा हो तोभी अच्छा ही करेगा ।

परिशिष्ट

॥ देव्यैनमः ॥

एकादसी प्रबंध लिख्यते ॥

सेत चीर सोभती, हंस वाहणे हसंती ।
वयणनेत्र विकसंती, कांनि कुंडळ झळकंती ।
वीण राग वावती, चूडि कंकण खळकंती ।
जपै जगत्र जयवंती, सीसवेणी सळकंती ।
सारदा मात ब्रह्मा सुती, नयणौ भगतां निरखती ।
संपत्ति सुख द्यौ सुरसती, कहै एम अमरो जती ।१

दूहा—

जती सती पिण सारदा, समरै एकै चित्त ।
लाख लील विद्या लहै, ध्यान धरै जो नित्त ।१
कुमारी कवि मात नै, अरज करूं कर जोड़ि ।
गुण पभणु एकादसी, पूरै मनरा कोडि ॥२
परबै परबै व्रत कह्या, व्रत पिण परब न होय ।
साठि अधिका तीन सै, तुलि एकादसी न होइ ॥३
जुग्गि अनंता वहि गया, जासी जुगा अनंत ।
कहै न किन ही पंडितै, आदि न लद्धो अंत ॥४
कृतयुग केई परठिया, केई द्वापर वत्त ।
केई त्रेतारी कथा, केई कळियुग व्रत्त ॥५
भेद अठारह भाखीया, आगम वेद पुरांण ।
कीधा न्यान रिखीसरै, जुदा-जुदा गुण जांण ॥६

तिथि तूटै जदि बारसैं, व्रत कीजै एकंत ।
वधती होई एकादसी, दूजी करिजै तंत ॥७॥
पैताळीसां ऊपरै, घड़ी जिकै जदि होइ ।
सो बारिस हरि वासरइ, व्रत लंघै सब कोइ ॥

॥ अथ परिहां ॥

अभयाइं एकोत, प्रथम दिन कीजीए ।
भी बारिस एकोत, करी फळ लीजीए ॥
कांसो मास मसूर, चिणा मधु सालणौ ।
परिहां मैथुन भोजन अन्न, परायो पालणौ ॥१॥
लोभ हिंसा वळि तेल नृ माल्य न लोपीए ।
दसमी बारसि दीह एता सवि गोपीए ॥
दांतन मैथुन दीह, सूए नवि पान रे ।
परिहां अनछांण्यौ जो नीर करै व्रत हांनि रे ॥२॥

॥ दूहा ॥

तेरसि मांहै पारणौ, कोडि ज घण फळ होइं ।
दसम वेधै जो करै, तो गंधारी ज्युं होइं ॥१॥
बारह मास चोवीस पख, नाम कथा कहूं साखि ।
सानिधि करि ज्यो सरसती, वीनवीयौ तुझ दाखि ॥२॥

॥ तो छंद सारसी ॥

दाखीयौ जंबू दीप दीपह दान जळधर दीपतो ।
जिमि चंद्र उडीयण मंझि मोटो कांम रूपै जीपयो ॥
गिरमेर डुंगर धातु सोव्रन छंद मांहै सारसी ।
वैकुंठ दाता धम्म माता वडौ व्रत एकादसी ॥१॥

महि सेस मणिधर–चीर अंबर इन्द्र देवां ओपतो।
हरिचंद सत्तै तेज सूरिज दैत रांवण कोपतौ ॥
ज्युं सुगुरु वांणी सची रांणी, हेत हेतै मा त्रिसी।
वैकुंठ दाता ध्रम्म माता वडो व्रत एकादसी ॥२
ज्युं शास्त्र गीता सती सीता देवि रंभा मोहती।
वड वीर हनुमंत बांण अर्जुन लूण सोहै रसवती ॥
गुर नाथ गोरख माघ कविता बुद्धि बोलंण पारसी।
वैकुंठ दाता ध्रम्म माता वडो व्रत एकादसी ॥३
अनहद वाजा राम राजा नदी गंगा निरमळी।
जळ प्रीत मछी अश्व कछा गजैं रावण मदगळी ॥
वर वृत्त जंबू हंस पंखी रूप देखण आरसी।
वैकुंठ दाता ध्रम्म माता वडो व्रत एकादसी ॥४

॥ दूहा ॥

एकादसी हूं ऊधस्या, कुण कुण मानव देव।
नाम कहूं त्यांरा हिवै, तरि माता हरि सेव ॥१

॥ छंद भुजंगी ॥

तस्य ताहरी सेवथी तीन लोकै।
धरया व्रत जीए सदा पाव धोकै ॥
तवी वात त्रेता युगै देव तोरी,
नागपुर राज मुचकंद धोरी ॥१
महा इन्द्र यम सोम कुबेर मैत्री।
पुगट्टी भगा चंद्र पुत्री सुपुत्री ॥
कला पुण्य करतूत खित्री कमाई।
जोर वर जोध सोभन्न नामै जमाई ॥२

आवीयौ जरै सास रै सूर आंणौ ।
टळै कर्म एकादसी देख टांणौ ॥
रही नगरी साव व्रतै निरारी ।
करै लाल बद्धौ जमाई करारी ॥३
भरै मृगली भड़मल्ल सींगाळ माभी ।
भिलै भूलरै मृगालीमाल भाभी ॥
निरखै तठै ब्रह्म सोमेस नामै ।
पुगट्टी पुरी राति देवांस पामै ॥४
भला माळिया तखत दीवांण भारी ।
सदा रयण सोव्रन्न भळकंत सारी ॥
इखै राज सोभन पामै अचंभौ ।
रह्यौ राति छांणो जिसौ रांनि थंभौ ॥५
प्रभातै चल्यौ ब्रह्म सोमेस पुहतो ।
वीर मचकुंद सु राति वलि वात कहतो ।
दाखी तिका वात जे नयण दीठी,
मिल्या जमाई सुं करै बात मीठी ॥६
क्युं ही नगरी हिवै थिर वास थापौ ।
आखै जमाई एकादसी पुण्य आपौ ।
जिका कातिकी देव तेतीस जागै ॥
तिका नांम प्रबोधनी मुगति मागै ॥७
देतां चद्रभगा ए पुण्य दीधौ ।
पुरी स्वर्ग लोकै सदा काज सीधौ ॥
हरि राधा सदा पुजि वाहु सकीजै ।
सरगा पुरी जाय अमृत पीजे ॥८
मगसिर अंधारी मानवी शत्रुनासी ।
किपै कर्म तोडै महापाप पासी ॥

वळै द्वापरै वात दूजी वंचाणी।
कासिब तणी दिव राणी कहांणी ॥६
पुत्री तियैरी ताल जंघा प्रगट्टी।
मुरु दैत बेटौ देवां रैत कुट्टी ॥
तलक्के भये मृगां ज्युं जाइ त्राठा।
नयर चंद्रावती देव तेतीस नाठा ॥१०
पुकारचा जई महारुद्र पासै।
वदै छूटिस्यौ नेट भगवान वांसै ॥
करी भीर देवांतणी युद्ध कीधौ।
दड़क्कै चमक्कै दड़ादोट दीधौ ॥११
धमक्कै चमक्कै धरा धोम लागौ।
ब्रह्मंड जाए वड़ो खग्ग वागौ ॥
पड़ै टुंक पहाड़ फाड़ै फटक्कै।
तरां झंगरा झाड़ तूटै झटक्कै ॥१२
भिड़ै दैत सूं माधवौ तेथि भागौ।
लटक्कै वळै जेम लंकाळा लागौ ॥
वहै माधवौ वांह युद्धां विलुद्धौ।
अठै केसवौ आंप आंपै अलुद्धौ ॥१३
मरद्दां मरद्दै मिल्यां युद्ध मंड्यौ।
छिलै छयल सामुद्र मरयाद छंड्यौ।
डस्या इन्द्र नागेद्र देखै डहक्कै।
तरै बोलीयौ ताल जंघा तणौ देत बहक्कै ॥१४
पहिल्ली देवां तणौ थाट मैंही पजायौ।
जो ए ताल जंघा तणौ पुत्र जायौ ॥
वदे दादि ऊथेड़ि नांखुं वहिला।
पुगट्टा देवे हाथ दीठा पहिला ॥१५

अठै केसवो जाई नाठौ अपूठौ,
झपटीयौ दैत लारा वहै जौर झूठौ ।
जायै बदरी संखावती बार जोणी,
सूतौ गोपीयां नाथ सिर सडढि ताणी ॥१६॥
तठै आवियौ दैत पगा पग्गी जोई,
हुसी बात हिव हुण हार होई ।
ऊपनी मात एकादशी अंगमांहै,
बिहूं सोत्रनी चूड़ खळकंत बांहै ॥१७॥
विकसते नैत्र उरि चंद बदनी,
पक्की जिसी दाड़मी रदन्नी ।
काळा डंबरा बीजळी कांति मांहै,
खिळकी भिलकी सळकी सला है ॥१८॥
कटक्की भटक्की तटक्की तड़क्कै,
कियौ तालजंघा तणौ दैत कुटक्कै ।
भय भांज बैठी भगवांन वांसै,
श्रीरंग थयौ सामळौ तेथी सांसै ॥१६॥
कहै सांवळौ कियैरी कौण बाळा,
सर्वाङ्गी ताहरी हूं कंतकाळा ।
शत्रु विनासी माहरौ नांम सांमी,
करूं सेवकां कोडि वंछित कांमी ॥२०॥
सांभळै तरै तूठ सारंग प्रांणो,
जठै आपरी सकती आपो आप जांणी ।
कहि मुर दानवी कथा बात बीजी,
वळै वखांण सूं कथा व्रत तीजी ॥२१॥

वदीतो जगत्रें वेखानरस राजा,
वजै कोडि निसाण वाजित्र वाजा ।
पिता जास जाए जठें नरग पड़ीयो,
गुडे गोडवै घणै दुःकरम गुड़ीओ ॥२२॥
आवै सुपन्नै कह्यौ पुत्र आखुं,
दुखां तणी वात किण ठाम दाखुं ।
ऊधरै नगरथी जो आज मोनै,
सराहै स को पुत्र तिण वार तोनै ॥२३॥
चितै चींतवै तदा रीसीराज बूझै,
सदा अग पाताळ तृण लोक सूझै ।
इसौ आज परक्त रिसी राज जांणै,
रळी रंग पूछै वखांनरस रांणै ॥२४॥
वदै साच रिखि राज वाणी वदीती,
भजौ शुक्ल एकादशी पापभीती ।
मगसिर तणी मानवी मोख दाता,
करै वैखांनरस्स पुन्य करतूति राता ॥२५॥
पिता पुत्र माता गुरु बंधु प्रीता,
लहै नीच भी ऊँच गति लाष नीता ।
अवगत्ति थी तात कीधौ उद्धारं,
वधी जगत मैं राज वांणी वधारं ॥२६॥
वळी पोस एकादसी नांम सफळा,
महिमावती महिमवंत भूप रिखळा ।
महा पातकी पुत्र लुंभक नामंइ,
परौ काढीयो रन्नमइं ठाम ठामैं ॥२७॥

भमइं जीवि हिंसा करतो भिखारी,
कन्हुइ चीर काप्पौ नहीं सीतकारी ।
फिरत्तौ गिरत्तौ पड्यौ भूख मरत्तौ,
भम्यौ जीव लाधौ न को पेट भरत्तौ ॥२८॥
लीया वनफळ खाय वासीतलागै,
पड्यौ पींपळां हेठि एकादसी पुन्य जागइ ।
प्रभाते नारायण जी आप तूठा,
गया भव तणां पाप अलगा अपूठा ॥२६॥
पंच हजार वरसइ लगई राज पाम्यौ,
नरै नारि नगरी तणै सीस नाम्यौ ।
लुंभक तणी बात सगळै लखाणी,
सफळा एकादसी सहू जगत जांणी ॥३०॥
ऊजाळी एकादसी पुत्र प्राजा,
नगर भद्रावती करै केतु राजा ।
अश्व उपाड़ीयौ गयौ भूप अटवी,
वसै वइश्वदेवा सरोवरइ स्नांतटवी ॥३१॥
पगै लागि राजा तियै पासि बैठो,
सही पुत्र नी बात पूछै स हेठौ ।
रिखी आखियौ एकादसी पुन्यरासी,
थिरी व्रत थाप्यौ सही पुत्र थासी ॥३२॥
कियौ व्रत एकादसी पुत्र जांमै,
जगत्रइं वदीतां पुत्र पांच पामै ।

दूहो

पाया राजा पांच सुत, हरख्यो राज सुकेत ।
माह अंधारी मानवी, हरइ पाप सुख हेत ॥

छंद मोती दांम

हसि हेत धरै हरि पूछै हीर,
धमाराइ युधिष्ठर साहसधीर।
खपी अखोहिणी पाय अढार,
आखौ कोइ उपाय जिणहोइ उधार ॥१॥
अन्तर जांमी आखइ भेद,
वदै गोपाल सुदालभ आगै वेद।
किसनाछ तिल एकादशीय करंति,
तिण पुन्यै जायै पाप तुरन्त ॥२॥
करइ एकादशी युधिष्ठर कृत,
वळै विध सेती षट तिलावृत ।
नासै तसु पातिक जाणै ताम,
करै व्रत मांहि ठामौ ठांम ॥३॥
हिवइ उजवाळी करो धरि हेत,
जया इणनामइ पामैं एहि ।
जइत हरइं जगि पाप संताप सराप,
दियै दरसण केसव आपौ आप ॥४॥
अपछर इन्द्र तणी इक बाळ,
रमइभिळ इन्द्र छभा सु रसाळ ।
परिवारइ नाइका कोटि पंचास,
रहइ रखवाळी सेवा पास ॥५॥
इकइ दिन रामति आवै इन्द्र,
वन निंदत अपछर लेइ वृंद ।
करइं तिहां नाटक वद्ध बतीस,
बहु लाधी इन्द्र तणी बकसीस ॥६॥

इक अपछर माळी सेती संग,
रमी पुप्फवंत धरइ बहु रंग ।
जाणी इंद्रै अपछर बात,
सरापै इंद्र करै अतिपात ॥७॥

प्रलापइ अपछर होई पिसाच,
पड़ी तिण पाप संताप पराच ।
सहै त्रिस भूष अनंत सरीर,
न भख्य न चख्य लह्यौ तिण नीर ॥८॥

पड़ी तिहां पीपळ हेठि पचारि,
व्रत एम एकादसी होई विचारि ।
दरसण केसव प्रहसम दीठ,
पुहती स्वर्ग लोक अपछर पीठ ॥६॥

मनि माह ऊजाळी एही मन्न,
बहु पाप संताप हरइ सुप्रसन्न ।
हिवइ मुझ सारदां अविरल देई मत्ति,
गुण गाऊं रघुनाथ का विजै एकादशी व्रत ॥१०॥

छन्द भुजङ्गी

विजै एकादसी फागुणइ मासि विरत्ति,
धुग धन्नि पांमइ घणुं जाइत धरत्ती ।
करै त्रेता युगइ राज दसरथ राजा,
बाजै कोडि छप्पन नीसांण बाजा ॥१॥

सदा राम सिरदार सुभ रांम भाई,
भलो भींच बळवंत लखमण भाई ।

दसरथ राज वनवास दीधौ,
कर जोड़िवै रांम प्रणांम कीधौ ।।२।।
रह्या वनवास जई राम सीता,
पवाडै भळै भाई लखमण प्रीता ।
कपटी रांवणइं सीत अपहार कीधी,
पुसी भरै दइत बिखवेल पीधो ।।३।।
हुइ चित चिंता सती केण हारी,
कहां केण आगै कथी के करारी ।
दया देव दालभ्य रिख थांन दीठौ,
करै सेव पूछै मुखै वयण मीठौ ।।४।।
गई रावणै जानुकी गेह गौरी,
मिटइ केम चिंता बुझुं वात मोरी ।
विजै एकादसी कही वात राखी,
सरइ काज इण व्रत थी जगत साखी ।।५।।
करइं व्रत एकादसी रांम राजा,
जुडइ वानरां सैन सवे संप काजा ।
दळां उळटै आवि दरीयाव कांठइं,
हुइव एकठा सांमिसुं गुझ गांठइ ।।६।।
हळाबोळ दरीयाव हाळक हलोलै ।
करइ गाज आवाज झाझा कलोलै ।
गडकै गडूडै ब्रह्मंड गाजइ,
महा मल्ल देखै भय भीम भाजै ।।७।।
करइ आभ सूं वात दरिदाव काळौ,
चलावइं महिरांण सूं कौण चाळौ ।

प्रभू दाखीयौ पाथरै पाज बांधौ,
सुर करै सिला सूं लिसूं सूल सांधौ ॥८॥
तठइं राम रै नांम पाथर तिराणां,
जड़ी च्यार सइ कोस पाथर जड़ागा।
लपकै लंगूरा जई लंघ फेरी,
प्रभू रांम रै नांम री आंण फेरी ॥९॥
बहै तीड ज्यूं बानरां सेन बाधी,
लपेटै बलइं आपरै लंक बाधी।
उठ्यौ रावणौ दैत कोप अथारौ,
पठंट्यौ रखै पग्ग बड़गा पधारौ ॥१९॥
किलकी करै उठीया कुंभ गाजै,
महिरांवणौ पहिली चोट मांगइं।
भला निनानूं कोडि राखस भारी,
देखंतां द्रेवि दीसइं करारी ॥११॥
जुड़ै जुद्ध मातौ रुड़ै ढौल जंगी,
खीजै खइडा हथापाथ बंधति खांगी।
सभ्कै वानरां कडि दैतां संहारइं,
हणई रांखमां सैन हणूं उड कारइं ॥१२॥
मंडै राह वेध लखमण मारइं,
अली रूप आदीत किरणै अंधारै।
लपेटे राम लखमणै लंक लीधी,
वळी सीत नै जीत सहु वात सीधी ॥१३॥
आनंदइ अयोध्या सीतले राम आया,
मिलै मानिनी रंग मोती वधाया।
विजै एकादसी जगत मइं बात वाधी,
सही इणै पुन्य थी रामजी लंक साधी ॥१४॥

दूहो—साधी लंका राम जी, इण व्रत थी अतिरंग।
कीजै मन धीरप करै, वळि आमली अभंग ॥१॥

॥ नाराच छंद ॥

अभंग रंउ सेत पाख फागुणौ जोपती,
प्रसिद्ध पुरख सिद्धि रिद्धि सेवकां सु पोखती!
कटंत पाप प्रताप कोडि क्लेस वाट झांमली,
फरस्सरांम जम्म ठांम आदि व्रत आमली ॥१॥

सुश्रृष्ट एकदा मुदा करी त्रिलोक संपदा,
सुरिदं इंद फूल थी फले बळै रिखी सदा।
रचंति रर कज रक्ख छोड़ थी रंटंती रांमली,
फरस्सरांम जम्म ठांम आदि व्रत आमली ॥२॥

भंमति भूख दोख रन्न वन्न राति दिन्न लोधीयौ,
सझाड़ खाड़ वाट घाट पांन पांन सोधीयौ।
लिपै छिपै न लद्ध खद्ध झोलि मारी झाकली,
फरस्सरांम जम्म ठांम आदि व्रत आमली ॥३॥

सु सीत भीत चीत भूख दूख पीड़ियौ,
दड़क्कि हेठि आमली पडंत भुज भीड़ीयौ।
एकादसी दिनै मरै सुमति गत्ति सांकळी,
फरस्सरांम जम्म ठांम आदि व्रत आमली ॥४॥

वसूरथं चंपावती नरैस ईस नायकं,
प्रसिद्धि सिद्धि सज्ज रत्थ अश्व हथ पायकं।
सलंक वंक सुंदरी सोव्रन व्रन सांमली,
फरस्सरांम जम्म ठांम आदि व्रत आमली ॥५॥

|| दूहा ||

इणि आंवलीयै ऊधरचौ, आदै ढीव सुरत्थ ।
चैत अंधारी चित्तकारी, हरइं पाप पाप समरत्थ ||१||

|| छंद सारसी ||

समरत्थ चैत्री पुण्य वेत्री पाप मोचन सुंदरं,
लोमस्स रिखयं आइ सिखयं पाइ पूजि पुरंदरं ।
मांनद्धातं प्रजा तातं प्रश्न पूछइं पारसी,
भगवान भासी पुन्य राखी हरइ पाप इग्यारसी ||१||
दम घोख अपछर पाइ भंभर देखि मेघा चुकीयं,
च्यवन तातं पुत्र रातं सीप व्वारस कुकीयं ।
अति कोप वक्रं कीध सक्रं करइ पलचर राखसी,
भगवान भासी पुन्य रासी हरइ पाप इग्यारसी ||२||
जीव जतं भख नितं रोभ मृग रटंतीयं,
चैती अंधारी पुण्य सारी लहइन चुख अटंतीयं ।
अखरथ वृखं पडइ भखं लहइ लीला राजसी,
भगवान भासी पुन्य रासी हरइ पाप इग्यारसी ||३||
चैती उजाळं क्रमजाळं पाप बंधन भय हरं,
कामावती नांमं सुजस ठांमं व्रतै चैती वासरं ।
पूछयौ वसिष्टं राज सिष्टं महामचौ मानसी,
भगवान भासी पुन्य रासी हरइ पाप इग्यारसी ||४||
राजा दिलीपं दान दीपं रिखी आगै अखयाए,
पुंडरीक इंदं नागलोके ललित अपछर रख्यए ।
पुंडरीक आपं ललित राखस वाह लांबी तालसी,
भगवान भासी पुन्य रासी हरइ पाप इग्यारसी ||५||

दिन एक सींगी रिख देखी प्रसन्न पळचर पूछीयं,
करहि कामावती व्रतह दलिद्र भांजइ दुत्थियं ।
ललितंग कीधौ लही लीला मानसी,
भगवान भासी पुन्य रासी हरइ पाप इग्यारसी ॥६॥

नामा विरुद्धी पुण्य रुद्धी किसन पखै माधवं,
ध्रमराज आगइ कृष्ण आखै पाप हंता साधवं ।
हरचंद प्राग दलीप प्रीखत किता तारया तारसी,
भगवान भासी पुन्य रासी हरइ पाप इग्यारसी ॥७॥

परूर चक्की धंधमार रोहितास उजेसरं,
उद्धारइण व्रत पाप निव्रत देव मानवर खेचरं ।
महारुद्र मोटै पाप छूटइं ब्रह्म हित्या सारसी,
भगवान भासी पुन्य रासी हरइ पाप इग्यारसी ॥८॥

वैसाख वाळी पाष उजाली पापहरता मोहिनी,
भव पंच लखुं नरक दुखुं दुतीय नामइं लोभनी ।
पूछति रिखि वसिष्टं कहइ पाप निवारसी,
भगवान भासी पुन्य रासी हरइ पाप इग्यारसी ॥९॥

जरै पात्र बांधी लंक लीधी दैत दससिर तोड़ीया,
भिणि कोडि राखिस दैत मारै रोळि मस्तक रोळीया ।
हुई एति मोहि हित्या कैण पुण्यै तारसी,
भगवान भासी पुण्य रासी हरइ पाप इग्यारसी ॥१०॥

वासिष्ट वांणी रांम जांणी मोहनी व्रत कीजीयै,
इण पुन्य अमरा नगर जाई अधिक अमृत पीजीयै ।
जगि जेठ पहिली पखि अपरा नांम सुंदर सारसी,
भगवान भासी पुन्य रासी हरइ पाप इग्यारसी ॥११॥

दूहो

सुंदर पाप हरइ सदा, आहारइ इक चित्त।
कदइ न व्यापइ काय नई, व्याधि रोग वेपत्त ॥१॥

॥ छंद पाघड़ी ॥

वेपत्ति अंग नावइ विकार, चंपावती चंद्रसेन सार।
ध्रम काज राज धरणी उधार, इक दिन्न रोग व्यापै अपार ॥
लहै न सुख्ख काया लिगार, ...।
बाधइ जु चित चिंता विहांग, तेड़ीया राजवैदंग जाण ॥
कारी न काइ लगै परांग, वळि चिंतै मन राजन विनांग।
पूछीयौ व्यास सुकदेव राज, ऊपनौ रोग व्यापै अकाज ॥
जिण व्रत रोग जाये किलेस, अप्परी नाम जेठी उवेस।
व्रत कीयौ राज मनि घणौ कोडि, खयगया रोगि गइ देह खोडि॥

अपरा एकादसी सुभ सुदि जेठ, भावठि भूख नां होइ भेट।
हिवइ निहजळा नांम हरि भगत हेत, पूछंति भीम व्यासीं समेत ॥
कहइ भीमसेन मुझ भूख क्रम, धरु केम तृपत करू कवण सुध्रम।
धापूं न पेट मंण लाख धांन, पामुं न तृपति खांणै न पांन ॥
भड़ भइई उदर वृकाग भूख, कूंता सुमाता ज्यै ऊपनौ कूख।
मोदक देहजो माहरी माय, ध्रौ करै तेथ धापूं अघाय ॥
कहै व्यास दाखूं जिको व्रत, तीन सइ साठ दिनं संततत्र।
निर्जळा एकादशी करो नांम, तरौ जेम संसार अपार ताम ॥
करइ सदा राज उत्तर कुबेर, जसु पुत्र हेम माली सुजेर।
जळ धेन दांन जग मांहि सार, करइ भीम व्रत तेम धार ॥

निरवांण भीम पामे नरेस, करइ माननी कर्म काढइ कलेस।
आसाढ अंधारी योगिनी नांम, तजै कलंक नै कोढ ताम ॥
करइ सदा राज उत्तर कुवेर, जस पुत्र हेम माली सुजेर।
कृत कर्म फेर कोढी कलंक, नख चख गलित सह सज्जन संक ॥
पूछीयौ व्यास दाखौ परब, जोगनि आराहि ज्युं जाई जब।
कीयौ हेम माळी गयौ कोढ कष्ट, वळै लील थायै आणंद वसिष्ट ॥
आसाढ उजाळी कामिका नांम, हरइ पाप संताप थी सुग्ग ठांम।
बलिराई द्वारि पौढैं मुरारि, सूयै देव तैतीस संसार सारि ॥
जागइ न देवता करै पुन्न, मह तप्प जप्प इक चित्त मन्न।
लख लाभ लील आपइ अछेह, गुरु ग्यांन मांन मंगळ सुगेह ॥

॥ छन्द त्रोटक ॥

वर गेह सु कमळा नाम वरं,
झडि श्रावण वदि गिरिजि झरं।
गुरु गोविंद सेव करै गुहिरं,
श्रव कारिज सिद्ध करं सुचिरं ॥
पुन्य धेन दियं भव पाप हरं,
करतव्य कीय जगि सुचि करं।
नभ मास उजारीय एकादशी,
सुर मांनव ध्यान सु चित वसी ॥
जिको मान देव अपुत्र जनं,
महि रात नै दीह आरत्ति मनं।
रिद्ध राखण काज विराजि रजं,
धुरि वाह कुंटुंबीय धर्म धुजं ॥
सब सूंन संसार असार सलै,
गुण मांनि गुमांनिगुब गलै ॥

इक पुत्र बिना सब अंध इला,
खितजा अपूठा वइर खला।
सोइ पुत्र सुपुत्र सरूप सदा,
महिला भइ वंझीय पुत्र मुदा॥
कहै पुत्रदा इक श्रावण मास कवी,
भर भाद्रव नाम अजैत नवी।
इण पुन्य महीजित राज इलं,
करइ युगदापर राज किलं॥
लह्यौ जगि पुत्र सुलछिवरं,
घण भार नृवाहीय खंभ घरं।
हरिचंद नरिंदीय पाप हरं,
दत पुन्य कीयै दिल रंभ वरं॥
वळि भाद्रव मास उजाळ पखं,
रिद्धि पद्मां नांम सुठाम रुखं।
यदु पूछइ देव रिखीषवरं,
अधिकार अयोध्या आप सुरं॥
झड़ लाइ न वरसइ मेह झडइं,
खित कोइ न खेत किसान खड़इं।
प्रिथमादि डगेधर काल पड़इं,
नरपति नथि तन कोइ नड़इं॥
जगइ माता तात न कोइ पुत्र जनं,
भर है प्रिय नेह सनेह छिनं।
चढी दुतीयां न हळक्कि चिहुं,
त्रहि ताहि हुई वळि लोक तिहुं॥

प्रज जाई पुकारिय राज प्रतइं,
दुनीयां न दुखी हवै तूझ छतइं ।
करि बाहर खित्रीय काइ खिमा,
तिल मात नहीं सु काइ तमा ॥
मांधाता तेड़ि प्रसन्न कीयं,
जिकै जांणि रिखीसर ज्योतिखीयं ।
एकादश व्रत अखंड इला,
भूलण हरि नीर अथग्ग जला ॥
नगरी प्रज राज धुराधुरीयं,
इक चित्त एकादशी व्रत कीयं ।
करि कांठळी बीज झबक्कि वळी,
इल आरत्ति चित्त अलग्ग टळी ॥
गड़क्कै गाज झड़ै झरीयं,
भभक्कै नीर नडै भरीयं ।
मुंह मांग्यौ मेह भए मुगता,
जग नेह सनेह हुआ जुगता ॥
अन मास कुमार अंधार पखं,
एकादशी इंद्रा नाम अखं ।
ब्रह्म हत्या जायइ पाप परा,
करइ इक चित्तहि सत्त व्रत नरा ॥
कृतयुग्गहि राज करै महिखा,
इंद्रसेन महाधिप सेन सखा ।
तिण व्रत कीयइ आप दूरि गयौ,
तिण दीह थी लोक प्रसिद्ध थयौ ॥

॥ सारसी छंद ॥

वरसेत पख महि मास आसू पुह विमइ पापं छुसी ।
गुर पूछ विध सुं करइ व्रत जे गुहि रचित मुकै गुसा ॥
वय कोडि साढापुन्य तीरथ कीयइ फळ जे कृत समइं ।
एकादसी ते पुन्य आपइं राजा रांगा सवि न मंइ ॥
कातिम अंधारइ पखि रामा करइ विध सेती वळी ।
सोभन्न पामइ राज लीला प्रबोधिनी पुन्यै रळी ॥
ए व्रत वीसे च्यारि अधिका कह्या गंथ कवीसरे ।
रह रीत भाखी जगत साखी जांगा नांगा रिखीसरे ॥
इक जीह चेता कहुं केता अधिक गुण करि आगली ।
मैं कह्या माहरी मत्ति सारू रंग मनि पूजइ रळी ॥

॥ कलस ॥

रळी रंग मन खंती, लहइ कोडि लख लीला ।
मइ दाखी मतिसार, कहइण कुणरी लीला ॥
भगति हेत भगवांन, कह्या गुण गोबिंद रांगी ।
परिमळ पुहप सुवास, तेम गुणीयां जग जांगी ॥
संवत् सत्तर दस एक अग्ग गछ खरत्तर गाजतौ ।
सवि जांग सांम सुंदर सगुण रमण जेम गुरु राजतौ ।१।

॥ इति चौवीस एकदसी प्रबंध संपूर्ण ॥

वर्द्धमांन जैन ज्ञान भण्डार, बीकानेर के पो० ३८ ग्रंथ ७०० से प्रतिलिपि की गई । दिनांक १७-३-६१ ई०

॥ श्री रामजी ॥

अथ चौथ माता री कथा लिख्यते

केसरीदास सांवलोत री कही कवित बंध

कवितरी तैं कर बांभणी, वसै एक नगर विचालै।
तिणरै एक दीकरौ, गाया वाछा गौवालै॥
एक समै उद्यान, गई वन इंधण आंणा।
रही अचंभै होय, देख तितरै विमांणा।
बांभणी कन्है जाय बूझियो, कुण थे वन में एकली।
संग साथ विना बहु सुंदरी, भलै साज सूरत भली॥१॥

बूझै तो बांभणी, अम्हे इंद तणी अपछर।
कहां वीर कायरां, वरां रिण में सूरां वर॥
चौथ मात पूजवा, अठै इन्द्रपुर सूं आई।
धूप दीप नै पोहप, सहुले भुजे सझाई॥
सनांन करे आराध सझि, करण पूज चौका किया।
सिंदूर, चंदण केसर, चरचि, पाट मांहि पधराविया॥२॥

मुगतो, चंपो, मोगरो, बहोत पाडल चंवेली।
केतकी केवडो, वले सेवंत्री वेली।
जाय गुलाब ज बाध, वले साटो नरवाली॥
जूही अनेक फूला ज, हार सिणगार प्रवाली।
कर माल अपछर पूजि कजि, चौथ माता उर चाडिया।
तंत ताल वीण डोरूं निरत, वलि नाटि क वज डाविया॥३॥

मेल्हि डली गुल पांच, धूप दीपग आघा धर।
आह्वाहन चरचन करे पूजा अरचा कर॥

हाथ लियो परसाद, कांन ग्रहि संगट खोले ।
भव भव संगट कटे, देव कहै चित्तम डोले ॥
बहु हरख कहै इम बांभणी, देव वरत मोनै दयो ।
अपछरा कहै थासी अणंद, लाभ काज सोइज लयो ॥४॥

व्रत लीधो बांभणी, उरह आणंद घरि आई ।
पारस रंक प्रामियो, किना चित्रामणि पाई ॥
अंधियारी तिथ चौथि, करै नित व्रत अखंडित ।
कै आयां केरडां, काय रजनी ससि ऊगंत ॥
तिण समै ज्याग राजा रचै, किन्या विवाहण कारणै ।
तोडै निवाह दुरत दइत, पाकै वेह न पारणै ॥५॥

राय तेडे जोतषी, कही विप्रां एही कथ ।
बत्तीसा कारणै, तोड जाइ वेह दइत ॥
राय हुकम कोटवाल, दूत मेले दरवाजै ।
वाछा ले व्रिप बाल, सांझि आयो गेह काजै ॥
दूत पकड़ लीयो वृप बाल कूं, आंण निवाह उतारियो ।
दे वीच सीस चुंण डोबरा, जबही पावक जारियो ॥६॥

बैठी घर बांभणी ध्यान धणीआंणी ध्यावै ।
पावक बोह पर जलै, आंच उरं मूल न आवै ॥
बैठो सुख में बाल, होय पांणी हुतासण ।
हरी द्रोब मंजरी, हुआ सोना रा वासण ॥
कुंभार निवाह ज बाळियो, दिलह बीच लगो डरण ।
निवाह मांहि बनियो नहीं, देव क दइत कडारीयण ॥७॥

सुंणी वात सहर में, रैत सांभलियो राजा ।
राजा आय पूछियो, देव कोई दइत द गाजा ॥

बोले तद ब्रित वाल, नहीं कोय देव न दांणव ।
वासौ इण सहैर में बाल, विप्र कणक उग्राहण ॥
तूं चालि हिमै घरि ताहरै, तुज माय बैठी तठै !
थिर थांन विराजै चौथ रौ, जाय ऊभौ राजा जठै ॥८॥

॥ राजा वायक दूहा ॥

कहि किणरी सेवा करै, कहि किण रौ विसवास ।
पावक रौ तिण पूजियां, ताप न लगै तास ॥९॥
मुंठक दीठक जंत्र मंत्र, असुर सुर अराध ।
साच बतावो सुंदरी सो हूं पूजं साध ॥१०॥

॥ बांभणी वाइकं दूहा ॥

बोल कहै इम बांभणी, राजा संभळि राह ।
ओ मारग है ईसरी, अगम अपार अथाह ॥११॥
सुर पूजै सेवे सगत, इन्द्राणी सुर इंद ।
चोर साध पूजै तिको, देवी ऊगा चंद ॥

॥ वचनिका चौथ री वार्ता ॥

बांभणी भणै छै, राजा सुणै छै बांभणी बात कहै छै राजा मनरो साच लहै छै । [1]एक दिन रै विसै सुरत भइ [2]बधणी ले उद्यान में गई [3] मूळी काटी , उतरै अपछरा बिमांन सूं उतरी ।

॥ दूहा ॥

अपछर बिमांनां ऊतरी, पूजा [4]कारण प्रीत ।
वनह [5]इकेली ब्रांह्मणी [6]भइ देखि भयभीत ॥१२॥

---

(१) मन फकर भइ । (२) बांधणो । (३) लकड़ी काट मूळी करी ।
(४) करण पवित्र । (५) डरै । (६) थइ ।

मृगनैणी चंद्रामुखी, अपछर रै उणीहार ।
मिळियो भूल उद्यान में, लावन लसकर लार ।।१३।।

।। वचनिका ।।

वन [४]वासन विराजै छै। रींछ वंनर वडाक वाघ गाजै छै। कोकिला, मोर, चिकोर, बतक, बाबहिया वोलि रह्या छै। केतकी केवड़ो, गुलाब, जूही जाय जबाध साटो, नर वाली, मोगरा, फुलवाद फूल रह्या छै ळ नद्नाळ खळक खाळ [५]सरगां रा सिखरां सूं उलाळा उभाळा खाय रह्या छै। तट दरियाव भरिया छै। पवन रा होळा-झोळो हिलोळां खाय रह्या छै। इन्द्रपुरी थी वाह-वाह शिवपुरी सूं इधकी सराह।

।। दूहा ।।

तट सरवर [६]वन सघणता, वस्त्र आभूषण खोय ।
पैठी झीलण अपछरा, हंसां पंकति होय ।।१४।।

।। वचनिका ।।

पीतांबर री पोतियां पहेर सनांन कीयां ! हरियै गोबर गुंहली चौका दिया पोहप [१]सेझा पाट पधराया। [२]ईसरी रा गीत चिरचा अखाड़ा गाया पुसप परिमल [३]आखत्र धरीजै छै। पूजा कीजै छै। गुळ री भेलो जिणमें पांच डली ईसरी आगै मेल्ही। च्यार ईसरी री, पांचमी गणेसजी री। पाखती सूं परसाद ले कांन पकड़ हाथ दे बोले-"क्यु बाई संगट खुलिया ? हाँ बाई भव-भव रा खुलिया। पिंडरा पाप पुलिया।" आ बात सुणै बांभणी बूझवा करणै लागी-क्युं बाई किण देव सेवियां संगट कटै ?"

---

(४) सिघणा (५) सिरंग थी पाणी उलल (६) सिघण तटै।

(१) पंचजीरा (२) देवीजी रा गुणगीत (३) धूप।

किण देव सेवियां पिंड रा पाप उतरै ? या वात सुणे अपछरा डखडखाय हंसी–"तूं तो भोळी हे बांमणी एकण घरडै हीज वसी संकट री काटण हार मात चौथ देवी। जिण नूं संकट में पांडवे सेवी। पांच तारिया, अठोत्तर सौ मारिया।

॥ दूहा ॥

पांडव पांच [४]उवारिया, खोहण अढारै खाय।
केहरिया अपछर कहै, आ मोटी महमाय ॥१५॥

॥ वारता ॥

क्युं बाई ओ व्रत कीजै हां दीयो लीजै, आफे ही न कीजै।
अपछरा व्रत दीयो बांभणी लीयो।
पाट घडाय पूजै डोले मती देव दूजै।
व्रित ले बांभणी घरै आई, मानो आंधले द्रव्य दिष्टे पाइ।
चंद उगाली चन्द्र उगै करै, कैरड़ आया घरे।
करतां करतां घणा वरस भया,ज्यारां ज्यारै राजा जिगरा आरंभ थया
निवाह न पाकै, हुई बात ह्वाकै।
दइंत विधुंसे जाइं, जोर करै तो कुभार नै खाइं।
त्यारै राजा जोसी तेडाया, पुस्तक पूछिया।
विप्रां भणियो, राजा सुणियो।
बत्तीसो लेसी, त्यारै पाकण देसी।
त्यारै राजा कोटवाल नै कह्यौ, कोटवाल प्यादा ले दरवाजै गयो।
विप्र वाल वछाले आयो,होता सण होबियो पकड़ि माहे निवाह लगायो।
पूतरी खबर न पाई, बांभणी विलपतां हीज राति विहाई।

---

(४) उधारियत।

बांभणी धणीयांणी नैं ध्याई, ईसरी साद सांभलता समी आई।
बांभणी रो बाल नीवाह में न बळियो,राजा प्रजा सब रो भ्रब गळीयो
व्रत रो राह बांभणी बतायो, प्रजा राजा चौथरौ परचौ पायौ।

॥ दूहा ॥

परचै परचौ [1]पूजवै, प्रथी लगाई पाय।
केहरीया अपछर कहै, आ मोटी महंमाय॥

सजने मेला दुज्जंणे टाळ, [2]देवदला गुंदरा गला।
सांकड़ै मोकलो मुसकल आसान, परजा पूजै राजमांन।

[3]व्रत री महैमा पराक्रित भई।
[4]सगत री वार्त्ता केसरी सिंघ सांवलदासौत कही।
सं० १८०८ इति श्री [5]चौथ माता री कथा सम्पूर्ण।

श्री वालीमध्ये लिखतं

---

(१) पूगियौ। (२) देवे डळा, गेवरा गाळा। (३) व्रत करतां महमाय प्रवृत भई (४) सुणी ने वार्ता (५) वचनिका।

रोहिणी व्रत कथा

अथ रोहिणीनी कथा गौतम पृच्छामतार्थ ।

उच्चिट्ठमसंदरयं भव्वंतहपाणीयं च जो देई ।
साहूण जणमाणे भत्तं पिन जिजुए तस्म ॥१॥

अर्थ — जे पुरुष उच्छिष्ट जाडिउ विटालिउ हेठ उंजे आपणइ काजि नावइ तिसिउ भातपाणी महात्मा नइ दई । ते न सुंग हुइ जिमु जरइ नहीं जिम श्री वासुपूज्य पुत्र मघवा तेहनी पुत्रिका रोहिणी नव जीव पूर्व भवि दुर्गंधा इसिइ नामइं कुष्टादि रोगइ पीडी तिणइ घणा पूर्वभव पूठि जाणि महात्मानइ कडउ तुम्बडउ दीधउ । इहां रोहिणीनी कथा—

श्री वासुपूज्यनामस्य तए तुणय प्रकासकम् ।
रोहिण्याश्च कथायुक्तं रोहिणी व्रतमुच्यते ॥१॥

चंपा नगरीइं श्री वासुपूज्यनु पुत्र मघवा राजा राज्य करइ । तेह नइ घरि लक्ष्मी नामि राणी सुशीला दातार छइं । तेहनइ पुत्र ८ छइ । ते ऊपरि पुत्री १ रोहिणी नामाइं हुई । बेटीनइ जनमी, राजाइं वधामणा, दान–मान दीधा । मोटी हुई, भणी ६४ कलानी जाणि हुई । रूप, लावण्य, सौभाग्य, गुणवंती हुई । यौवन–वय पुहुता देखी राजाइं चितंव्यउ । बेटीनइ सरिखउ वर योग्य हुइ तु वारू । पछइ सयंवरा मंडप मंडावियउ । चिहुं दिसे रायना कुमर तेडाव्या, तिहां आव्या । कुर, कोसलाट, करणाट, गौड, मेदपाट, नागुर, नेपाल, डाहळ, कुशळ, कुंकुण, इत्यादि देसनां राजा आवी बैठा छइ ।

तिसइ रोहिणी स्नान विलेपण करइ, क्षीरोदक स्वेत वस्त्र पहिरि मोती ने आभरणे अलंकरी जाणे देवलोक थी उतरी। रूपि अपछरा पालाखीइ बइठी। सखी परवरी तिहां आवी। प्रतिहारी आंगलि कुमरना नाम गोत्र, गुण-वच्छल, गाम, सीम, जूजूआ कहिया। ते मूकी। नागुरनउ राजा वीतसोक तेहनू पुत्र असोक कुमर वरिउं। वरमाला घाती। योग्य वर वरिइं। सहु हरखिओ। विवाह कीधओ। हाथी, घोड़ा, वस्त्र, भोजन, तंबोल देइ रोहिणी सहित नागुरि पहुंचाड़िओ। बीजा राजा सगला सनमान्या। आप आपणइ थानकि गया।

केतलइ कालि राजाइं असोक कुमरनइ राज्य देइं दीक्षा लीधी। असोक राजा राज्यपालतां सुख भोगवतां ८ पुत्र गजेन्द्र सरिखा हुया। च्यारि पुत्री हुई।

एक वार राणी सातमइ मालीइं गोखि बइठां हतां। लोक-पाल बेटउ मुख आगलि बइठउ छइ। तिसइ को एकनु पुत्र मरण पामिउ छइ। तेहनी माता विलाप करती, रोती, पुत्रना गुण बोलती, दैवनइ ओळंभा देती देखी। रोहिणीइं राजा पूछिउं स्वामी एकेहूं नाटक नाचइ छै। राजा कहइ अहंकार म करि। धन-यौवन राज्य मदि भरित प्रसादइ पुत्री पूरी हुंतीं स्वामी रीस म करु अहंकार नथी करती मइं कहीए। ए नाटिक नथी दीठउ तेह भणी पूछउं। राजा कहि नाटिक लेई बिहुं हाथि पुत्रकरी गोख बाहरि हीं डोलतां हाथि थी उपड़िउ। सहुको हाहा कारव करइ। रोहिणीनइ मनि दुख नहीं। नगर देवताइं पुत्र पड़ितु झाली। सिंहासनि बइसारिउ। लोक हरखिउ। ए रोहिणी धन्य, सुपुण्य जे दुखनी वात ना जाणइ। वनि पुहता राजाराणी बेटी सहित क्रीड़ा करिवा लागा। इसीइं श्री वासुपूज्य

बरमा तीर्थंकरना सिस्य रूप कुम्भ, स्वर्ण कुंभ च्यारि ज्ञानना धणी, छठ, अट्ठम, तप करता वन मांहि पुहता। राजा राणी बेटा सहित जइ वांदिया। गुरे धरम लाभ दीधउ। धर्म देसना कही। राइ पूछिउं भगवन् राणी इसीउ तप कीधउ जिणइ दुखनी बात न जाणइ। मुझ नइ राणी उपरि प्रेम घणुं छइ। ते स्याभणी ? बेटा सुन्दर, गुणवंत हुआ। रूप कुंभ गुरु कही राजा सांभळु।

इणइं नगरि धर्म मित्र सेठि, धन, मित्रा, कलत्र हुइ। तेहनइ दुर्गंधा बेटी हुइ। कुरूपिणी, दुरभागिणी हुई। पिताइं विवाह भणीं। द्रव्यकोटि मानी। परिणको रांकई न परणइ। ए कमारी न तु श्री सेण नामिइं वर राखी तेह नइ दीधी। तेहनी दुर्गंधइं रात्रि नाठिउं, सेठि विखवाद करइ। कर्म दो सइं काइं न चालइ। घरि रही, दान देई, धरम करइ। तेहना हाथनुं को न लइ। पछइ ज्ञानी गुरु पूछूया। कहइ गिरनारि नगरि पृथ्वीपाल राजा राज्य करेइ। तेहनइ सिद्धमती राणी छइ। राणी सहित राजा वन क्रीड़ा करिबा गयो। तिसइ मास खमणनइ पारणइं गुणसार ऋषि नगर मांहे जाता दीठा। राणी पराणि पाछी वाला। कहिउं ए ऋषिनइं फासु अहार देयो। राणी रीसावीइं। कडुउं तूं बड़उ दीधउं। पारणुं करतां प्राण गया। सुभ ध्यानइ देव हुया राजाइं वात जाणी। राणी काढी। सात में दिन कोढ निकळिउ। तिणइ दुखइ छट्ठी नरकि गइ। पछइ तिर्यञ्च थइं साते नरके दुख भोगवि। सापिणि, ऊंटणी, कूकड़ी सियाळी, सूयरि, चिरोली, ऊंदरी, जलो, कागड़ी, रासिभी, चंडाली गाई हुइ तिहां नवकार सांभळो। सेठनइ दुर्गंधा बेटी हुई। निकाचित करम थोड़इ थाकतइं जातिस्मरण ऊपनउ। पाछिला भव दीठा। दुर्गंधा हाथ जोड़ि पछइ, ए दुख टळइं ते उपाय कहउ।

गुरे कहिउ आरती भंजन रोहिण व्रत करउ । विधि सांभळइ । सात वरस सात मास कीजइ । श्री वासु पूजी नइ रोहिणी नई दिनि उपवास कीजइं । ते तप करतां सुभ ध्यान आणिइं । ए तप नइं प्रभावइं रूड़ौ हुस्यइं आवतइं असोक राजा नइं राणी हुइं । भोग भोगनी । श्री वासु पूज्य नइं तीर्थ मोक्ष पामिसिइं । तप पूरइ थातइ । ऊजमणउ करजे प्रसाद करावी । तिहां अशोक वृक्ष तलि श्री वासु पूज्यनी रत्नमइं प्रतिभा करावी पूजीइं ।

अशोक रोहिरण सहित सोना, मणि, मोतीना, आभरण, करावी । श्री वासुपूज्य नइ स्नात्र विलेपन कुंकुम कपूर सुगंध द्रव्य पूजा श्री संघ भक्ति कीजइं । अमारि प्रवर्त्तावीइं । साहमी वत्सल संघ पूज करावींइं । सिंघात लिखावीइं । इम दुक्ख जाइ-सिइं । राजानी परि दुर्गंधा बली पूछइ । कुण ते सुगन्ध राजा । ऋषि कहइ ।

सीह पुरि नगरि सिंहशेन राजा, कनक प्रभा रांणी । तेहनइं बेटउ दुर्गंध हूओ । कहिनइ कर्म्म नहीं । पछइ तीणइ श्री पद्म-प्रभु तीर्थंकर वांद्या । आंपणा कर्म विपाक पछिया । परमेश्वरि कहिओ । नागोर थिकउ बारजो अण, नील पर्वत, ते ऊपरि शिलाछइ । तिहां रिषि १ मास क्षमण तप करइं । ऋषि नइं प्रताप विइं आहेड़ी निफल जाइ । ऋषि ऊपरि रीस आंणइं । ऋषि पारणइ गामि मांहि पुहता । तेतलइ आहेडिइं शिला उपरि अगनी बाळी । ऋषि शिला उपरि रीसइ बैठां । ताप हुतइ । तिम-तिम शुभ ध्यान आणइं । कर्म्म क्षय करी । केवल ज्ञान पामी, मोक्ष पुहतौ । तिणै आहेडिइं ऋषि शिला हत्याइं कोढ रोग हुइ । सात भी नरग पृथवीइं पड्यउ पछइ पहिली नरक गयउ । पछइ साप, पछइ पांचमइ नरग, सिंह, पछइ चौथी नरकि

चीतरू त्रीजइं नरगि बिलाइ इम आहेड़ी नउ जीव भमि गोवालियौ दरिद्री हूवी। नागुरि श्रावकनइ नवकार सीखिउ। दवानले बलियौ। नवकार प्रभावइं राजानइं पुत्र हूवौ। कर्म-थाकतु हतुं। तिणइं दुर्गंध हूवौ। पछइं तेहनइं जातिस्मरण उपनउ। दुःख संभारी बीहतइं श्री पद्मप्रभु पूछ्या स्वामी कांइ उपाय कहो। तीर्थंकरे कह्यु रोहिणी तप किधौ। विधिपूर्वक तिणइं सुगन्ध पणौ पामी, मरी देवता हूवौ। चवी चंपानगरीइं मनमथ राजानी बेटी रोहिणी रूप पात्र हूवौ। ताहरी राणी हुई। जन्म लगइ आर्ति चिंता न जाणीं। अशोक राजेन्द्र तइं पूछियौ स्नेह स्यामिणी ते सांभळि सिंहसेन राजाइं सुगन्ध पुत्र नइं राज्य देइ दीक्षा लीधी। सुगंध राजाइं जिन धर्म पाली, देवगति पामी। पुष्कलावती विजय पुंडरींकणी नगरीइं विमलकीर्ति राजानइं पुत्र अर्ककीर्ति हूवौ। तेहनइ चक्रवर्ती पणउ हूउं। राजपाली ऋषि कनइं दीक्षा लीधी। दुष्कर तपक्रिया कीधी। आयु पूरी बारमइं देवलोकि अच्युत इन्द्र हूवौ। तिहां विजय पुण्डरीकणी चवीनै तूं अशोक राजा हूवौ। रोहिणी राणीनइं वल्लभ तुम हैं चिहुं जणें ए कर्म रोहिणी तप विधिइं कीधउ। तीणइं अति स्नेह छइं। बेटा गुणवंत छइं। ते सांभळि।

मथुरा नगरीइं अग्नि शर्मा ब्राह्मण, तेहना सात बेटा हुया, पणि दलद्रि। एक वार पांडलिपुरि नगरि भिक्षा मांगिवा गया। तिसइं वाडी मांहि रायकुंवर देव सरीखा बांहि बिरखा माथइ मुगट, कानै कुण्डल, हीयर हार, कमरबंध, हाथ हीरे जड़ी मूंधड़ी। एहवा राजकुम्मर खेलता दीठा। सिव शर्मा ब्राह्मण आपणा पुत्रनइ कहइ विद्या त्राइं केवड़उ अन्तर कीधौ। ए मन-वांछित सुख भोगवइं। आपण भिक्षा मांगता घरि-घरि हींडिइं।

तू आपणा कर्म नइं उलंभा दीजइ। जउ पाछीइ भवि आपणे पुन्य न कीधउं तउ दलिद्री हुवा। पछइ तीणे ब्राह्मणे जीव दया धर्म पालवउ मांडीउं। गुरु पास दीक्षा लीधी। अति उग्र तप काउ सग्ग करि सातमइं देवलोकि देव हूया। तिहां थी चवी ताहरइ गुणपादिक बेटा ७ धर्मवंत सहित हूया। अनै आठमूं पुत्र लोकपाल छइ ते आ गइ वैताढ्य पर्वति भिल्लक नामइं विद्याधर रहतौ हुतउ। नंदीस्वरि सास्वती प्रतिमा पूजितु यात्रा करतु धर्म सेवतु आय पूरी सउ धर्मइं देव हूऔ। तिहांथी चवी ताहरै लोकपाल हूवौ। तेहनै मित्र देवताइं सानिध कीधउ। हिव बेटी ना भव सांभळि।

वैताढ्य पर्वति, विद्याधरनइ च्यारि बेटी। रूपवंत, गुणवंत, यौवन पुहती, वन मांहे खेलती। ज्ञानी ऋषिस्वरे बोलावी। कोई पुण्य करौ छउ। अम्हें कांई पुण्य नथी करतां। गुरै कहियौं आयुषा बीजनी परी उतावळा छइ। तेहे कह्यु तू अम्हें पुण्य सूं थाइ। गुरै कह्यु आज अजुआळो हांचमि छई। ज्ञानपंचमी तम आराधउ, उपवास करउ। एतलइ तपइ सुखिया हुसिओ। पछइ पचखाण करि घरिगई, देवपूजी, पुण्यनी अनुमोदना करइ छइ। आजनउ दिन गुरु पसाइ सफल हुयौ। ए पांचमी तप सदीव लगइ करिसूं। इसूं कहितां था इसूं बीज पड़ी। च्यारि परोक्ष हुइं। देवता थइ चवी ताहरइ बेटी हुई।

एक दिनि पंचमि कीधी। तेहना फल रूड़ा कुल लाधा, सुख पाम्या। ए चरित्र अशोक राजारो राणी, आठ बेटा, च्यारि बेटी। ए रूप कुंभ गुरु पासि सांभळि जातिस्मरण ऊपनउ। राजा परिवार धर्म, पड़वजी, घरि आव्या। केतलइ कालि राजा राणी सहित वैराग्य ऊपनूं। श्रीवासु पूज्य कन्हइं दीक्षा लीधी।

कर्म क्षय करि । केवळ ज्ञान पामि । मोक्ष सुख सास्वता पाम्या । रौहिणी पांचमि तप तणा, गिरूया फल ए जाणि । दुख न हुवइ, सुख संपजइ इम बोलइ गुरु वाणि ।

॥ इति श्री रोहणि अशोक राजा कथा समाप्ता ॥

श्री वृहत् खरतरगच्छे महाचार्य श्री सागर चन्द्रसूरि साखायां वाचनाचार्य श्री आणंद धीरजी गणिशिष्य पं० प्र० श्री सुखहेम गणि शिष्य पं० भुवन विशाल मुनि लिखितं ।

अभय जैन ग्रन्थालय-बंडल नं० ७५, प्रति नं० ३२२०, पत्रांक १४-१५ ।

अथ होलिका पर्व री कथा

श्री गुरुभ्योनमः। हिवैं होळिका पर्व री कथा छै। फागुण सुदि पूनिम दिनैं हुई तिणनैं लोक होळी कहै छै। तिका होळी दो प्रकार री छै—एक द्रव्य होळी, दूजी भाव होळी। तिहां जिन धर्म विमुख अज्ञानी मनुष्य तिकै काठ-लकड़ी बाळकर होळी करै। पछै दूजै दिन धूलि-क्रीड़ा मळ-मूत्र उछाळन, रासभ चढण, स्त्री-मनुष्य पीड़न कदर्थना प्रमुख मांहोमांहि करै। तिकौ सर्व अनर्थ दंडरो कारण जाणनौ।

तिका द्रव्य होळी भला मनुष्यां नैं छोडण योग्य छै। फेर धर्मी मनुष्य छै, तिकै इसा कर्त्तव्यां करी भाव होळी करै, तिकै कर्त्तव्य कहै छै। जाग तो तपरूप अग्नि लईनै कर्मा रा दळ जिकै छांणा, तिणां री भस्मी करणी; तिका भावहोळी कहै छै।

फेर धर्म-ध्यान रूपी पांणी सूं खेल करै। नव-तत्व रूपणी गुलाल उडावै, पांच सुमति रो पिचरको हाथ में लेवै, दमरूपो छिरकाव करै-इत्यादि भाव होळो खेलै।

हिवैं लौकिक धूलियैं पर्व री कथा कहै छै। जयपुर नगर विसै जयवर्म राजा—तिण नगर विसै मनोरथ नांमा सेठ रहै छै। तिण सेठ रै च्यार बेटा ऊपर अत्यंत रूपवान होळी नांमै बेटी हुई। तिण बेटी नैं ज्वांन अवस्थायैं पितायैं मोटै महोछव हुंती परणाई।

पिण कर्म रै वस हुंती—तिका बेटी विधवा हुई। पछै सदा पितारै घरै रहै। हिवैं एकदा प्रस्तावैं तिका कन्या गोखडै विसै बैठी छी। तिण अवसरैं वंग देसरो धणी—धुवनपाळ राजा, तिणरो बेटो कामपाळ उण गळी आय नीकल्यो। कुमरै कन्या नै

देखी, कन्यायैं कुमर नैं देखी। दोनूं ही मांहोमांहि कांम व्याप्त हुवा।

तिवार पछै गुप्त पीड़ा सहित पुत्री प्रतै जांणकर सेठ चिंरातुर रहै। हिवैं तिण हीज नगरी विसै एक ढुंढा नांमै सांमण रहै छै। जातरी ब्राह्मणी छै, चंडरुद्र नांमैं भांडरी बेटी छै अनैं अचल भूति नामैं भरड़ै नै परणाई छी तिका सांमण मंत्र-यंत्र, कूड़-कपट करती लोकां नै ठगै छै। भूत प्रमुख काढ़ै। भूखरी वेदना भोगवती सरीर में दूबळी रहै—घर-घर भीख मांगती फिरै। पिण लाभांतरायरै उदय हुंती पूरी भीख नहीं मिळै। तिण कारगै लोकां ऊपर क्रोधाकुळ रहै। तिका सांमण भीख मांगती मनोरथ सेठरै घरै आई। तद सेठैं कह्यो—हे माता, म्हारी बेटी नैं ताजी कर!

पछै सांमण होळी-कन्या खनै आई, मांहोमांहि बातां करी। फेर सांमण कह्यो—हे बेटी! थारै मनरी बात कह। तद कन्यायैं पिण कामपाळ रै मिलणरी बात कही। जद सांमण कह्यो—हे बेटी, आदीतवारै दिन पूजारो मिसकर सूर्य देवरै मंदिर आवजै, उठै थाहरा मनोरथ पूरस्यूं।

पछै आदीतवाररै दिन होळिका-कन्या तठै आई। कुमर पिण सांमणरै संकेत सूं तठै आयो। पछै कन्या सूर्य देवरी पूजा कर बाहर आई, तद कुमर कन्या सूं मिल्यौ। मांहोमांहि बात बिगत करी—आळिंगन कियो। पछै कन्या कुमर रै पूठैं थापोटो देई नै कूकी—मनैं पर पुरसरो संयोग हुवो, तिको मोटो पाप लागो। सो पाप दूर करण वास्तै हूं अग्नि-प्रवेश करस्यूं।

तद पिता आय कर इठहु ंती बेटी नैं घरै लायो। फेर फागुण सुदि पूनिम री रात्रै तिण सांमणैं फेर तिणारै संयोग करायो। तद सांमण पिण तिणारै नजीक झूंपड़ी छै, तठै सूती छै। पछै कन्यायैं जांण्यो—छ कानांरी बात छै, तिका चौडै हूसी। इसो विचार नैं सांमणरी झूंपड़ी लगाय कर कुमर-कन्या और ठिकाणै जावता हुवा।

हिवै परभात हुवो—सेठैं पुत्री नैं बळी जाणकर घणा विलाप किया। पछै लोकां पिण सती नैं बळी जांणकर तिणरी भस्मी प्रतैं नमस्कार कर सरीर विसै लगावता हुवा।

तिण दिन हुंती बरस-बरस दीठ होळी पर्व प्रवर्त्यौ। अबार पिण परमार्थ सून्य लोक होळी पर्व करै छै।

हिवां कितरा एक दिन गयांथकां कुमरैं होळिका स्त्री प्रतैं कह्यौ—हे स्त्री, म्हारै खनै धन छौ तिकौ सर्व खाधो। तिणैंकर धन कमावण नैं परदेसै जास्यूं। तिवारै होळिकायैं कह्यौ—हे स्वामी, हूं कहूं तिकौ उपाय करो—तिणहुंती आपांरै धन प्राप्ति हूसी। अहो भर्त्तार, म्हारै पितारी हाट जायकर एक साड़ी लावो।

पछै कुमर जायकर साड़ी ल्यायो। तद स्त्रियैं कह्यौ-आ साड़ी म्हारै लायक नहीं। तद कुमर फेर जायकर दूजी साड़ी ल्यायौ। फेर स्त्रियैं कह्यौ—आ पिण म्हारै लायक नहीं। इण तरै तीन-चार-बार फेर्‌यौ। तद सेठैं कह्यो—थारी स्त्री नै लेआव, जिका आपै ही देखलेसी।

पछै कामपाळ पिण आपरी स्त्री नैं सागै लेकर सेठरी हाटै आयौ। तद सेठ देखकर बोल्यो—आ तो म्हारी बेटी छै !!

पछै कामपाळ पिण आपरी स्त्री नैं सागै लेकर सेठरी हाटै आयो। तद सेठ देखकर बोल्यो—आ तो म्हारी बेटी छै !! तद कामपाळ सेठ प्रतैं कइ तो हुवो—अहो सेठ ! थे तो बडा भोळा छै। थांरी बेटी तो अग्नि प्रवेश कर्यो ! तिका बात सर्व लोकजांणै छै। अर थे किसी न जांणो छो !! आगै पिण सूर्य देवरै मन्दिर मांहि हूं म्हारी स्त्री सहित आयो छो, जद थांनैं थांरी बेटी रो भरम पड्यो छो। अबार पिण म्हारी स्त्री देख नैं थांनैं थांरी बेटी रो भरम पड्यो !. तिणवास्तै अहो सेठ, सरीखा रूप किसी न हुवै छै !! थांनैं तो निकमों भरम पड़ै छै, अर अठै कारण नहीं छै।

इसो सुणकर सेठ हर्षवंत हुतो थको बोल्यो— मैं तो इणनैं बेटी कही, सो म्हारै तो आजसूँ आ पिण बेटी छै। इसो कहकर सेठैं बेटी रै स्नेह हुंती कपड़ा गहणा, भोजनादिक सामग्री सर्व पूरै छै।

हिवैं ढुंढा सांमण मरकर पिसाचणी हुई छी। तिणैं आपरो पूठलो भव देख्यो। अहो, इण नगरा रा लोक महा दुष्ट छै, मनैं भिख्या पिण पूरी नहीं घालता ! सो इणा नैं संतावण ! पछै पिसाचणी कोपाक्रांत हुई थकी लोकां नै मारण भणी। नगर रै ऊपर मोटी सिला विकुर्वी।

होळिका रो भाग्य जबर, सो होळिकासुं पुहचै नहीं। पछै लोकां भय पांम्या, बळ-बाकुळ कर्या। तद पिसाचणी कह्यो— अहो लोकां, हूं पहिलां भांड-भरड़ा दोय कुलां नै छोड़कर और सर्वलोकां प्रतैं मारस्यूं।

तद् लोक मरणै भय हुंती डरताथका सर्व लेकां भांड पणो आदरयो। भली मर्याद छोड़ नै निर्लज्जा बचन बोलता दुष्ट बाजा बजावता भांडहीज हुआ। फेर धूड़ उडावै, सरीर विसै कादो लगावता भरडां प्राय हुवा।

तिण दिन हुंती होळी रै दूजै दिन छालेरी पर्व प्रवर्त्यौ। पछै पिसाचणी प्रसन हुयकर आपरै ठिकांणै गई। इण रीतैं मिथ्यात्व रूप होळी पर्व प्रवर्त्यौ तिको तो कर्म बंधरो कारण छै। अर आपरै आत्मरै सुख भणी अहो भव्य-जीवो, श्री वीत रागैं उपदिस्यो, इसो जिन धर्म हीज सेवणो, तिण हुंती सर्व उपद्रव टळै, फेर मुक्ति रूप सुख मिळै। इति होळिका कथा संपूर्णम् ॥

तुलसी व्रत कथा [1]

एक हो ब्राह्मण—ब्राह्मण रै घर में एक छोटी-सी छोरी ही। वे कह्यौ—मां हूं तुळसी पूजीस ! कै बाई पूजलै ।

कातीरो पूनूं आई— वे तुळसी जी पूजणो सुरू कियौ। वा तुळसी रोज पूजती। वेरै मांयसूं एक छोटी-सी छोरी, गैणा, कपड़ा पैर' र निकळती। हांये बाई, तू म्हारी भायली होयजा। वा बोलती कोयनी।

एक दिन मांनै जाय' र कह्यौ—मां तुळसी मांय सूं एक छोरी रोज निकले है। मनै कवै है—तूं म्हारी भायली होयजा। मां कह्यौ— भायली होयजा तूं वेरी। जणै वा दूजै दिन पूजण गई। छोरी वेरै मांय सूं फेर निकळी। हांयै बाई, तैं मांनै पूछियौ ! हां बाई पूछलियो— म्हारी मां कह्यौ, तूं भायली होयजा।

म्हारी भायली हुई, तनै हूं जीमण रो नैतो देवूं हूं। काल म्हारै घरै जीमण नै हालै। जणै मां नै कह्यौ कै मां वे मनै जीमण नैतो रो दियो है। तोकै बाई जायै परी। दूजै दिन आपरै घर में चोखा-चोखा कपड़ा था, पैर' र तुळसी पूजण गई।

तुळसी जी मांयसूं वा भायली निकली—कै बाई हाल ! आ वेनै लेगई—लेगई वैकूंठ में। कोई केवै भूवा आई, कोई केवै बैन आई, कोई केवै बाई आई। सैनजणा वेरी स्वागत करी। सोनै रै थाळ में बत्तीस भोजन तैंतीस तरकारियां पुरसियौं। सोनै री झारी भरदी। वेनै चोखी तरै जीमाय, तुळसी रै पेड़ कनै छोड़दी।

१—श्रीमती मोहनी देवी द्वारा लिखाइ गई।

और कवण लागी—भायली, मनै नैतो कद्दीस ! कै म्हारी मां नै पूछलूं, पछै दीस। वा घरै आई। घरै आय मां नै कह्यौ—हांये मां, वेरै घरै तो बतीस भोजन—तैतीस तरकारियां ही। वा कवै मनैं ही नैतो दे। अरां अपांरै घर में क्या जीमासौं वेनै। मां कह्यौ—नैतो देदै। अपां रै घर में साग—रोटी है, साग रोटो ही जोमाय देसौं।

आ दूजै दिन तुळसी जी पूजण गई। तुळसी मांय सूं वाई भायली निकळी। कै हांयै बाई, तैं मांनै पूछयौ। हां बाई पछलियौ—नैतो देवण आई हूं। काल तूं म्हारै घरै जीमण आयै। कै काल हूं थारै घरै जीमण आईस। तूं एक आटै रो दीवो चौमुखौ करपरो आंगण में जगाय दियै।

जणै वा घरै आई। घरै आय मां नै कह्यौ— मां हूं नैतो देय आई। दूजै दिन वा जीमण आई वेरै घरै। आय'र आंगण में बैठ गई। वे कयौ—हांये बाई, रसोई होय गई ? कै म्हारो मां माथौ धोवै है। माथौ धोय'र रसोई करसी। फेर वा बैठी रई कईताळ। हांये' हाल रसोई होई कोयनी ? वेरै मांय तो दूजो बात ही-बाप आटो लेय' र आयो कोयनी—रसोई कांयरी करै ?

जणै कयौ—मनै तो भूख लागी है। इतीताळ हूं भूखी रहूं कोयनी ? तोकै थारो जाय घर और तो संभाल ! क्या संभालूं बाई ? म्हारै तो घर में कंईं कोयनी ? तूं देख तो सरी जाय।

जणै वे दौड़ती जाय ओरै नैं देख्यौ, तो दूधरा चरू भरया पड्या हा। अन-धन लिखमी घणी मोकळी पड़ी ही। अर घर गृस्थरो सामांन सैन पडयौ हो। छोरी जाय मां नै कह्यौ—मां ओरौ तो सैंठो भरचौ पड्यौ है।

मां जाय देख्यौ दौड़ती—दौड़ती। दूध हो जिकैरी खीर करी। पूड़ियां करी—साग कियौ अर भायली नै जीमाई। जीमाय कह्यौ—बाई तूं अठैई रय!

बाई, अठै तो हूं रहूं कोयनी; थारै सातपीढ़ी खूट्टं कोयनी। अर आ परनीज सासरै जासी तो ईयैरै लारै जाईस। ईयैरै सासरै सातपीढ़ी तक खूट्टं कोयनी। सिगळी सृष्टी रै आधी काती रै अमावस रैं दिन सिगळां रै जाईस!

हे तुळसी माता, वेनै तुष्टमांन हुई—वेरा भंडार भरिया वेड़ा सकळ रा भरै।

सट विनायक

एक समय की बात है—एक तालाब में एक मेंढ़क और एक मेंढकी रहा करते थे। मेंढकी को भगवान् श्री गणेश जी से बड़ी भक्ति थी—वह तमाम दिन भर 'सट-विनायक', 'सट-विनायक' की रट लगाया करती थी। मेंढ़क को यह सब बुरा लगता—राँड! तमाम दिन भर पराये पुरुष का नाम लेकर रटा करती है—तुझे लाज-शर्म भी नहीं आती। मेरा तो कभी नाम तक भी नहीं रटती। इस प्रकार मेंढ़क रोज बका करता और मेंढ़की अपना जिद्द पकड़े अपने विश्वास पर दृढ़, 'सट-विनायक', 'सट-विनायक', आठों पहर रटती ही रहती।

और एक रोज मेंढ़क के इस प्रकार अधिक झगड़ा करने पर, 'गृह-कलेश' से उकताकर मेंढकी ने 'सट-विनायक', 'सट-विनायक' की रट लगाना हमेशा के लिए बन्द ही कर दिया।

समय पाकर एक रोज एक पनहारिन पानी भरने जो तालाब पर जो आई, तो जाते समय मेंढ़क और मेंढ़की को भी घड़े में डाले लेचली। उसने घर लेजाकर अजान में उस पानी को 'मीढके-मीढकी' सहित चूल्हे पर गरम करने को रख दिया। अब तो मेंढक भी घबरा उठा। वह गुस्से में आकर मेंढकी से कहने लगा, 'रोज तो तालाव में बैठी 'सट-विनायक', 'सट-विनायक' रटा करती थी! और आज जो गरम पानी में सिजोये जारहे हैं, तब बुलाती क्यों नहीं—तू तेरे 'सट-विनायक' को? जरा अब देख तो लूँ तेरे उस 'सट-विनायक' की बहादुरी—बड़ी भक्ता बनी फिर रही थी तब तो।

मेंढ़क के इस कथन को जो मेंढ़की ने सुना तो वह कुछ हँस पड़ी और फिर श्री भगवान् गणेश का ध्यान लगाए वह 'सट-विनायक', 'सट-विनायक' टेरने लगी।

भगवान् भक्तों की आर्त-नाद भला कब नहीं सुनते ? गणेश भगवान् तत्काल एक बैल का रूप धारण किए दौड़े-दौड़े आ-पहुँचे, जहाँ घर के आँगन में चूल्हे पर रखा पानी का बर्तन गरम होरहा था। आते ही उस गणेश रूपी बैल ने कूदते-फाँदते जो एक लात दी उस मिट्टी के बर्तन को तो वह टुकड़े-टुकड़े हो चला; सारा पानी बह चला और मेंढ़क और मेंढ़की अपार हर्ष में फुदकते-फुदकते जा-पहुँचे पुनः तालाब में—अपने निवास स्थान।

हे गणेश भगवान् उन मेंढ़क-मेंढ़की का संकट काटा वैसा, आप हम सब का काटें। उन्हें जिस प्रकार कष्ट मिला—गरम पानी में सिज़ोये गए, वैसा दुःख किसे भी न मिले।

———

तुलसी व्रत कथा

कथा बहुत पुरानी है, एक बुढ़िया रहा करती थी। बुढ़िया का नियम था—वह हर रोज ठीक समय पर 'तुळसी' की पूजा करती, एक लोटा उसमें डालती और तब कहीं जाकर अन-पान ग्रहण करती। बुढ़िया पूजा करते समय तुलसी माता से प्रार्थना करती. 'माता, अन दै, धन दै, लछ दै, लिखमी दै, पूतां रो परिवार दै, भाई दै, भतीजा दै, इग्यारस रो दिन दै, सूरज री साख दै, श्री कृष्ण भगवान् री खांध दै।'

इस प्रकार वह बुढ़िया रोज पूजा करती और रोज ही यह इस प्रकार की तुलसी माता से प्रार्थना करती। बुढ़िया की जब यह प्रार्थना तुलसी माता ने सुनी, तो उन्हें बड़ी चिन्ता होने लगी। उनका शरीर क्षीण हो चला, वे दिन-प्रति-दिन कुम्हलाने लगी।

भगवान् ने जब देखा तुलसी जी कुम्हला रही हैं, तो उन्होंने इसका कारण पूछा। तुलसी जी ने डोकरी की सारी कथा कहते हुए बताया मुझे और किसी प्रकार का भय नहीं है। मैं उसे उसकी सभी मनोकामनाएँ पूर्ण कर सकती हूं। पर, 'श्री कृष्णजी री खांध दें'—मैं जब मरूँ तो मुझे श्री कृष्ण भगवान् उठाने के लिए आवें, यह कार्य मुझसे कैसे सम्भव हो सकता है ?

भगवान् ने यह सब सुना तो हँस पड़े। उन्होंने तुलसी जी से कहा-तो इसकी कौन चिन्ता है। मैं सब ठीक कर दूँगा समय आने पर। आप से जब बुढ़िया ऐसा ही वरदान माँगती है, तो उसे सहर्ष देदें।'

और समय पाकर कुछ ही वर्षों बाद बुढ़िया देवलोक को चल पड़ी। बुढ़िया को नहलाया गया, उसे नवीन वस्त्र पहिनाये गये। मरणोपरान्त जैसे सभी संस्कार होने चाहिये, बुढ़िया के भी किये गये। अभी उसके बेटे-पोते उसे उठाने को ही थे— शमसान भूमि में ले जाने के लिए कि उनके ताज्जुब का पारावार नहीं रहा। बुढ़िया इतनी भारी हो चली कि सभी लोगों के मिलकर उठाने पर भी वह जमीन से जरासी भी उठाई नहीं जा सकी। सभी हैरान होगये। शहर के सभी लोग आये, साधु आये, सन्यासी आये, कई ऋषि-मुनि और तपस्वी भी जँगलों में से आये यह सब सुनकर और लगे आजमाने अपना अपना, योगबल, तपबल, मंत्रबल, लेकिन सभी असफल रहे, सभी हार, थक गये।

शाम हो चली सभी लोग चिन्ता सागर में गोते लगाने लगे। हैरान होकर वे सभी मन मारकर बैठ गये। अब वे लोग कर भी तो क्या सकते थे! जहाँ शक्ति मानव की नहीं देती काम वहीं वह उस शक्तिमान को टेरा करता है। बुढ़िया के दाह-संस्कार में योग देने वाले सभी लोग भगवान् का स्मरण करने लगे।

उन्होंने देखा एक बालक उन्हीं की ओर भागा आरहा है। उस बालक ने आते ही पूछा, 'भाई! यह जमघट किस बात का है? तुम लोग यहाँ सारे के सारे किस कार्य वश इकट्ठे हो चले हो? सारी कथा उस बालक के प्रति कहते हुए एक वृद्ध ने बड़े ही कातर शब्दों में कहा—बुढ़िया तो बड़ी ही पुण्यशीला, धर्मात्मा, ईश्वर-भक्ता थी। फिर यह कौन पूर्व जन्म के कुकर्म हैं यह, हम सभी के उठाने पर भी उठाई नहीं जा रही है। उत्तर में उस बालक ने हँसते-हँसते कहा, 'तो मैं भी अपनी शक्तिभर आजमालूँ—यदि आप लोगों की राय हो तो।

उपस्थित लोगों में से कुछ लोग बालक के इस भोलेपन पर हँसे, कुछ लोगों ने उसकी मूर्खता पर मुंह बिगाड़ा, कुछ लोगों ने उसके इस प्रश्न पर विस्मय व्यक्त किया। फिर भी उस वृद्ध ने उससे प्रभावित होकर उसका ऐसा करना सहर्ष अंगीकार कर लिया।

लोगों ने देखा उस बालक ने अभी अपना कन्धा बुढ़िया को उठाने को लगाया ही था कि वह जमीन से काफी ऊँचाई पर आ-ठहरी। अब तो बुढ़िया इतनी हलकी प्रतीत होने लगी जैसे कोई फूलों का छबड़ा लिए जा रहा हो।

इस प्रकार बुढ़िया का दाह-संस्कार विधिवत् हो चला। वह बालक भी बुढ़िया के साथ-साथ शमसान-भूमि पर आ-ठहरा। बालक को पूछने पर, 'हे सुबाल! तुम कौन वंश को उज्ज्वल, पवित्र करते हो?' भगवान् ने अपना चतुर्भुज रूप सभी लोगों को वहीं दिखलाया और फिर अन्तर्ध्यान हो चले।

'हे तुळसी माता' ज्यौं ऊवै डोकरी नै तुष्टमांन हुई, उसी सकल नै हुवै।

सोमवार की कथा

एक समय की बात है—कहीं एक राजा और एक जाट रहा करते थे। जाट और राजा दोनों ही शिवजी के बड़े भक्त थे। बिना किसी प्रकार का नागा किए जाट भी शिवजी की पूजा करने जाया करता; लेकिन राजा बड़े ही ठाठ-बाट के साथ, हाथी-घोड़े, रथ-पालकी, गाजे-बाजे, व फौज-पलटन के साथ जाया करता—और जाए भी क्यों नहीं आखिर राजा जो ठहरा—उसके यहाँ कौन बात की कमी थी।

शिवजी का मन्दिर शहर के बाहर काफी दूर नदी के किनारे पर था। जाट का यह नित्य प्रति-दिन का नियम था—वह नदी में तैरता-तैरता जाता और उसकी बीच धारा में से शिवजी के लिए जल पूजा के लिए लाता। वह वहाँ जाकर यह जल अपने मुँह में भरता और फिर भगवान् पर कुल्ला करके बड़े ध्यान मग्न हो उनके सम्मुख बैठकर माला फेरा करता। मालोपरांत वह पूछा करता—'पूजा भई।' तब शिवजी प्रसन्न होकर बदले में उत्तर देते— 'भई' !! और तब जाट वहाँ से उठकर अपने घर को आता और अपना काम-धंधा करता। जब तक भगवान् शिव के मुँह से यह उत्तर नहीं सुनपाता—'भई'! जाट, वहाँ से उठना तो दरकिनार रहा—हिलता तक नहीं था।

इधर राजा साहब का ठाठ ही निराला था। उनके यहाँ भला किस बात की कमी थी। वे पूजा का थाल सजाए—धूप, दीप, पुष्प, केशर, कपूर, फल-फूल और प्रसाद से पूजा किया करते। उन्हें इस बात का बड़ा ही अभिमान था। मैं इतने उपकरणों के साथ शिवजी की पूजा किया करता हूं; निश्चय ही मैं शिवजी का प्यारा भक्त हूँ ! मुझे स्वर्ग में स्थान मिलेगा।

एक दिन भगवान् को अपने भक्तों की परीक्षा लेने की सूझी। फिर भला क्या था—भगवान् ने माया जो फैलाई तो आँधी-तूफान और साथ ही बड़े जोरों की मूसलधार-वर्षा हो चली। शहर में इस प्रकार का भयंकर तूफान और जोरों की वर्षा तो सैकड़ों वर्षों के इतिहास में भी नहीं हो पाई थी, जैसी आज हुई। सभी शहरवासी भयभीत हो उठे—आखिर यह प्रलय कैसा !!

ऐसे भीषण समय में भी जाट पूजा करने का समय टला जानकर, घर से मन्दिर को चलपड़ा। वह तूफान से संग्राम करता, मेह-पानी में भीगता हुआ नदी के किनारे शिव-मन्दिर में आन पहुंचा। नदी, वर्षा के उफनी चली आरही थी। जाट को यह कुछ भी भयभीत नहीं कर सके। भक्त तो भगवान् पर आश्रित रहता है; फिर भला उसे भय और कष्ट किस बात के। वह कूदकर फौरन नदी के मध्य धार में पहुँचा, वहाँ से भगवान् की पूजा के लिए फिर मुँह में जल भरा और हाथ मारता-मारता किनारे आ लगा। उसने भगवान् पर कुल्ला किया। 'पूजा भई'! कहकर फिर ध्यान मग्न होकर भगवान् के उत्तर की परीक्षा में बैठ रहा। भगवान् तो आज भक्तों की परीक्षा लेने को ठाने बैठे थे—इन्होंने आज उत्तर नहीं दिया।

जाट का तो ऐसा नियम था—जब तक 'भई'! का उत्तर भगवान् शिव नहीं दिया करते, वह अपने स्थान से उठने का नाम तक नहीं लेता, और आज जब उत्तर नहीं मिला, तो वह शान्त और धैर्य मुद्रा में ध्यान लगाए अपने पर आसन जमा रहा। इधर भीषण वर्षा के कारण मन्दिर का छत फट चली और एक दीवार में दरार भी पड़ गई। छत के फटने से मलवा नीचे मन्दिर में गिरने लगा। एक-दो ईंटे आकर जाट के पास भी गिरी। ऐसा प्रतीत होने लगा—जैसे यह मन्दिर अभी धराशाई हुआ। लेकिन जाट तो अपना आसन जमाए अटल बना बैठा रहा।

भगवान् शिव ने देखा—यह भक्त तो परीक्षा में उत्तीर्ण होगया, तो उन्होंने कहा—'भई' ! जाट खुशी-खुशी अपने घर को लौटा।

इधर आँधी, तूफान और भीषण वर्षा को देखकर राजा साहब ने सोचा-ऐसी कौन देरी होरही है पूजा में। यह रहा मन्दिर ! अभी बैठा घोड़े पर और बात ही बात में पहुँचा मन्दिर को। व्यर्थ ही में इतने नौकरों-चाकरों को क्यों कष्ट दिया जाय और क्यों इस आफत में पड़ा जाय !! जब आंधी शान्त हुई और वर्षा ज़रा रुक पाई तो राजा-साहब चले शिव-मन्दिर को पूजा करने।

समय पाकर राजा साहब का भी देहान्त होचला और उस जाट का भी। राजा साहब के ताजुब का पारावार नहीं रहा जब उन्होंने देखा—जाट तो स्वर्ग चला गया है और उन्हें स्वर्ग जाने की स्वीकृति नहीं मिल सकी। राजा साहब ने क्रोधित होकर भगवान् शिव से उपालंभ देते हुए कहा—भगवन् आपके यहां भी भारी अन्धेर है। मैंने तो आपकी सेवा इतने ठाठ-बाट से की उसे तो मिला 'नरक' और जाट ने केवल झूठा पानी ही आपके सिर पर चढ़ाया, उसे मिला स्वर्ग !! बड़ा अच्छा है आपका न्याय !!

भगवान् शिव ने जरा मुस्काते हुए उत्तर दिया—मैं ऊपर के ठाट-बाट से प्रसन्न नहीं हुआ करता हूं। तुम तो केवल अभिमान को लिए, राजा की शान में आकर पूजा करते थे; तुम्हारे हृदय में भक्ति का लेशमात्र भी अंश नहीं था। और जाट सच्चे हृदय से सेवा करता था—समझे !!

हे भोलेनाथ, जिस प्रकार उस जाट को स्वर्ग का सुख दिया-उसे बैकुण्ठ-धाम मिला, वैसा सब को मिले और जिस प्रकार राजा को निराश किया, वैसा निराश आप किसे भी नहीं करें।

———

मंगलवार की कथा

एक गाँव में एक साहूकार रहा करता था। उसकी स्त्री हनुमान जी की बड़ी ही भक्ता थी। वह हर समय, आठों पहर श्री हनुमान जी की माला जपा करती। हमेशा हनुमान जी को 'सवा सेर का एक रोटा' भोग के रूप में चढ़ाया करती।

लम्बे समयोपरान्त श्री हनुमान जी इस साहूकार की स्त्री की भक्ति से प्रसन्न हुए। उसके एक पुत्र रत्न उत्पन्न हुआ।

भगवान् भक्तों की बड़ी ही कठिन परीक्षाएँ लिया करते हैं। भला वे इस साहूकार की स्त्री को इस परीक्षा से कब छूट देने वाले थे। जब इसका लड़का पाँच वर्ष का हुआ तो उस समय साहूकार इस असार संसार से चलता रहा।

साहूकार की स्त्री ने इस भीषण दुःख को भगवन् की इच्छा एवं अपने ही कर्मों का फळ समझे और बड़े धैर्य एवं शान्ति से सहन किया। वह हनुमान जी की सेवा और भक्ति से तनिक भी विचलित नहीं हुई। उसी प्रकार श्री हनुमान जी की सेवा और सवा सेर का रोटा उसे हमेशा चढ़ाती रही जैसा वह अपने पति के जीवित-काल में करती रही थी।

साहूकार के इस पुत्र का नाम था अनूपचन्द। जब अनूपचंद बड़ा हुआ और उसकी शादी हो गई, तो उसकी स्त्री अपने घर को आई। अनूपचन्द की पत्नी सावित्री को सास का यह नित्य-प्रति दिन घण्टों तक हनुमान जी की पूजा में समय लगाना एवं सवासेर आटे का रोट रोज भोग लगाना अच्छा नहीं लगता। काफी दिनों तक तो वह यह सब देखती रही और सहन करती रही।

अन्त में एक दिन उसने साहस करके पति को यह सारा विस्तारपूर्वक कहा और साथ ही यह भी कहा—मैं यह व्यर्थ का सवासेर आटा नष्ट होता नहीं देख सकती। आप अपनी माता को इसके लिए रोक दीजिये। इस प्रकार आप देखेंगे कि लगभग एक मन आटे की हर महीने अपने यहाँ बचत हो जायगी। इतनी भारी बचत से न मालूम घर के कौन-कौन से काम-धंधे निबेर जा सकते हैं।

अनूपचन्द ने उत्तर में कहा—मैं यह सब जानता हूँ कि माता जी सेवा पूजा में घण्टों बैठी रहती है। मुझे यह भी ज्ञात है—वह सवासेर का रोट हर रोज प्रसाद रूप में श्री हनुमान जी के भेंट रखा करती है। लेकिन मैं किसी भी प्रकार से अपनी माता जी को यह बन्द करने के लिए बाध्य नहीं कर सकता। मेरी माताजी तो मेरा जन्म होने से पूर्व ही यह सब करती आ रही है। भला यह कोई उनसे कहने जैसी भी बात है।

अनूपचन्द का यह उत्तर सुनकर सावित्री बड़ी नाराज हुई। वह कहने लगी—यदि आप उन्हें बन्द करने को नहीं कह सकते हैं तो फिर उन्हें घर से बाहर निकाल दें। अनूपचन्द ने कहा—अरी तुम पगली तो नहीं होगई हो! कहीं मां को भी घर से बाहर निकाला जा सकता है। यह तो कभी भी नहीं होने जैसी बात है।

तब तो सावित्री बहुत ही बिगड़ी। उसने अनूपचन्द से कहा—जब तक आप अपनी माता को घर से बाहर नहीं निकाल देगें, मैं अन्न-जल कुछ भी नहीं ग्रहण करने की। वह रूसकर जा बैठी एक कमरे में और उसे भीतर से बन्द कर लिया।

लाचार होकर ऐसी विषम परिस्थिति में अनूपचन्द को अपनी स्त्री की यह अनुचित मांग स्वीकार करनी पड़ी। वह अपनी मां के पास आया और कहने लगा—माताजी, मैंने गंगा-स्नान करने का निश्चय किया है। क्या आप भी मेरे साथ चलेंगी।

अनूपचंद की मां ने जब बेटे के मुँह से गंगाजी जाने की बात सुनी तो वह बहुत ही प्रसन्न हुई। उसने कहा—बेटा, यह भी क्या पूछने जैसी बात है? मैं यदि तुम्हारे साथ तीर्थ-स्थान पर नहीं चलूँगी तो फिर किसके साथ चलूँगी। मैं तो इसी दिन की प्रतीक्षा में ही थी, बेटा!

अब भला क्या था—अनूपचंद अपनी मां को लिये गंगाजी को चल पड़ा। जब वह काशीजी पहुँचा, तो माता को गंगा के किनारे पर बिठाकर स्वयं अपने घर को चलता बना। जाते समय कहता गया—माँ, तुम यहाँ जरा ठहरी रहना। मैं अभी-अभी जंगल होकर आरहा हूँ।

बुढ़िया को क्या मालूम था कि उसका पुत्र टट्टी हो आने का झूठा बहाना बनाकर उसे यहाँ गंगा के किनारे अकेली छोड़कर घर को चला गया है। वह बेचारी वहाँ घण्टों तक अनूपचन्द का इन्तजार करती रही। लेकिन जब दिन अस्त होगया तो उसे चिन्ता ने आघेरा। सबसे अधिक चिन्ता तो बुढ़िया को श्री हनुमान जी की सेवा की थी। उसे फिकर लगी कि मैं कल सुबह होते ही भगवान को सवासेर का रोटे का प्रसाद कैसे चढ़ाऊँगी।

इस प्रकार चिन्ता करते-करते जब बुढ़िया को सुबह हुई तो उसने देखा— श्री हनुमानजी नाचते-कूदते, उछलते उसके पास आरहे हैं। उन्होंने बुढ़िया के पास आते ही कहा—

लाल लंगोटो, हाथ में सोटो,
ले डोकरी सवा सेर रो रोटो।
थें मनैं दियो बालापण में,
हूं थनै दूं बूढ़ापण में ॥

बुढ़िया ने सवा सेर का रोटा उनसे लेलिया और श्री हनुमान जी का ध्यान लगाकर, उन्हें चढ़ावा चढ़ा दिया। इस प्रकार बुढ़िया अपने दुःख के दिन काटने लगी। अब तो हमेशा श्री हनुमान जी बुढ़िया के पास सुबह-सुबह आते और इस प्रकार से कहते—

लाल लंगोटो, हाथ में सोटो,
ले डोकरी सवा सेर रो रोटो।
थें मनैं दियो बालापण में,
हूं थनै दूं बूढ़ापण में ॥

और बुढ़िया को सवा सेर का रोट देकर कूदते-फांदते वापिस चले जाते।

एक दिन बुढ़िया ने श्री हनुमानजी का ध्यान करते हुए उनसे प्रार्थना की, 'महाराज, और तो सब ठीक है। जरा रहने के लिये तो स्थान बनवा दें। हनुमानजी ने कहा तथास्तु—

दूसरे ही दिन हनुमानजी ने डोकरी को दो महल-एक-सोने का और दूसरा चाँदी का बना दिया। डोकरी अब बड़े आनंद से यहाँ अपने दिन व्यतीत करने लगी।

इधर अनूपचन्द की दशा श्री हनुमान जी के कोप के कारण दिन प्रतिदिन बिगड़ने लगी। बिगड़ते-बिगड़ते, दशा ऐसी उसकी बिगड़ी कि सुबह खाने को है तो शाम को नहीं है और यदि शाम को खाने को है तो सुबह खाने को नहीं है। अन्त में किसी एक ज्योतिषी ने अनूपचन्द की पत्नी-सावित्री को सुझाया-यह सब हनुमान जी का प्रकोप है। तुम यदि अपनी सास को लौटाकर अपने घर में वापिस ला-सको तो यह सब पूर्व-वत हो सकता है।

अब तो लाचार होकर सावित्री ने अपने पुत्रों से कहा—पुत्रों, जैसे भी हो, कहीं से अपनी दादी को ढूंढ़कर ले आओ। पहले तो बच्चों ने जाने से इन्कार कर दिया। कहने लगे—हम लोग कौन मुँह लेकर जावें! आपने तो उन्हें घर से बाहर निकलवा दिया!! हमें जाते समय शर्म लगती है। लेकिन जब सावित्री ने बहुत कुछ कहा सुना तो वे अपनी दादी को ढूंढ़ने चल पड़े।

चलते-चलते जब वे गंगा के किनारे पर आए तो उन्हें अपने पिता के बताये हुए स्थान पर कुछ और ही देखने को मिला। सोने और चाँदी के महलों को देखकर उन्होंने अनुमान लगाया—हो-न-हो ये महल किसी राजा-महाराजा के हैं। फिर भी उन्होंने हिम्मत से काम लिया और वे चले ही गये इन महलों के भीतर।

जब वे भीतर गये तो उन्हें बड़ा ताजुब हुआ—यहाँ उनकी दादी बैठी हुई है। कई नौकर-चाकर उनकी सेवा आदि कर रहे हैं—यह महल उसी का ही है।

बच्चों ने कहा—दादी मां, बहुत हो गया, अब आप घर चलें। हमें बड़ा दुःख है कि पिताजी माताजी की बातों में आकर आपको यहाँ गंगा के तट पर छोड़कर चले गए।

बुढ़िया ने कहा—बच्चों, मुझे इसका लेशमात्र भी-रंज नहीं है। कारण—होना वही होता है जो भगवान् को मंजूर होता है। इसमें आप लोगों को दुःख करने जैसी कोई बात नहीं है। आप लोगों का इसमें क्या दोष हो सकता है। लेकिन मैं घर तो श्री हनुमानजी की आज्ञा लेकर ही चल सकती हूँ—इससे पूर्व तो कदापि नहीं।

अभी यह चर्चा हो ही रहो थी कि हनुमानजी यह कहते हुए आन उपस्थित हुए—

लाल लंगोटो, हाथ में सोटो,
ले डोकरी, सवा सेर रो रोटो ॥
थें मनैं दियो बालापण में,
हूं थनै दूं बूढ़ापण में ॥

यह देखकर डोकरी के पोत्र अपने घर को वापिस चले गए। उन्होंने सारा यहाँ का वृतान्त वर्णन करते हुए बताया—हनुमान जी स्वयं दादी के पास आते हैं और नित्य सवासेर का रोट देकर वापिस चले जाते हैं। बुढ़िया हमसे तो नहीं आने की! भले हो आप जा सकते है !!

लाचार होकर अब तो अनूपचंद को ही आना पड़ा। उसने आते ही मां के चरणों में अपना सिर नवाया और उससे घर चलने की प्रार्थना की।

बुढ़िया ने कहा—बेटा चलने को तो मैं चल सकती हूं। लेकिन मैं हनुमानजी की आज्ञा लिये बिना कुछ भी नहीं कर सकती। ठीक समय पर जब हनुमानजी डोकरी के पास आ उपस्थित हुए, यह कहते हुए—

लाल लंगोटो, हाथ में सोटो,
ले डोकरी सवा सेर रो रोटो।
थें मनैं दियो बालापण में,
हूं थनै दूं बूढ़ापण में ॥

अनूपचंद ने श्री हनुमानजी से प्रार्थना करते हुए निवेदन कया—महाराज, मेरी बूढ़ो मां को छुट्टी देदें; मैं इसे घर लेजाना चाहता हूँ। हनुमानजी ने कहा—यदि तुम्हारी ऐसी ही इच्छा है तो ले जासकते हो। अनूपचंद ने कहा—महाराज, फिर ये सोने-चाँदी के महल आदि······।'

हनुमानजी ने कहा—ये सब तुम्हें मिल जाएँगे। श्री-हनुमानजी ने अनूपचंद और डोकरी सहित वे महल पलक मारते-मारते ही डोकरी के गांव में लाकर धर दिए। उन्होंने कहा—डोकरी, मैं तुम पर प्रसन्न हूं, कोई वर मांग !! बुढ़िया ने कहा—भगवान् मुझे तो अब आपके दर्शनों के अतिरिक्त किसी भी वस्तु की चाहना नहीं है। लेकिन जब वर मांगने के लिये आज्ञा देते हैं, तो मैं इतना ही मांगती हूं कि मुझे मुक्ति मिले और

अनूपचंद को इतनी धन-दौलत मिले कि इसकी सात पीढ़ियों से भी खाया नहीं जा सके। श्री हनुमानजी ने कहा—'तथास्तु'—और अन्तर्धान होगए। अब तो अनूपचंद और उसकी पत्नी सावित्री बड़े ही सुख से रहने लगे।

हे बजरंगबली—अनूपचंद को जिस प्रकार दुःख व कष्ट दिया, वैसा तो किसी को भी मत देना। और जैसी डोकरी को मुक्ति प्रदान की वैसी सभी को देना।

बुधवार की व्रत कथा

एक समय की बात है—कहीं एक साहूकार रहा करता था। इस साहूकार के एक ही पुत्र था।

जब यह लड़का बड़ा हुआ तो इसका विवाह समीप के किसी गाँव में कर दिया गया।

कुछ वर्षों के बाद एक दिन लड़के ने ही अपनी मां से कहा—मां, मैं आज ससुराल जाऊँगा। मां ने कहा—बेटा भले ही चले जाना। पण्डित जी महाराज से तुम्हारे जाने का अच्छा मुहूर्त पूछ लेने दो; तब जाना ठीक रहेगा और आज तो बुधवार है। बेटा ! बुधवार को घर नहीं छोड़ा जाता है।

लेकिन इस साहूकार के पुत्र ने जिद पकड़ी तो पकड़ ही ली। उसने मां से कहा—मां, मैं तो आज ही जाऊँगा और आज यदि बुधवार है, जैसा कि तुम कहती हो तो आज ही प्रस्थान करता हूँ। इतना कहकर वह उसी दिन बुधवार को ही अपने घर से ससुराल को प्रस्थान हो गया।

साहूकार का यह इकलौता पुत्र जब अपनी ससुराल पहुँचा तो उसका वहाँ बड़ा ही मान-सत्कार हुआ। इस प्रकार जब उसे वहाँ रहते सात रोज होगए, तो उसने सास से अपने घर को जाने की इच्छा प्रकट की। सास ने कहा—कुंवर जी ! मैं चाहती हूँ—कुछ दिनों तक आप यहाँ और रहें। आखिर इतने वर्षों के उपरांत यहाँ पधारे हैं तो कुछ दिन तो हमें भी सेवा करने का अवसर दें। ऐसी जल्दी क्या जाने की पड़ी है ? जब साहूकार का लड़का जिद पकड़े ही रहा, तो सास ने कहा—

आप जाना चाहें तो भले ही जाएँ। लेकिन आज नहीं। आज तो बुधवार है। बुधवार को प्रस्थान नहीं किया जाता।

और यह ठीक भी कहा गया है—युवावस्था और बुद्धि इन दोनों का मेल तो बहुत ही कम देखा जाता है। फिर इस वणिक पुत्र में भी बुद्धि ठिकाने रहे युवावस्था में—यह कैसे सम्भव हो सकता था। उसने सास से कहा—मैं बुधवार–फुदवार कुछ भी नहीं समझता। आपको यदि मुझे खुश रखना है तो आज ही रवाना करवादें। अन्यथा मैं वैसे ही अकेला चला जाऊँगा।

अब तो सास बड़ी ही दुविधा में पड़ गई। दामाद को यदि रवाना करती है तो आज बुधवार है और यदि वह अपनी पुत्री को नहीं भेजती है, तो दामाद अप्रसन्न हो जाता है। उसकी नाराजी का ख्याल रखते हुए सास ने कहा—'जैसी आपकी इच्छा'।

साहूकार का यह पुत्र उसी समय बुधवार को ही अपनी पत्नी को साथ लिए अपने गाँव को प्रस्थान कर गया।

भगवान् बुध ने देखा—इसकी मति मारी गई है; यह मेरा अपमान कर रहा है, तो उन्होंने साहूकार के पुत्र को सीख देने की ठानी।

जैसे ही वह अपने गाँव की राह चल रहा था—भगवान बुध ने उसी प्रकार साहूकार के पुत्र का रूप बना लिया और उसे राह में रोककर कहने लगे–'भाई, यह पत्नी तो मेरी है। इसे तुम कहाँ ले जारहे हो'।

साहूकार के पुत्र ने उत्तर में—यह पत्नी तो मेरी है। मैं इसे अभी–अभी ही अपनी ससुराल से लिवाए आरहा हूं।

अब क्या था—दोनों व्यक्ति एक दूसरे से उलझ पड़े। दोनों कहते रहे—यह पत्नी मेरी है। इस प्रकार दोनों ही लड़ते-झगड़ते राज-दरबार जा पहुँचे।

राजा ने देखा—दो व्यक्ति शक़्ल-सूरत में ठीक एक ही समान हैं। उनके साथ एक औरत भी है। राजा ने कहा-बोलो, तुम लोग यहाँ किस कारण से आए हो?

साहूकार के पुत्र ने कहा—सरकार यह पत्नी मेरी है। मैं इसे अभी-अभी अपनी ससुराल से लिए अपने गांव को जारहा था। नहीं जानता यह व्यक्ति कौन है! मुझे यह राह में मिल गया और कहने लगा—यह स्त्री मेरी है। यह झगड़ा भी कर रहा है और जबरन मेरी पत्नी को अपनी बनाए ले जाने को उद्यत होरहा है।

राजा ने साहूकार-वेषधारी भगवान् बुध से पूछा—कहिए आप इस विषय में क्या कहना चाहते हैं? भगवान् बुध ने कहा—राजन्, यह मेरी स्त्री है। एक रोज यह पानी भरने तालाब पर गई थी और फिर घर को लौटकर नहीं आई। आज एका-एक जैसे ही मैं किसी गांव को जारहा था—मैंने देखा, यह व्यक्ति इसे लिए जारहा है। मैंने इससे अपनी स्त्री लौटाने की प्रार्थना की, लेकिन यह मुकर रहा है। अब आप ही न्याय करें—मुझे मेरी पत्नी दिलवा दें।

राजा ने देखा—औरत तो एक ही है और उसके हकदार दो व्यक्ति बने जा रहे हैं। दोनों ही व्यक्ति शक्ल-सूरत में भी एक जैसे दिखाई दे रहे हैं और दोनों ही अपनी-अपनी बात पर अड़े हुए हैं।

राजा ने फैसला देते हुए कहा—देखो, आप दोनों ही मेरे इस नगर का चक्कर काट लें। जो व्यक्ति पहले चक्कर काटकर लौट आएगा, बस समझो—पत्नी उसी की है। राजा ने इन दोनों व्यक्तियों के पीछे अपना एक जासूस लगा दिया।

बुध भगवान् तो अपनी माया के बल पर फौरन ही नगर का चक्कर काट आए। लेकिन साहूकार का लड़का—बेचारे ने बहुतेरी कोशिश की, बड़ी तेजी से भागा दौड़ा—फिर भी पहले नहीं आ सका।

राजा ने फैसला देते हुए बुध भगवान् रूपी साहूकार से कहा—यह औरत तुम्हारी है। अब तो साहूकार का पुत्र बड़ा दुखी होता हुआ अपने घर को बिना स्त्री प्राप्त किए रवाना हुआ।

राह में चलते-चलते उसे भगवान् बुध उसकी पत्नी को लिए हुए मिले। उन्होंने कहा—यह लो तुम्हारी पत्नी, मुझे तुम्हारी पत्नी से क्या लेना-देना! लेकिन भविष्य में याद रखना, कभी भी बुधवार को अपने घर से प्रस्थान मत करना। साहूकार के पुत्र ने नमस्कार करते हुए निवेदन किया—प्रभु, मैं भविष्य में कभी भी ऐसी भूल नहीं करूँगा।

हे भगवान् बुध, जिस प्रकार उसकी स्त्री छीनी गई, उसे कष्ट हुआ, ऐसा कष्ट किसी को भी न हो। जिस प्रकार उसे अपनी पत्नी पुनः प्राप्त हो पाई, उसे खुशी हुई—वैसी सब को हो।

———

गुरुवार की कथा

एक था साहूकार—उसका व्यापार बहुत ही बढ़ा-चढ़ा था। उसका परिवार 'फूलां छायो' था। वह भगवान बृहस्पति का बड़ा सच्चा भक्त था।

घर में इतना काम-धंधा था कि उसकी पत्नी को एक मिनट के लिये भी फुर्सत नहीं मिला करती। तमाम दिन वह घर के धंधों में उलझी ही रहती थी।

एक दिन साहूकार की पत्नी किसी कारण-वश घर के दरवाजे के बाहर खड़ी थी-उसे एक पास की पड़ौसिन ने पुकारा। अरी, तुम भी ठीक हो। दिन भर घर में पड़ी रहती हो। घड़ी भर तो घर से बाहर भी आया कर!

साहूकार की स्त्री ने तब उत्तर देते हुए कहा— क्या करूँ! मुझे तो एक पल भर भी श्वाँस लेने को समय नहीं मिल पाता। घर में इतना काम रहता है कि सिर ऊपर उठाये भी नहीं उठता।

पड़ौसिन ने कहा—समय तो तुम्हें मैं निकालकर दे सकती हूँ। साहूकार की स्त्री ने कहा—वह कैसे? उसने कहा—प्रत्येक गुरुवार को तुम अपना सिर साबुन से धो लिया करो, अपने पति की हजामत उसी दिन बनवा दिया करो। झाड़ झूड़कर घर की सफाई कर लिया करो और लिपाई-पुताई कर लिया करो। अपने आप समय तुम्हें मिल जायगा।

जब गुरुवार आया, तो उसने अपना सिर साबुन से धो लिया। पति से कहा—जाइये, आप हजामत करवा लीजिये। उसके पति ने कहा—मैं तो ऐसा नहीं करने का। और-यदि तुमने भी ऐसा ही किया तो तुम्हें पछताना पड़ेगा।

सेठानी ने जिद पकड़ लिया—आपको ऐसा करना ही होगा। मुझे तो एक मिनट भी घर के झंझटों से समय नहीं मिल पाता।

लाचार होकर साहूकार को अपनी पत्नी की आज्ञा का पालन करना ही पड़ा। सेठानी ने भी अपनी पड़ौसिन के द्वारा बताए सभी कार्य कर लिए। इस प्रकार जब चार गुरुवार तक वह ऐसा करती रही, तो भगवान बृहस्पति देव उस साहूकार से अप्रसन्न होगए।

अब भला क्या था—उसे व्यापार में घाटा होने लगा। उसके बेटे-पोते मर गए। उसके जानवर गाय आदि सभी मर गए। उसके पास केवल उसकी एक लड़की बच रही।

साहूकार ने अपनी पत्नी से कहा—देखो, मैं तो परदेश में कमाने के लिए जा रहा हूँ, पीछे से तुम्हारे पास इस लड़की को छोड़े जारहा हूँ। यह हमेशा बकरियें आदि चरा लाएगी। तुम दोनों इसी प्रकार अपना गुजारा करते रहना।

इतना कहकर साहूकार तो किसी शहर में चला गया। वहाँ वह एक सेठ के यहां मुनीम के स्थान पर काम करने लगा। उधर गाँव में उसकी लड़की बकरियां आदि चरा लाती—जितना जो कुछ मिल पाता, उससे दोनों मां-बेटी अपना पेट भरती।

जब यह क्रम कई वर्षों तक चलता रहा तो एक दिन लड़की पास वाली पड़ौसिन के यहाँ चली गई। वहाँ से जो विलंब से वापिस आई—तो मां ने उसे देर से आने का कारण पूछा। लड़की ने उत्तर में कहा—मां, यह अपनी पड़ौसिन तो बड़ी ही निकम्मी—और दूसरे के सुख को देखकर जलने वाली है। स्वयं तो अपनी बहू-बेटियों को लेकर भगवान बृहस्पति की पूजा कर रही है और अपने को यह सब उलटा काम करने को बता दिया।

मां ने तब कहा—यदि भगवान बृहस्पति अपने पर कृपा करेंगे तो अपन भी उसकी पूजा करनी प्रारम्भ कर लेंगे। बेटी ने कहा—मां, अपन तो आज से ही प्रारम्भ करलें। उसी दिन से मां तो बृहस्पति भगवान की कथा कहने लगी और बेटी सुनने लगी।

इस प्रकार इन्हें जब कथा कहते-कहते काफी समय हो गया तो भगवान बृहस्पति ने सोचा—साहूकार की पत्नी ने दूसरों की बातों में आकर—उलटे काम किये, इसका तो कोई दोष नहीं है। इन लोगों की गरीबी दूर करनी चाहिये।

भगवान ने ब्राह्मण का वेश बनाया—उन्होंने पीले वस्त्र पहिन लिए, पीले घोड़े पर सवार होकर वे साहूकार के घर पर जा पहुंचे।

घर पर जाकर भगवान ने कहा—बच्ची, मुझे 'उतारा देवो'। उसने कहा महाराज मैं आपको अपने यहां कैसे ठहरा सकती हूँ। मेरे पतिदेव यहां नहीं हैं। भगवान ने कहा-मैं तो तुम्हारे घर ही ठहरूँगा, और कहीं जाऊँगा नहीं।

साहूकार की पत्नी ने कहा—तो आप पीछे गायों के बाड़े में ठहर जाइए। भगवान गायों के बाड़े में ही ठहर गए। इसके बाद मां ने बेटी से कहा—बेटी, पड़ौसिन से जाकर, एक सेर आटा, एक पाव खांड़ और एक पाव घी तो मांग लावो।

लड़की पड़ौसिन के घर गई, कहने लगी—बहन, एक सेर आटा, पाव भर खांड़ और एक पाव घी तो देना। हमारे यहां मेहमान आए हैं—उन्हें भोजन करवाना है।

तब पड़ौसिन ने अपनी बहुओं से कहा इसे दे दो। बहुओं ने कहा—सासूजी इसे देने से क्या लाभ—यह तो बहुत ही गरीब है। वापिस कब लाकर देगी? सासने कहा, यदि लौटा देगी तो ठीक है और नहीं लौटाएगी, तो समझेंगे, ब्राह्मण अपनी ओर से ही भोजन कर गया।

उसने घर आकर रसोई बनाई। बृहस्पति भगवान को भोग लगाकर ब्राह्मण को भोजन करवाया। ब्राह्मण भोजन करके वहीं सो रहा।

जब संझा हुई तो साहूकार की स्त्री को बड़ी ही चिन्ता हुई। सुबह तो इस ब्राह्मण को कहीं से मांगकर भी भोजन करवा दिया। अब संझा में इसे क्या खिलाया जायगा।

बृहस्पति भगवान ने सोचा—साहूकार की पत्नी बड़ी चिंता कर रही है। इस पर मुझे प्रसन्न होजाना चाहिये। उन्होंने कहा—तुम क्यों व्यर्थ में चिंता कर रही हो। अपना भंडार तो खोलकर जरा संभालो।

साहूकार की स्त्री ने अपना भंडार खोलकर देखा तो अन्न-धन, लक्ष्मी से भरा-पूरा है। चारों ओर गुड़, घी और शक्कर भरी पड़ी है।

वह भागती-भागती गई। खांड और घी लेकर बेसन का उसने चूरमा बनाया। भगवान् बृहस्पति का भोग लगाया और फिर उस ब्राह्मण को भोजन करवाया।

गायों के बाड़े में गायें रंभाने लगी। बेटे-पोते सभी जीवित होगए। अब तो उसे मालूम हुआ यह आने वाला ब्राह्मण भगवान् बृहस्पति ही हैं।

अब तो रोज ही वह चूरमा बनाती भगवान् के प्रसाद चढ़ाती, कथा सुनती और फिर भोजन करती। इस प्रकार कई वर्ष व्यतीत होगए तो एक दिन सेठानी ने भगवान् से अर्ज की—भगवन् और तो सभी प्रकार से आनन्द-मंगल है—मेरे पतिदेव को मुझ से मिलवादें। भगवान् ने कहा—यह भी हो जायगा।

वे साहूकार के बेटे के स्वप्न में गए—कहने लगे-ए साहूकार! सोरहे हो या जाग रहे हो। साहूकार ने कहा, भगवन् नींद किसे आरही है। घर छोड़े तो कई वर्ष होगए हैं।

भगवान् ने कहा—घर जा क्यों नहीं रहे हो? उसने कहा—भगवन् घर कैसे जा सकता हूं। मेरे यहाँ तो नव मन सूत उलझा पड़ा है। भगवान् ने कहा सुबह स्नान आदि करके बैठ रहना। देने वाले दे जाएँगे और लेने वाले ले जाएँगे—तुम्हारा नव मन सूत सुलझ जायगा।

उसने ऐसा ही किया—उसका नव मन सूत सारा का सारा सुलझ गया। देने वाले दे गए—लेने वाले ले गए।

सेठ से उसने कहा—मैं अपने घर जारहा हूं। सेठ ने कहा—इस प्रकार क्या जारहे हो? तुम्हारे आने पर तो मुझे बड़ा ही मुनाफा हुआ। साहूकार ने कहा—यदि मुनाफा हुआ है तो मुझे कुछ देदो।

कुछ उसे मुनाफे का और कुछ सेठ ने अपनी ओर से धन देकर साहूकार के पुत्र को बिदा किया।

जब वह गाँव के किनारे पर आ लगा तो एक पनिहारिन से उसने पूछा—कहो, हमारे घर के क्या हाल-हवाल हैं। उस औरत ने कहा—घर के क्या हाल-हवाल पूछ रहे हो। तुम्हारी औरत तो बड़ी मस्ती में है। एक व्यक्ति को घर में रख छोड़ा है और बड़े आराम से अपने दिन व्यतीत कररही है।

साहूकार ने सोचा—पतिव्रता स्त्री थी—भूख के मारे यह बिगड़ गई है। खैर—मैं तो घर जाते ही जो भी व्यक्ति होगा उसे तलवार से मार गिराऊँगा।

इस प्रकार सोचता-विचारता वह घर को पहुँचा।

इधर बृहस्पति भगवान् घोड़े पर सवार होकर रवाना होगये। साहूकार की स्त्री ने पैर पकड़ लिए—भगवन्, आप कहाँ पधार रहे हैं? आपके जाने पर मेरा क्या हवाल होगा। भगवान् ने कहा—जाऊँ क्यों नहीं। तुम्हारे पति के दिल में मेरे प्रति बुरे-विचार पैदा होगए हैं। अब मैं एक क्षण भी नहीं ठहरने का।

साहूकार की पत्नी ने कहा—भगवन्, मेरा पति कहाँ है? भगवान् ने कहा वह देखो, ऊँट पर सवार होकर आरहा है। वह मुझे तलवार से मारेगा।

उसका पति ऊँट से उतरकर पैरों पड़ा—भगवान् मुझे तो कुछ भी ज्ञात नहीं है। मुझे तो पड़ौसिन ने कहा था। भगवान् ने कहा, फिर तुम पड़ौसिन की बातों में आगए! पहिले भी तो पड़ौसिन की बातों में आए थे उसे भूल गए क्या?

साहूकार ने क्षमा माँगते हुए कहा—भगवान् अब मैं ऐसी भूल कभी नहीं करूँगा। आप मेरे घर में निवास करें।

भगवान् बृहस्पति बोले—मैं स्थिर किसी के यहाँ टिक कर नहीं रहा करता। जो मुझे रोज बुलाता है—मैं उसके यहाँ हमेशा चला जाता हूं; जो आठ दिनों के बाद बुलाता है, मैं वहाँ आठ दिनों के बाद चला जाता हूं। इस प्रकार कहकर भगवान् अंतर्द्धान होगए। साहूकार और साहूकार की पत्नी हमेशा कहानी कहते और सुनते—भगवान् बृहस्पति का ध्यान करते। भगवान् की असीम कृपा से उनके यहाँ धन-दौलत बहुत अधिक होगया—सब प्रकार का उनके यहाँ आनन्द-मंगल होगया।

हे बृहस्पति भगवान्, उन पर आप जिस प्रकार महरबान हुए वैसे सभी पर हों; उन पर जैसी आपकी नाराजी रही ऐसी किसी पर न हो।

———

शुक्रवार की कथा

एक साहूकार के सात लड़के थे और सातों ही की शादी हो चुकी थी। इन में छः लड़के तो बहुत ही अच्छा कमाया करते थे, सातवाँ था निकम्मा। इस पर मां-बाप का स्नेह बहुत ही थोड़ा था। तमाम घर के लोगों की भूठन को चूर कर या यों समझें कि भूठन का चूरमा बनाकर इस लड़के को खिलाया जाता और यही खिलाया जाता उसकी पत्नी को। इस सातवें लड़के को यह कुछ भी ज्ञान नहीं था, चूरमा किसका बनाया जाता है। वह तो यह समझता था—सब लड़कों से अधिक स्नेह मां-बाप को मुझ पर ही है, तभी तो मुझे रोज-रोज खाने को चूरमा मिला करता है।

एक दिन इस साहूकार के लड़के के यार-दोस्त घर पर आये हुए थे। मित्र वर्ग बैठकर आपस में नाना प्रकार की बातें वैसे ही विनोदपूर्वक कर रहे थे। एक ने कहा मेरी मां मुझे मेरी इच्छा-नुसार कपड़े आदि सिलवाकर पहिनने को देती है। दूसरे ने कहा मेरी मां मेरी इच्छित सब्जी ही मुझे थाली में परोसती है। सभी अपनी-अपनी प्रशंसा कर रहे थे; तभी इस साहूकार के लड़के ने कहा—तुम सब लोगों से मेरी मां अच्छी है। उसका स्नेह सब भाइयों से भी मुझ पर अधिक है। मुझे तो मां हर रोज खाने को चूरमा देती है।

उसकी पत्नी उसी समय किसी कार्यवश उन्हीं के समीप से होकर निकल रही थी। उसने जो यह सुना तो कहा—हो लिया आपकी मां का स्नेह सब से अधिक आप पर! आपको और मुझे तो वे रोज-रोज घर-भर की भूठन का चूरमा बनाकर खाने के लिए दिया करते हैं।

साहूकार का सबसे छोटा लड़का अपनी पत्नी की यह बात सुनकर जळ-भुनकर रह गया फिर भी उसने सोचा—निश्चय तभी हो सकता है, जब मैं स्वयं इसे अपनी आँखों से देख लूँ।

वह उसी क्षण अपनी मां के पास गया और झूठ-मूठ ही सिर दर्द का बहाना बनाकर मां से कहने लगा—मां, आज तो सिर-दर्द के मारे प्राण निकले जाते हैं; जरा दवा तो लगा दो!

मां का हृदय कितना पवित्र और स्नेहशील होता है अपनी सन्तान के लिये! वह तो बेचारी विवश थी अपने इन छः लड़कों के दुर्व्यवहार के कारण! मां तो कभी भी नहीं चाहती थी कि उसके सबसे छोटे वाले लड़के को सारे घर-भर की झूठन मिले; और बाकी सभी मौज और आनन्द से रहें! लेकिन वह क्या करती?

उसने जो सुना कि बच्चे को सिर-दर्द बड़े जोरों का हो रहा है तो उसने दुलार करते हुए अपनी गोद में सुला दिया और लगी उसका सिर थपथपाने।

अब तक रसोई बन चुकी थी। सभी घर वाले जीमने बाकी थे। छोटे वाले लड़के ने मां से कहा—मां मुझे बड़े जोरों की भूख लग रही है। मां ने उत्तर देते हुए कहा—बेटा तुम्हारे भाई अभी आये नहीं हैं। उन्हें आ लेने दो, फिर तुम भी भोजन कर लेना। वे सब किसी जरूरी कार्य-वश बाहर गये हुए हैं; अभी आने को ही हैं।

लड़का समझ गया—निश्चय ही दाल में कुछ काला है। वह जान-बूझकर नींद का बहाना बनाये आधी आँखें बन्द एवं आधी खुली वैसे ही सोरहा।

उसने देखा—उसके पिता भोजन करने आये हैं। उसकी भावज ने उनके भूठन को इकट्ठा कर लिया। इस प्रकार उसका पहला, दूसरा, तीसरा और क्रमशः छठा भाई भी भोजन करने आया। सभी लोगों की भूठन एक बर्तन में उसकी भाभी ने इकट्ठी करली। उन लोगों के भोजनोपरान्त तब उसकी मां ने उस इकट्ठी की हुई भूठन का चूरमा बनाया, चूरमा बनाकर थाली में परोसकर उसने अपने इस छोटे वाले लड़के को उठाने के लिये आवाज लगाई।

सेठ का लड़का यह सब बातें आँखें बन्द किये देख रहा था। जैसे ही उसकी मां ने उसे भोजन करने के लिये दो-तीन बार आवाज लगाई वह उठ बैठा। उसने कहा—मां, मुझे भूख नहीं है। मैं आज भोजन नहीं करूँगा। मां ने कहा—बेटा, भूख तो लगी ही होगी। थोड़ा-बहुत जितनी इच्छा हो, खालो। लड़के ने कहा—मैं बहुत दिनों तक भूठन खा चुका, मां! अब तो मैं कमाकर लाऊँगा तभी इस घर में भोजन करूँगा।

उसकी मां ने कहा—बेटा, ठीक है तुम्हारी यदि ऐसी ही इच्छा है तो भले ही कमाने के लिये चले जाना। लेकिन इस समय कहाँ जा रहे हो रात्रि में! कल. जाना चाहो तो भले ही चले जाना।

लड़के ने तो यह सब अपनी आँखों देखा था। वह अपमान की ज्वाला से जल रहा था। उसने कहा, मां, मैं तो इसी समय घर छोड़कर कमाने के लिये विदेश को जा रहा हूँ, तुम जरा पीछे से मेरी पत्नी का ध्यान रखना। इसे यहीं घर में ही बिठाये रखना, कहीं बाहर मत जाने देना। उसकी मां ने वैसे ही, हाँमी भरली।

सेठ का यह छोटे वाला लड़का चलते-चलते एक नगर में पहुँचा। स्वभाव और विचारों से शुद्ध होने के कारण उसे फौरन ही एक सेठ के यहाँ नौकरी मिल गई।

इस सेठ के यहाँ इस साहूकार के लड़के के आने पर व्यापार में बड़ा ही मुनाफा रहा उसने खुश होकर कुछ रुपया-पैसा इसे भी दे दिया इस प्रकार यह साहूकार का छोटे वाला लड़का अपने दुःख के दिन यहाँ व्यतीत करने लगा। इसके पास काफी धन-दौलत कुछ ही वर्षों में जमा हो गयी। यह एक अच्छा-खासा शहर का धनवान व्यक्ति बन गया।

छोटे वाले लड़के की स्त्री के साथ घर में सभी बुरा व्यवहार किया करते। उसे रोज जंगल से लकड़ी काटकर लाने को जाना पड़ता। और जैसे ही वह जंगल में लकड़ियों का गठ्ठर लिए घर को लौटती, उसे खाने को दिया जाता सूखा ज्वार का रोटा।

उसी जंगल में एक मन्दिर था शान्तिमाता का। एक रोज जब वहां मारे-दुःखों के अत्यन्त विकल हो गई तो गई उस मन्दिर में शान्तिमाता की शरण में। वहां बैठकर वह फूट-फूटकर दुःख में रोने लगी।

माता शान्ति देवी ने जो यह विलाप सुना तो उन्होंने एक बुढ़िया का रूप धारण किया। बुढ़िया बनकर इस स्त्री के पास आई और कहने लगी—बच्ची, इस घनघोर जंगल में तुम इस प्रकार फूट-फूटकर क्यों रो रही हो। साहूकार की स्त्री ने अपनी सारी दुःख की कथा कहते हुए कहा—अब मेरी जेठानियां मुझे बड़ा ही कष्ट दे रही हैं। वे मुझे सिर्फ एक सूखा ज्वार का रोटा

छोटा-सा देती हैं खाने के लिये मैं तो भूखों मर रही हूं। इतना ही नहीं वे मुझे नाना प्रकार के ताने भी देती हैं।

बुढ़िया ने कहा— बेटी ! आज से तुम मेरी धर्म की पुत्री हो-मैं तुम्हारी धर्म की मां हूं। तुम ऐसा करना—यहां हमेशा चली आना। तुम्हारे लिए खाने को रोज सवासेर चूरमा और पीने को पानी मैं यहां रख दिया करूँगी। तुम अपना पेट इसी से भर लिया करो। शान्ति माता जंगल में से लकड़ियां भी उसे काटकर ला देती।

इस प्रकार इस छोटे वाली साहूकार की स्त्री अपने दुःख के दिन काटती रही। इधर जेठानियों ने देखा—उनकी यह देव-रानी तो दिन प्रति-दिन बड़ी सुन्दर निखरती जारही है, तो उन्हें जलन होने लगी। 'राँड' पति की अनुपस्थिति में भी इस प्रकार मस्तानी बनी जारही है—बड़ी प्रसन्न रहती है। यदि पति के आगमन के समाचार मिल गये तो फिर इसकी खुशी का ठिकाना ही क्या होगा।

आज जब वह जंगल में लकड़ियां काटने गई तो उसने शान्ति माता से निवेदन किया—मां मेरी जेठानियां कह रही हैं, पति यहां नहीं है फिर भी यह दशा है। यदि उसके आगमन के समाचार मिल गए तो फिर इसकी खुशी का क्या ठिकाना रहेगा। शान्ति माता ने कहा—बेटी, तुम लेशमात्र भी इस बात की चिन्ता मत करना। उनके आने के समाचार भी शीघ्र आ जावेंगे।

कुछ ही दिनोपरांत उसके पति के आगमन का समाचार आया। अब तो उसे खुशी होनी स्वाभाविक ही थी। पति का

पत्र लिये वह प्रसन्नचित्त पड़ौसिन के पास गई और उसे वह पत्र दिखाया। जेठानियों को जब यह खबर लगी, तो जल-भुनकर खाक होगईं। आगमन का पत्र आया है, इसमें इतराती फिर रही है! यदि रुपये आगये फिर तो कहना ही क्या है इसका?

आज भी, जब वह जंगल में लकड़ी काटने गई तो माता से सब निवेदन करते हुए कहा—अब मुझे ताना देती हुई जेठानियाँ कह रही हैं—'खर्ची आजाय तो राँड का क्या कहना है!' मां ने कहा—बेटी, कोई चिन्ता नहीं; खर्ची भी उनकी आ जायगी। और थोड़े ही दिनों में उसके नाम रुपये आगये उसके पति की ओर से।

अब तो उसका प्रसन्न होना स्वाभाविक ही था। रुपये लेकर वह फिर पड़ौसिन के पास गई और उसे अपने सारे सुखद समाचार कहे।

इन समाचारों की खबर जब जेठानियों को लगी, तो बहुत जलीं। राँड की खर्ची आई है तो यह दशा है और यदि इस का खसम आगया तो फिर यह तो पृथ्वी पर पैर भी न रखेगी। इस प्रकार उन्होंने कई ताने दिये।

आज भी जब वह लड़की जंगल में लकड़ी काटने गई तो उसने सारी बातें माता से कहीं। मां ने कहा—बेटी, तुम कोई चिन्ता मत करना। इन जेठानियों से तुम्हें कुछ भी नहीं कहना है। अभी कुछ दिनों तक और शान्तिपूर्वक रहो—तुम्हारा पति भी शीघ्र आजायगा।

और शान्ति माता की कृपा से सेठ का वह लड़का सात-आठ दिनों बाद उस नगर से रवाना होकर अपने घर को चल पड़ा।

इधर वह सेठ का लड़का जिस समय इस जंगल में से होकर चल रहा था, यह लड़की वहीं लकड़ियां काट रही थी। उसी समय एकाएक बड़े जोरों का तूफान और आंधी आगई और फिर वर्षा हो चली। ऐसे समय में कहीं अन्य ठहरने का स्थान न देखकर साहूकार का लड़का शान्ति माता के मन्दिर में आ घुसा।

अभी उसने मन्दिर में पैर रखा ही था कि मन्दिर की सभी बत्तियां स्वयं जल उठीं। शान्ति माता की कृपा से वहां मन्दिर में एक आसन भी बिछ गया। साहूकार के लड़के की जो उधर नजर गई तो उसने अपनी पत्नी को वहां घूँघट निकाले देखा।

उसने विस्मय में चिल्लाकर कहा—अरे, तुम यहां कैसे! उसकी पत्नी ने इस पर अपनी सारी आपबीती कहानी कह सुनाई। मैं तो माता की कृपा से जीवित भी बच रही, अन्यथा कभी की मर गई होती। इस समय मैं तो जंगल में लकड़ियां काटने के लिये आई हुई हूँ।

सेठ का लड़का यह सब सुनकर बड़ा ही दुखी हुआ। उसने कहा—मैं तो घर की ओर प्रस्थान करता हूं, तुम जरा ठहरकर पीछे से घर में पहुंचना। इतना कहकर वह लाखों की सम्पत्ति और अनेक प्रकार की अमूल्य वस्तुएँ लिए अपने घर को चल पड़ा।

घर में पहुँचते ही, धन-दौलत को देखकर उसका बड़ा सम्मान हुआ। उसने इधर-उधर देखकर मां से कहा—

मां, घर का एक व्यक्ति नजर नहीं आरहा है, कहीं गया हुआ है क्या ?

यह सुनकर मां ने कहा—गई होगी रांड कहीं इधर-उधर धक्के खाने को। तुम्हारे जाने पर वह तो बिल्कुल बेकार होगई है। चलो छोड़ो उसकी चिन्ता! तुम्हारी शादी कहीं अन्य कर देंगे। लेकिन सेठ के लड़के ने उत्तर दिया—नहीं मां, तुम सच-सच बताओ, वह कहां गई है ? मैंने तुम्हें जाते समय कहा था न, उसे घर से बाहर निकलने ही मत देना। मां ने कहा—बेटा, वह बड़ी ही अपजोरी है—भला वह किसी की मानने वाली है! वह तो किसी के भी काबू में आने वाली नहीं है।

इतने ही में साहूकार के पुत्र की वधू सिर पर लकड़ियों का बड़ा-सा गठ्ठा लिये घर के आंगन में आ उपस्थित हुई। यह देखकर लड़का जल-भुनकर राख होगया। उसने माँ से कहा—तुम तो कुछ और ही कह रही थीं—और यह आरही है जंगल में से लकड़ियाँ लेकर! वह उसी समय घर से निकल पड़ा और अपनी पत्नी के लिए परिवार के लोगों से अलग रहने लगा।

इतना सब कुछ होने पर भी साहूकार की पुत्रवधू हमेशा शांति माता के दर्शन करने जंगल में उस मन्दिर में नियमित रूप से जाया करती।

एक दिन उसकी जेठानियों ने उसे जो देखा! तो फिर व्यंग कसा, इतराती फिरती है पति के आने पर। और यदि पुत्र होगया तो न मालूम आकाश के कौनसे तारे तोड़ लेगी।

आज जैसे ही वह शान्तिमाता के दर्शन करने जंगल में गई तो उसने कहा—जेठानियां अभी तक भी ताने देती हैं, कहती हैं एक पुत्र यदि उत्पन्न होगया तो फिर इसका क्या कहना। माता ने कहा बेटी, कोई चिन्ता मत करो, तुम्हें एक पुत्र भी होगा अब ठीक नवें महीने के बाद एक पुत्र इस छोटे वाले लड़के के हुआ। अब तो वे बड़े ही आनन्द से रहने लगे।

जब इस प्रकार बहुत से दिन सुखमय व्यतीत हो चले तो, लड़की ने ही अपनी माता शान्तिदेवी से निवेदन किया—माता, मैं तुम्हें प्रसाद चढ़ाना चाहती हूं। शान्ति माता ने उत्तर में कहा, नहीं बेटी ! मेरा प्रसाद करना आसान काम नहीं है। मेरे प्रसाद में तुमने यदि खटाई आदि खाली तो ठीक नहीं रहेगा। मैं फिर रुष्ट हो जाया करती हूँ ऐसे व्यवहार से। सेठ के इस छोटे वाले लड़के की वधू ने कहा—माँ, मैं आपकी बताई विधि से ही करूँगी। ऐसा शान्ति माता से कहकर वह अपने घर को आई।

उसने आकर अपने पति से कहा। दोनों ही ने मिलकर शान्तिदेवी का प्रसाद बड़े मन से तैयार किया। शान्तिमाता का यह प्रसाद साहूकार के लड़के ने अपने घर वालों को भी भेजा।

साहूकार के लड़के की भौजाइयों ने प्रसाद के साथ दही आदि खटाई खाली। इसे देखकर शान्ति माता साहूकार के इस छोटे वाले पुत्र पर रुष्ट हो गयीं।

इधर जैसे ही शान्ति माता रुष्ट हुईं, तो राजा ने दो दूत उसके पास भिजवाये। उन्होंने आते ही कहा—चलो राजा साहब के पास, तुम्हें वे बुला रहे हैं। उनका कहना है कि तुम इन दो

ही महीनों में इतना अपार धन कैसे और कहाँ से कमाकर लाये हो ! उन्हें तुम्हारे इस कार्य पर सन्देह है। राजा के दूत ने उसे बन्दी बनाये राजा के सामने लाकर हाजिर किया।

सेठ के लड़के के लाख बात कहने पर भी कि मैं कमाकर लाया हूँ, मैंने किसी का भी डाका आदि नहीं मारा है; राजा ने एक भी नहीं सुनी। उसका तमाम धन राजा के खजाने में रखा गया और उसे जेल में भेज दिया गया।

अब तो सेठ की वधू शान्तिमाता के पास भागी-भागी गई; जाकर निवेदन किया—माता, यह क्या बात है। शान्तिमाता ने कहा—बेटी, मैंने तुम्हें पहले ही कह दिया था, मेरा प्रसाद बनाना कोई सरल काम नहीं है। तुमने माना नहीं। तुम्हारी जेठानियों ने दही आदि खटाई खाली, और यह उसी का प्रकोप है। तब बेटी ने क्षमा मांगी—मां, मैं ऐसा अब कभी भी भविष्य में नहीं करूँगी।

शान्तिमाता ने राजा को स्वप्न में जाकर कहा—साहूकार के पुत्र को क्यों व्यर्थ में पकड़ रखा है और उसका धन-धान लेरखा है। उसका सारा धन लौटा दो और साथ ही उतना अपनी ओर से धन और उसे दे दो। नहीं तो मैं तुम्हारा सारा राज्य चौपट कर दूँगी। राजा ने सुबह होते ही साहूकार को कारावास से मुक्त किया, उसका धन लौटाते हुए उसमें उतना ही धन अपनी ओर से मिला दिया। और उससे क्षमायाचना करते हुए घर को विदा किया।

साहूकार के पुत्र ने उसी दिन घर पहुँचते ही शान्तिमाता का प्रसाद बड़े ही ध्यान से बनाया—खटाई आदि का पूर्ण ध्यान रखा। शान्तिमाता साहूकार के पुत्र से बड़ी ही प्रसन्न हुई।

एक दिन शान्तिमाता बुढ़िया का रूप बनाकर हाथ में बच्चे के पहिनने के कपड़े लेकर शहर को चली। सोचा, चलो नवजात-शिशु को देख आऊँ। उस समय बच्चे को उसका दादा घर के बाहर बैठा खेल खिला रहा था। उसने जो देखा एक बुढ़या को तो अन्दर चला गया—यह सोच कर कि कहीं बच्चे को नजर न लग जाय। अभी वह भीतर पहुँचा ही था कि बच्चे का पेट दर्द करने लगा। वह मारे दर्द के मरने जैसा हो गया।

सेठ की पुत्र-बधू को जब यह पता लगा—एक बुढ़िया को देखकर मेरे ससुर भीतर आ गये थे, तो उसे ख्याल आया—हो न हो यह मेरी शान्तिमाता ही होगी। वह दौड़ी-दौड़ी बाहर आई; देखा तो मां हाथ में बच्चे के कपड़े लिए खड़ी है। उसने तुरन्त बच्चे को मां के श्री चरणों में रखा। बच्चा पूर्ववत प्रसन्न हो गया।

मां ने बच्चे के कपड़े देते हुए कहा—आज से आगे के लिये तुम्हें जगल में प्रतिदिन आने की आवश्यकता नहीं। यहीं घर पर बैठे-बैठे मेरा ध्यान कर लेना; मुझे यह तुम्हारी सेवा स्वीकार है। यह कहकर शान्तिमाता अन्तर्द्धान हो गई। उसी दिन से साहूकार का लड़का और उसकी पत्नी बड़े ही आनन्द से रहने लगे।

हे शान्तिमाता ! उसे जैसा सुख दिया, सभी लोगों को वैसा सुख मिले। उसे जिस प्रकार झूठन खानी पड़ी, वैसी किसी को भी खाने को नहीं मिले।

शनिश्चरवार की कथा

एक ब्राह्मण था—वह हमेशा राज-दरबार में पूजा-पाठ करने जाया करता था। एक दिन जैसे ही वह ब्राह्मण राजदरबार से अपने घर को लौट रहा था—उसे राह में शनिदेव मिल गए। शनि-भगवान् ने कहा—ब्राह्मण, तुम्हें अब मेरी दशा लगने वाली है। और सिर्फ सात वर्ष तक ही लगी रहेगी।

ब्राह्मण ने जब यह सुना तो वह बड़ा ही घबराया। उसने कहा—भगवन्! मैं तो एक माँगकर खाने वाला ब्राह्मण हूं। आपकी दशा का कोप मैं तो सात वर्षों तक कदापि नहीं सहन कर सकूँगा।

शनिदेव ने कहा—अच्छा तो मैं तुम्हें पाँच ही वर्षों में लग-कर छोड़ दूंगा। ब्राह्मण ने कहा—नहीं महाराज, मैं तो अति ही गरीब और दुर्बल हूं। आपका यह तप-तेज मुझसे पांच वर्षों तक भी नहीं सहन हो सकेगा।

शनिदेव ने कहा—अच्छा तो मैं तुम्हें ढाई वर्ष में ही लग-कर छोड़ दूंगा। ब्राह्मण ने कहा—भगवन्! क्षमा करें, मैं तो इतना भी सहन करने में असमर्थ हूं। मैं तो बहुत ही गरीब हूँ—आप इस गरीब पर तो दया ही रखें।

शनिदेव ने कहा—तो सुनो, मैं तुम्हें ढाई महीनों में ही लग कर छोड़ दूंगा। अब तो ठीक है। लेकिन ब्राह्मण तो क्षमा मांगता ही रहा। उसने कहा—कृपानिधान, मुझे तो क्षमा ही करें। मैं गरीब मारा जाऊँगा। ढाई महीनों में तो मेरा परिवार और घरबार सभी नष्ट हो जायगा।

अन्त में शनिदेव ने कहा—तो देखो, तुमने मुझे सात वर्षों के लिये, पांच वर्षों के लिये, ढाई वर्षों के लिए और ढाई दिन—इन सबके लिये इन्कार कर दिया। लेकिन मैं तुम्हें सवा-प्रहर तो लगूँगा ही। अब तो ब्राह्मण लाचार था। उसने कहा—भगवन्, मैं आपसे अधिक तो कुछ कह नहीं सकता। इतना ही निवेदन है कि मैं इतने समय भी में नष्टप्राय हो जाऊँगा। लेकिन, जब आपकी ऐसी इच्छा ही है—सवा पहर तक आपकी मुझे दशा भोगनी ही होगी, तो जैसी आपकी इच्छा।

ब्राह्मण बड़े दुखी मन के साथ अपने घर को आया। उसने आकर अपनी पत्नी से कहा—देखो, अभी सवा पहर के लिये अपन लोगों को भगवान् शनिदेव की दशा लगी हुई है। अतः मैं तो शहर के बाहर वाले पीपल के नीचे जाकर बैठ रहता हूं। मैं वहाँ इतने समय तक भगवान् शनि के नाम की माला फेरता रहूंगा; पीछे से घर का तुम ध्यान रखना। घर में नाना-प्रकार के उपद्रव और उत्पात होंगे। लेकिन तुम बोलना-बोलाना कुछ भी मत। चुपचाप यह सब देखती रहना।

अभी ब्राह्मण अपने घर से निकलकर पीपल की ओर प्रस्थान कर ही पाया था कि पीछे से उसके घर में चोर और डाकू घुस पड़े। घर में घुसकर वे लोग मनमानी करने लगे।

इधर जैसे ही वह ब्राह्मण पीपल के नीचे बैठे माला जप रहा था—वहां से एक मालिन अपने सिर पर मतीरों का बड़ा-सा ओड़ा लिए शहर को निकली। उसने देखा—एक ब्राह्मण देवता पीपल के नीचे बैठे जप कर रहे हैं। उसने अपने ओड़े में से दो अच्छे बड़े से मतीरे ब्राह्मण देवता को भेंट किए। सोचा, ब्राह्मण देवता भूखे हैं, पूजा के उपरान्त इन्हें आहार कर लेंगे।

ब्राह्मण देवता को तो शनिदेव की दशा लगी हुई थी, फिर भला ब्राह्मण उसे कैसे खा सकता था। उधर तो मालिन उन्हें रखकर शहर को चली और उधर वे मतीरे एक कटे हुए मनुष्य के सिर बन गये।

उसी दिन वहां के राजा के राजकुमार शिकार करने को गए हुए थे। राजकुमार जब काफी देर तक लौटकर नहीं आये तो राजा को चिन्ता होनी स्वाभाविक ही थी। उसने अपने दूत चारों ओर दौड़ाये राजकुमार की खोज-खबर में।

दूतों ने राजकुमारों की बहुत ही खोज–पड़ताल की. लेकिन उन्हें कोई पग–पता नहीं मिल सका। अतः लाचार होकर जैसे ही दूत वापिस शहर को लौट रहे थे, तो उन्होंने एक पीपल के नीचे एक ब्राह्मण को तपस्या करते देखा। पास ही उन्होंने देखा—दोनों राजकुमारों के सिर कटे पड़े हैं।

राज–दूतों ने भागकर राजा साहब को खबर दी— एक ब्राह्मण शहर के बाहर पीपल के नीचे आँखें बन्द किए माला फेर रहा है। और उसके गोड़ों के नीचे हमारे दोनों राजकुमारों के सिर कटे पड़े हैं। अब जैसा आप हुकम दें।

'राजा तो कानां रा काचा ही हुवै है'—उसने फौरन हुकम दिया—इस ब्राह्मण को फांसी लगा दो।

आज्ञा पाकर राजा के ये दोनों दूत ब्राह्मण के पास गए और कहने लगे—तुम्हें राजा साहब ने फांसी का हुकम दिया है।

इन दोनों दूतों में से एक दूत था बड़ा भला और सज्जन स्वभाव का आदमी। और दूसरा जरा बुरे स्वभाव का था। ब्राह्मण ने जब यह बात सुनी तो उसने कहा—जरा मेरी यह माला ममाप्त होने दें, फिर भले ही आप मुझे मार सकते हैं। उस बुरे दूत ने कहा—अच्छा! एक तो राजकुमारों की हत्या करना और फिर ऊपर से इस प्रकार साधुता का स्वांग दिखाना। शर्म नहीं आती है इस प्रकार अब माला फेरते हुए।

दूसरा दूत जो बड़ा ही सज्जन था—उसने कहा—मत छेड़ो बेचारे को! जरा माला पूरी कर भी लेने दो। इसमें अब तुम्हारा क्या बनना-बिगड़ना है।

जैसे ही ब्राह्मण देवता को शनिदेव की दशा उतरी—वे दोनों राजकुमार तत्क्षण अपने राजमहलों में आन पहुँचे। राजा साहब ने फौरन एक दूसरा घुड़सवार दूत भेजकर इन दोनों दूतों से कहलवाया—यदि इस ब्राह्मण को फांसी लगाकर मार नहीं दिया हो, तो फौरन ही उसे मुक्त कर देना, राजकुमार दोनों ही सकुशल घर लौट आये हैं।' साथ ही राजा साहब ने कहलवाया—उस ब्राह्मण देवता को मेरे पास इसी समय उपस्थित करो।

अभी जैसे ही राजा साहब के दूत ब्राह्मण को राजमहल चलने की प्रार्थना कर रहे थे—उन्होंने देखा कि वे ही मरे हुए लोगों के सिर उसी क्षण दो बड़े अच्छे मतीरे बन गये हैं।

दूतों ने ब्राह्मण को लेजाकर राजा के दरबार में हाजिर किया और कहा—राजन! वे दो सिर जो थे, दो बड़े-से सुन्दर मतीरों में परिवर्तित होगये।

राजा साहब ने जब यह सुना, तो बड़े ही चकित हुए। उन्होंने कहा—ब्राह्मण देवता, क्या आप जन्त्र,मन्त्र, तन्त्र जानते हैं। यह क्या माजरा है।

ब्राह्मण ने आदि से लेकर अन्त तक अपनी रामकहानी कहते हुए राजा साहब से कहा—राजन् मुझे सवा पहर के लिये शनिदेव की दशा लगी थी। यह सब भगवान् शनि की कृपा का चमत्कार था—जंत्र, मंत्र, तंत्र जैसी कोई बात नहीं है। राजा ने क्षमा-याचना करते हुए ब्राह्मण को बहुत-सा धन-दौलत देकर, उससे क्षमा माँगते हुए घर को रवाना किया।

हे शनि देवता—जिस प्रकार उस ब्राह्मण को दुःख दिए, वैसे दुःख किसी को भी मत देना।

रविवार की कथा

बड़े ही प्राचीन समय की बात है—लाखों वर्ष बीत गये होंगे, एक दिन भगवान् सूर्य और उनकी पत्नी रांणादे आपस में बातें कर रहे थे। रांणादे जी ने कहा—'भगवन्! आप कभी दान-पुण्य भी किया करते हैं?'

इस पर भगवान् सूर्यदेव ने उत्तर देते हुए कहा—रांणादे जी, मैं आवश्यकतानुसार सभी को देता हूँ। हाथी को एक मन खाने को और चींटी को एक कन मैं देता ही रहता हूँ।

समय पाकर एक दिन रांणादे जी को भगवान् श्री सूर्यदेव की परीक्षा लेने की सूझी। उन्होंने एक चींटी को एक डिबिया में बन्द कर लिया। इस बात को उन्होंने भगवान से छिपाकर रखा। उन्होंने सोचा—भगवान कहा करते हैं, 'हाथी को मन और चींटी को कन', तो देखें आज इस चींटी को कन कैसे मिल सकता है?

उन्हें भला क्या पता था—भगवान किसी को भी भूखा नहीं रखते। भगवान तो सभी प्राणियों को खाने के लिये दिया करते हैं। उसी प्रकार एक चावल का दाना उनकी बन्द डिबिया में अपने आप आकर गिरा।

जब संझा में भगवान सूर्यदेव घर को लौटे तो श्रीरांणादेजी ने कहा—महाराज, आप कहा करते हैं कि मैं सब लोगों को उनके खाने के अनुसार दे दिया करता हूँ। लेकिन मैं यह नहीं मान सकती! मैंने आज चींटी को डिबिया में बन्द कर रखा है। भला वह वहाँ भूखों नहीं मर गई होगी!

श्री सूर्य भगवान यह सुनकर बड़े ही हँसे। उन्होंने हँसते-हँसते कहा—रांणादे जी थे भोळा हो' आपको अभी तक मेरे कहने पर विश्वास नहीं जम सका! ठीक है—आप जरा अपने पास वाली उस डिबिया को खोलकर तो देखें।

रांणादे जी ने जो डिबिया खोली तो उन्हें यह देखकर बड़ा ही ताज्जुब हुआ—वहाँ डिबिया में एक चावल रखा हुआ है और चींटी उसे बड़े ही चाव से मुँह में दबाये बैठी है। वे बड़ी ही लज्जित हो चलीं और भविष्य में उन्होंने कभी भी सूर्यदेव जी की परीक्षा लेने का साहस नहीं किया।

हे सूर्य देवता! जैसा श्री रांणादे जी को लज्जित किया, वैसा किसे भी मत करना! जिस प्रकार चींटी को भूखों नहीं मरने दिया—वैसा किसी को भी भूखों मत मरने देना।



सूरज कै डोरा की कहाणी

एक मा ही, एक बेटी ही। दोनूं मा-बेटी दीतवार के दिन सूरज भगवान को व्रत करया करती। व्रत कै दिन आपकै ताईं दो रोटी करके घर देती। एक एक रोटी दोंनू जणी खा लेती। एक दिन इसो संजोग हुयोक् मा तो कोई काम सैं बारणैं चली गई अ'र बेटी घर में रही जिकी दो रोटी पोकर मेल दी। थोड़ी-सी बार पाछै एक भूखो-तिसायो साधु आ गयो जिकै रोटी मांगी। जद बा बेटी आपकी पॉती की रोटो मां सूं टुकड़ो तोड़कर साधु नै दे दियो। अ'र पाणी को ऊँको तूम्बो भर दियो। साधु रोटी को टुकड़ो खाकर, पाणी पीकर, असीस देकर चल्यो गयो। बेटी थी, जिकी आपकी मां की बाट देखबो करी, जद दोफार ढलगा, जद उण बेटी देखीक् मां को के बेरो कद आसी आवैगी सो सूरज नाराण नै अरघ देकर आपकी पॉती की रोटी खाली। थोड़ी सी देर पाछै ऊँकी मां बी आगयी आवताँ परॉत सूरज भगवान नै अरघ देकर उण बेटी सैं आपकी पॉती की रोटी माँगी। बेटी बोली—मां, एक साधु भूखो तिसायो आपणै घरां आकर रोटी मांगी जद् मैं तो तेरली रोटी में सैं टुकड़ो तोड़कर साधु नैं दे दियो, बची हुई आधी रोटी है जिकी या तूं खाले। या कहकर बेटी भीतर सैं आधी रोटी ल्याकर आपकी मां कै मूंडा आगै धर दी। पण मां आपकी साबती रोटी नै आधी तोड़ी हुई देखकर बेटी पर लाल ताती हुई अ'र बा आधी रोटी ही, जिकी आप कोनी खाई, गाय नै खुवा दी।

पाछै बेटी नै बोली—"धी ! धी !! रोटो दे, रोटै मैंली कोरदे, बोई दे पण सागी दे।" बेटी हाथ-जोड़कर भोत ही लाचारी दिखाई पण बा मानी कोयनी. अयॉडं करती रही।

यूँ कहवा-सुणी में रात होगी। जणा मावी सोगी अर बेटी नैं बी नींद आयगी। दिन उगताँई मा, बेटी जागी। मा, फेरूँ बाई रटत लगादी—"न्धी-न्धी, रोटी दे, रोटा मैंली कोर दे, बोई दे पण सागे दे।" आपकी माने बावली की तरह अयाँई करती देखकर बेटी मनमें भोत दुखी हुई। पाछै हारकर एक दिन बा बेटी घर सैं निकलकर बन में चली गई। बावनी उजाड़ में एक घेर-घुमेर बड़ को पेड़ थो, जैं कै ऊपर चढ़कर बैठगी। एक पाणी को कोरो मॉगो आपकै कनै धर लियो। सूरज भगवान को ध्यान करवा लागगी। अयाँ बैठ्याँ आठ पहर बीतगा। दूसरै दिन राजा को कँवर शिकार कै लैर घोड़ो दौड़ातो हुयो उठे आ पहुंच्यो। ऊँके साथ का आदमी गैलने रहगा। तावड़ै की लाय बरस रही थी। भूख-प्यास सैं पिराण छटपटा रह्या था। भूख नैं तो आदमी सहलेवी, तिसकोनी सही जाय। पण बावनी उजाड़ में रोटी-पाणी को के जोगाड़। उठे घेर-घुमेर बड़ की ठंडी-ठंडी छाया देखकर राजा कै कँवर आपका घोड़ा नै बाँद दियो अर आप धरती नै भार कर लोट लगावण लागगो। थोडी सी देर में ई राजा कै कँवर नै नींद आयगी। इतणा में ई बड़ के ऊपर सैं ठंडा पानी का छांटा राजा कै कँवर की छाती पर आयकर पड्या। राजा कै कँवर की आँख खुलगी। राजा कै कँवर सोची अैं उजाड़ में इसो ठंडो पाणी कठै सैं आयो ? हो न हो ये पाणी का छांटा तो बड़ में सैं आया है। राजा को कँवर पायचा टांग-कर बड़ पर चढगो। आगै देखे तो सोना की सी देवली अस्तरी भेली हुई बैठी है। राजा कै कँवर जाताँ पराँत पाणी मांग्यो। उण तुरंत पाणी प्या दियो। ठंडो पाणी पीकर राजा को कँवर तिरपत होगो, जी में जी आगो। राजा को कँवर बोल्यो—"आज तू मन्नैजीव दान दियो है सो तू कूण है ? कोई देवी है क दानवी ?"

जद बा बोली—"मैं तो एक महाजन की बेटी हूँ। कुँवारी हूँ। मेरी मा सैं रूसकर चली आई, इब पाछी घराँ जाण की मेरी मनस्या कोन्याँ।" जद राजा कै कँवर कही "मेरे साथ चल। मेरी राणी बणकर रह" जद बा साथ २ बड़ सैं नीचे उतर आई। इतणा में राजा कै कँवर कै साथ का आदमी बी पीछै सैं आ पहुंच्या। राजा के कँवर आपकी नगरी में आयकर ऊसै ब्याह कर लियो। महल में राणी बणकर बा सुख सै रहै-दुख का दिन भूलगी। उठीनै ऊंकी मा दो एक तो आड़ोस-पाड़ोस में ढूंढती डोली, पण जद बा कोन्या मिली जणा दुख की मारी बावली होकर घर-गांव छोड़ दियो। गांवां-गांवां डोलण लागगी। दैव संजोग सैं एक दिन ऊंई नगरी में वा आयगी अर राजा के महल के नीचै बैठगी। जद महल कै मांय सै राणी की निजर आपकी मा कै ऊपर पड़ी तो ऊंनै तुरंत पिछाणली-देखी हो न हो या नो सागी मा है। सो आपकी बांदी नै भेजकर ऊपर आप कै कन्नै बुलाली। दोनूं मा-बेटी बाथ घालकर मिली। दोनुंवा की आंख्यां सं आंसू टपकण लागगा।

राणी आपकी मा नै आपबीती सारी बातां सुणाई। अर रोटी-पाणी की पूछी। जद ऊँकी मा नटगी कही—"मैं बेटी के घर को अन्न कोन्या खाऊँ। मा-बेटी की बातां-बातां में रात होकर राजा के आवण को बखत होयगो। जद राणी देखी जै राजा नै यो बेरो पट ज्यायगो कै या गरीबणी राणी की मा है तो इतणू आदर कोन्या रहेगो। जद आपकै महल कै बराबर दूसरो महल हो जै में आपकी मा ने बंद करदी अर कन्ने गीऊँ चणाँ की घूघरी मिलहवादी। पण राणी की मा रात नै कुछ बी खायो पीयो कोन्या सूरज भगवान को ध्यानई करबो करी। दिन उगतां कै साथ राणीऊं दूसरे महल का किवाड़ खोलकर

देखै तो मां की तो सोने की देवली हुई खड़ी है अर गीऊँचणाँ की घूघरियां की जगा हीरा-मोती जगमगाट करै है। राणी देखई रही थी इतणा में राजा जी बी उठेई आयकर खड्या हो गया अर राणी नै पूछी—"आज के देखो हो ?" जद राणी बोली—"महाराज मेरे गरीब पीहर सैं बीदडी आई है सो आप बी देखो।" राजा देखकर बडो अचरज करयो अर राणी नै बोल्यो—"थारो पीहर इसो है तो म्हानै बीं दिखाणू पड़ैगो।" जद राणी कही—महाराज ऐ बात को जबाव पाछै दूंगी। राणी का मन में यो डर बड़गो कै इब पीहर कठै सैं दिखाऊंगी ? पण ऊँका मनमें सरज भगवान को पूरो आकीदो थो। सूरज नाराण को व्रत करती अरघ देकर जीमती। राणी एक दिन या विचारी कै आज रात नै सूरज भगवान कै तो बोल कर कह देवैगा, नईं तो तड़कै मेरो शरीर त्याग दूंगी। जद ऊँईं रात नै सूरज भगवान सुपना में दरसाव देकर कही कै साहूकार की तू सोच मना करीजे। अठै सैं तीन कोस पर एक पीपल है सो उठै तड़कै राजा कै सारै साथने लेकर आज्याये, नगर वस्योड़ो पावैगो। पण दिन छिपण सैं पहलाँ-पहलाँ उठे सै बिदा होकर पाछा चल्या आयो।

यो दरसाव होने पर राणी राजा नै बोली "तड़कै म्हानै मेरो पीहर दिखाकर ल्याऊँगी" जद राजा भोत राजी हुयो। आपकी परगै नै त्यारी करणै को हुकम दे दियो। दिन उगताँ के साथ राजा राणी आप को लाव लश्कर लेकर चाल पड़या।

तीन कोस पर पीपल को पेड़ थो उठे पूंचकर देखें तो एक भोत देखण जोग सरूप नगर बसरियो है। भोतसा लोग आगै अगुवाणी कै ताईं खड़्या बाट देख रह्या है। राणी राजा कै पहुँचताई घणा आदर मान कै साथ लै ज्याय कर डेरो दिवा दियो। लाड-चाव होण लागगा। साईं बधाई बँटवा लागगीं कोई कहै म्हारो जँवाई आयो, कोई कहै म्हारो भणेई आयो। गीत गवै है बाजा बाजै है दिनभर उयाँईं रमझोल मच्यो रह्यो। पाछै भोत सो धन देकर बिदा कर दिया। बिदा होती बखत राजा जाण बूझकर आपके पग की एक मोचड़ी उठे छोड़ दी अर जद आपकी नगरी के नजीक पाछा पूंचगा जणा राजा राणी नै बोल्यो—"मैं तो मेरे एक पग की जूती भूल्यायो सो पाछो जाकर ल्याऊँगो।" जद राणी कही—"महाराज सासरा सैं घणाईं धन-दौलत ल्याहो एक जूती को के बिचार करो हो ? पण राजा राणी की बात मानी कोन्या अर पाछो जूती ल्यावण कै मिस एकलोई चाल पड़्यो। उठे ज्यायकर देखै तो गांव को नाँव निसाणईं कोनी। न मिनख न मिनाख को जायो। पीपल की एक डाली कै राजा की जूती टग्योड़ी दीखी। जणा राजा कै मनमें बड़ो अचंभो हुयो। पाछो बेगो २ आयकर सीदो राणी कै महल में गयो अर कटारो काढकर राणी की छाती पर बैठगो अर बोल्यो—'यो के भेद है सो साचो बतादे नहीं तो तन्ने मारूंगो अर मैं भी मरूँगो।" जद राणी भोत कहा-सुणी करी पण राजा हठ पकड़ लियो-कहो जो बात है सो बतायाँ मरैगो।

जद राणी हारकर सारी बात कहदी अर बोली महाराजा या मेरे ऊपर सूरज भगवान किरपा करी सूरज नाराण को व्रत करकै डोरो लेण सैं यो फल मिल्यो। जद राजा भोत राजी हुयो अर आपका नगर में ढिंढोरो पिटवा दियो कै सूरजनाराण को सगली जणी डोरो धारण करियो। हे सूरजनाराण माई बाप तावड़ै का धणी तूँ ऊँ राजा की राणी नै पीर बासो दिखायो जिसो सबने दिखाये। कहना नै, सुणता नै, हुंकारा का भरता नै। सूरजनाराण तेरो आसरो, भर्‌यो पीर भर्‌यो सासरो।

(पं० झाबरमल्ल जी शर्मा संपादित 'मरु-भारती' वर्ष ६ अङ्क ३ में प्रकाशित)

कार्तिकी वृत कथाएँ

(१) सूरज भगवान् की काणी

सूरज भगवान् हा जिको कीड़ी नै कण देवै अ'र हाथी ने मण देवै। अेक दिन व्यांकी धणियाणी राणादेजी कयो कै म्हाराज! आप जीमवानै मोड़ा आवो। जद सूरज भगवान् कयो कै म्हे सारी सृष्टी नै पूर करां जद आवां। जद राणादेजी पूछियो कै कीं केई नहीं भूलो? तो बोल्या कै नहीं, म्हे तो कींनेई नहीं भूलां।

अेक दिन राणादेजी अेक कीड़ी नै ले अ'र एक डब्बी में बंद करदी। जद सूरज भगवान् आया तो राणादेजी कयो कै म्हाराज! सबनै पूर दियो? सूरज भगवान् बोल्या—हाँ राणादेजी! सबनै पूर दियो। राणादेजी फेर पूछ्यो की नेई नहीं भूल्या? बैं कयो-कीं नेई नहीं भूल्या। अब राणादेजी! थे थाल पुरसो। जद राणादेजी बोल्या। कै म्हाराज! हाल म्हारो जिनावर भूखो बैठो है। भगवान् कयो कै आछो, राणादेजी! थांका जिनावर नै पैली पूरां पछै हे जीमां। जद राणादेजी कयो कै म्हाराज! ऊँ डब्बी में कीड़ी है जीनै आप ल्यावो। जद भगवान् कयो कै राणादेजी। थेई ल्यावो।

जद राणादेजी जा-अरं ऊँ डब्बी नै ल्याया। खोल अरं देखै तो डब्बी में बांकी टीकी को अेक चावल पड़्यो है अरं वा कीड़ी ऊँ चावल कै गोल-गोल चक्कर लगावै नै चुगै। जद सूरज भगवान् कयो कै देखो राणादेजी! कीड़ी नै कण अरं हाथी नै मण देवां, सारी सृष्टी नै पूर नै पछै म्हे जीमां। जद राणादेजी कयो कै म्हाराज आप साचा।

हे सूरज भगवान्! भूखा उठाणजे पर भूखा सुवाणजे मत।

—

(२) रामबाई और राजबाई की काणी

अेक हा रामबाई और अेक हा राजबाई। बै दोनूं जण्यां काती न्हावत्यां ही। रामबाई तो रामजी का नांव की काती न्हावता और राजबाई राजाजी कै नांव की। जद काती पूरी हुयी तो राजबाई राजाजी नै कैवायो कै मैं थां का नांव की काती न्हायी है। राजाजी आ सुण'र बढ़ा राजी हुया और अेक पेठा में रुपिया और मोथां भरकर राजबाई कै अठै पुगादी। राजबाई ऊँ पेठा देख्यो तो बड़ी गुस्सै हुयी कै देखो मैं तो महिना भर तक राजाजी का नांव की काती न्हायी और राजाजी बदला में दो टकां को पेठौ भेज्यो है। बा गुस्सा में छोर ऊंने एक मालण नै दो टकां में बेचपाई।

उठीनै रामबाई कयो कै मैं रामजी का नांव की काती न्याही हूँ जो कम सै कम पांच बामण तो जिमा दयूं। आ सोच'र बा मालण रै घरां गयी तो मालण कै कनै ऊही पेठो पड्यो हो। मालण बोली कै मैं ओ पेठो दो टकां में लियो है तूँ चावै तो चार टकां मे लेज्या।

रामबाई ऊं पेठा नै ले लियो। घरां जा'रर ऊंनै बनारयो तो ऊंमैं सूं रुपिया और मो'रा निकली। रामबाई बड़ा राजी हुआ और बोल्या कै मनै तो रामजी तूठ्या है। फेर सारी नगरी में नूंतो फेरा दियो कै सगला बामण रामबाई कै जीमण आइजो। सगला बामण रामबाई कै जीमबा गया और जीम जीम'र पाछा जावता 'रामबाई की जै' — 'रामबाई की जै' बोलता गया।

राजाजी तखत बिछायां बैठा हा। जद बै बामणों की 'रामबाई की जै' की धुन सुणी तो बोल्या कै भाई! राजबाई की जै बोलो, रामबाई की जै क्यूं ? तो सारा बामण बोल्या कै म्हे तो सारा जणा रामबाई के जीम'र आया हांजी मैं रामबाई की जै बोलां हां, राजबाई की जै क्यूं बोलां ?

राजाजी राजबाई नै बुला'र पूछियो कै म्हे थांने अेक पेठो भेज्यो हो बींको कांई कर्‌यो। तो वा साफ-साफ कै दियो कै मैं तो दो टकां में वेट दियो राजाजी बोल्या कै बी मैं म्हे रुपिया और मोरा भर अर पण थांके लिखी नहीं ही।

जद पछै राजाजी सारी नगरी मै डुंडी पिटादी कै कोई न्हावै तो रामजी का नांव की न्हायी जो और राजाजी का नांव की मती न्हायी जो।

---

(३) तिलक महाराज की काणी

एक बूढ़ी बामणी ही। ऊँकै एक बेटो हो। बो आपकी मां कनै सैं रोज दिनूंगा रोटी मांगतो। जद डोकरी कैती कै बेटा! तूं की नेम लेलै नेम पूरो कर्‌यां बिना रोटी नहीं खावणी। जद बो कयो मां कांई नेम लेऊं। जद डोकरी कयो कै बेटा! रोज तिलक म्हाराज का दरसण कर और पछै रोटी खाया कर।

अबै बो रोज दिनूंगा तिलक म्हाराज का दरसण कर अर रोटी खावतो। एक दिन ऊंनै तिलक म्हाराज का दरसण कोनी हुआ तो बो केयो मां आज तो तिलक म्हाराज का दरसण कोनी हुया और मनै तो जोर की भूख लाग री है। मां कयो बेटा! दरसण कर्‌यां बिगर रोटी नहीं खाणी चाहीजै।

जद बो दरसण करबां नै जांवतो-जांवतो जंगल में पूंच गयो। ऊठै ऊनै चार चोर दीख्या, जका चोरी का माल को बंटवारो कररिया हा। बां मांय से एक के तिलक लागरिया हो तिलक देखतां ही बो खुसी रो मार्‌यो चिल्लायो—दीखग्यो! दीखग्यो! दीखग्यो!

चोर समज्या कै ओ म्हांने देख लिया है जिण वास्ते बोले है। कठैई पकड़ा नहीं देवै। सो बोल्या अरे! चिल्ला तो मत, अठीनै आव। जद बो बां कनै गयो। जद चोरों चार की बजाय पाँच पाँती करी और एक पाँती ऊँनै दे'र बोल्या कै लै, थारी मां नै दे दीजै।

बो गाँठ लेजा'रे आपरी मां नै दे दी तो माँ कयो बेटा ओ कांई लायो। बेटा बोल्यो मनै तो ठीक कोनी, तिलक म्हाराज दी है, तू पछै देखबो करजै. मनै तो जोर की भूख लाग री है। पैली रोटी दे दै। मां-बेटा नै रोटी दे'र गाँठ खोली तो ऊँ मैं ऊँनै अन, धन, लख लक्ष्मी, च्यांरू पदार्थ मिल्या। अबै अंकै खूब धन-माल हूग्यो। जद मां केयो बेटा आदमी के कोई नेम जरूर लेणो।

हे तिलक म्हाराज! ऊँ छोरा ने तूठ्या जिसा सकल नै तूठज्यो, आधी ने पूरी करज्यो, पूरी ने परवाण चढ़ाइज्यो।

नाग पंचमी री कथा

एक साहूकार थो। ऊँकै[1] सात बेटा था अर[2] सात बेटाँ की भू[3] थी। एक दिन साँतू जणी खनेड़ा[4] में माँटी[5] ल्यावण[6] ने गई। उठे[7] कोई तो बोली मन्ने[8] लीणने[9] मेरो भाई आसी[10]। कोई बोली-मेरो भतीजो आसी। छोटणी थी जिको बोली मेरा तो पीर[11] में कोई बी ना, बमई में साँप बी कोनी, जिको मन्ने खाज्यावै। यूं बाताँ करती-करती आपकै घराँ आयगी।

एक दिन सातूँ ई घोर-जिठाणी[12] छांणा[13] ल्यावणनै गई जणा[14] एक खरोलिया[15] कै तळै[16] चांणचक[17] साँप निकल्यायो[18]। जणा वै छऊँ जणी साँप नै मारण लागी। जद सातवीं-छोटणी थी वा बोली, अँने[19] मारो मतना। मेरो तो भाई भतीजो योई है। या सुणकर उणा साँप नै छोड़ दियो मार्यो कोन्नी।

थोड़ा दिनां पाछै सगलियाँ[20] का भाई भतीजा आप आपकी भुवा-भाणा नै लीण[21] नै आया अर वो साँप बी आयो। आयकर वो बी बोल्यो कै म्हारी भाण[22] नै भेजो! जणा साहूकार का छोटणा[23] बेटा की भू नै बी ऊँकै साथ भेजरी। साँप आपकी पूँछड़ी पर बैठाकर ले ग्यो।

चालताँ-चालता आगै बमई[24] आई जद साँप ऊंमें[25] बड़बा[26] लाग्यो। जणा वा साहूकार कै बेटे की भू डरी अर बोली-भाई, तूँ धरती में कठै[27] बड़ै[28] है। साँप बोल्यो-तूँ डरै मतना। म्हारी नगरी को योई[29] बारणू[30] है। तूँ मेरी

पं॰ झाबरमल्ल शर्मा 'मरु-भारती' वर्ष २ अंक २

मतना। म्हारी नगरी को योई[२९] वारसू[३०] है तूँ मेरी गैल[३१] भीतर आज्या। पाछै लेय–देय कर तन्नै[३२] ओटी[३३] ई तेरै घरां पहुँचा जास्यूं[३४]। जद वा बोली भोत[३५]–चोखो, अर गैल–गैल चाल्याँ गई।

भीतर जाय कर देखै तो भोत सरूप नगरी बसरी है, महल[३६]–मालिया बण्या हुया हैं, जाळी–झरोखा झुक रह्या है। साँपा का कुणबा में जायकर साहूकार का बेटा की भू राजी होयगी। कोई कहै म्हारी भाण आई, कोई कहै म्हारी भूवा आई, कोई कहै म्हारी नणद आई।

रहताँ–रहताँ घणा दिन होयगा। साँपां की मां को यो नेम[३८] थो कै तेरीका[३९] आपका बेटाँ नै दूध प्यावण[४०] को बखत होतो जैसे पहलाँ ताता दूध नै कूँडा[४१] में सिला[४२] दिया करती। दूध चोखी तराँ सीलो होज्यातो, जणा वा टाली हला देती। टाळी को खुड़को सुनताँ[४३] पराँत साँप सै[४४] भेळा हो ज्याता अर कूँडा में ठोड़ी टेक कर चसड़–चसड़ दूध पी लेता।

एक दिन वा साहूकार का बेठा की भू बोली—मां, आज तो मेरा भायाँ नै दूध मैं प्यास्यूँ। साँपा की मां कह्यो—बेटी, तूँ ताता दूध में ताली हलादेगी तो बात बिगड़ ज्यागी। वा बोली ना मां! नचीती[४५] रह, आज ती मन्नैई भायाँ नै दूध प्यावण दे। जणा साँपां की मां कह्यो—आछी बात है, भलाईं तूँ प्यादिये।

साहूकार का बेटा की भू दूध तातो करके कूँडा में सिला जो दियो, पण चाव–चाव की मारी चोखा तराँ ठंडो होण सें पहलाईं टाळी खुड़का दी। दूध तातो थो, सो दूध पीवण नै

साँप आया उण में कोई की जीभ बळगी, कोई को मूढो बळगो। जद सगळां रीस भरकर बोल्या—म्हें तो अँ बाई नै खास्याँ[४६]।

साँपां की मां देखी, यो तो रंगई बिगड़यो। जद बोली—ना बेटा, बाई नै खायो मतना। या थारी धरम-भाण है। थारी ल्याई हुई आई है; आपणी बदनामी से डरणू चाये। थे तो अँनै सासरै[४७] पहुँचाद्यो। या बात साँपां के बी जचगी। जणा पछै वे घणू[४८] दायजो[४९] देकर ऊँनै[५०] ऊँकै[५१] सासरै—साहूकार कै घरां घालगा[५२]।

दान-दायजा नै देखकर दोराणी-जिठाणियाँ कै समाई[५३] कोनी रही। उणां आपसरी[५४] में मिलकर घोल[५५] घोल्यो कै अँनै छाणा ल्यावण नै भेज देणी चाये। उठे एक साँप को वासो है सो वो डस्याँ बिना कोनी छोड़ै। यो तोत घड़कर ऊँनैं छाणा चुगबानै उजाड़ में भेजदी। रोई[५६] में साँप देवता बैठ्यो हो सो साहूकार का बेटा की भू नै देखतां कै साथ फूँकार मारी, जणा वा बोली—

जीवो नाग-नागोलिया[५७],
जीवो बूढ़लो[५८] बाप।
जिण म्हारो लाड़ लड़ाइयो[५९],
पायल घाली पाय ॥

या सुणतां पराँत साँप देवता पायल ल्याय कर मूँडा[६०] आगै मेलदी[६१]। साहूकार का बेटा की भू पग में पायल पैर[६२] कर मुळकती हुई आप कै घराँ झट छाणां को चोलियो बी भर ल्याई। जणा दोराणी-जिठाणी बतळाई कै वातो मौत का

मूंडा में साँपा के घर छाणा ल्यावण नै गई थी, उठे सें बी जीवतीई चली आई। इबकाळै[63] अँने माटी ल्यावण नै लेचालो उठे बी एक काळो बासिग नाग रहवै है, वो खाज्यगो। या ध्यार-विचार कर आपकी छोटी द्योराणी नै माटी ल्यावण के मिस सागै लेली अर खनेड़ा पर जाकर सगळी जणी बोली–पहलां तूँ माटी खोदकर छाबड़ी[64] भरले।

वा बोल–बाली खनेड़ा में उतरकर माटी खोदण लागगी। माटी पर कसियो[65] पड़ता कै साथ साँप फूँकार मारी। साँप की फूँकार सुणताईं ज्याणै चिड़ियाँ में भाठो गेर दियो-सगली जणी भागगी अर साहूकार का छोटा बेटा की भू आपकी जगाकी जगा खड़ी रही; अर हाथ जोड़कर बोली :—

जीवो नाग नागोलिया,
जीवो बूढ़लो बाप।
जिण म्हारो लाड लडाइयो,
घाल्यो नव किरोड़ कोहार॥

या सुणताईं साँप देवता हार ल्यादियो। साहूकार की बेटा की भू गळा में हार पैर कर माटी की छावड़ी भरतां पाछी आपकै घरां आयगी। जणा दोराणी–जिठाणी फेरूँ[66] तिरगट[67] रच्यो कै राजा की राणी नै लगादेस्याँ[68], सो राणी अँको यो हार खोस[69] लेसी।

जणा पछै राणी नै जायकर लगादी। जद राणी साहूकार का छोटणा बेटा की भू नै बुलावो[70] भेज्यो अर या बात कहाई[71] कै तूँ खनेड़ा माय सैं हार पैर कर आई है जिको ल्यादे। जद साहूकार का बेटा की भू आपकी द्योराणी–जिठाणियाँ नै साथ लेली अर राणी का महल में गई।

जातांईं राणी हार मांग्यो। उण बोल-वाली[७२] हार आपका गळै में से काढ़कर[७३] राणी नै सूँप[७४] दियो अर बोली-मेरे गळै हार, राणी के गळै नाग।

सो राणी कै पैरताँ के साथ हार थो जिको नाग (साँप) होकर फूँकार मारै लाग्यो। जणा राणी बोली-तूँ जाण[७५]-जुगारी, कामणगारी है। यो हार का साँप क्याँ[७६] बणगो-ईं बात को भेद बतायाँ सरैगो।

जद साहूकार की बेटा की भू बोली-मैं न तो जाण-जुगारी हूँ अर न कामण-गारी। मेरे तो मां-बाप, भाई-भतीजा सब साँपई हैं, मैं तो साँपा का दियोडाई[७७] गहणां पंहर्यां[७८] हूँ। या कह कर आपकी बीत्योड़ी[७९] पूरी बात सुणाई। जद राणी हेलो[८०] फिरा दियो कै सावण की नाग-पाँचैं नै सब ठंडो (बासी) खायो अर भायाँ-पाँचें मानकर नागदेवता की पूजा करियो।

हे नागदेवता! साहूकार का छोटा बेटा की भू ने टूट्यो जिसा[८१] सबने टूठियो। कहतानै, सुणतानै, हुंकारा भरतानै, अँधेरे उजाळै सबकी रीच्छा[८२] करियो महाराज।

नाग पंचमी री कथा

१—उसके
२—और
३—पत्नी
४—खड्डा
५—मिट्टी
६—लाने के लिए
७—वहाँ
८—मुझे
९—लेने के लिए
१०—आयेगा
११—पीहर—नैहर
१२—देवरानी—जिठानी
१३—उपले
१४—जब
१५—टोकरा
१६—नीचे
१७—अचानक
१८—निकल आया
१९—इसको
२०—सबके
२१—लिवालाने
२२—बहिन को
२३—छोटे
२४—बाँबी; साँप का बिल
२५—उसमें
२६—घुसने लगा
२७—कहाँ
२८—घुसता है
२९—यही
३०—द्वार
३१—पीछे
३२—तुझे
३३—वापिस
३४—जाऊँगा
३५—बहुत सुन्दर
३६—राज प्रसाद
३७—परिवार; कुटम्ब
३८—नियम
३९—प्रतिदिन
४०—पिलाने का
४१—मिट्टी का पात्र विशेष
४२—ठंडा कर दिया करती
४३—सुनते के साथ ही
४४—समस्त
४५—निश्चित
४६—खायेंगे
४७—ससुराल
४८—बहुतसा

४६–दहेज
५०–उसको
५१–उसके
५२–पहुँचा गये
५३–सहनता
५४–परस्पर में
५५–षडयंत्र रचा
५६–जंगल में
५७–छोटा–सर्प
५८–बुड्ढा
५६–लड़ाया
६०–मुँह
६१–रखदी
६२–पहन कर
६३–अबकी बार
६४–टोकरी, छबड़ा
६५–फावड़ा
६६–फिर
६७–षडयंत्र रचा
६८–कान भर देंगे
६६–छीन लेगी
७०–नियंत्रण
७१–कहलवाई
७२–चुपचाप
७३–निकाल कर; उतार कर
७४–सौंप दिया
७५–जादू टोना; यंत्र-मंत्र जानने वाली
७६–कैसे
७७–दिया हुआ
७८–पहनते हुए
७६–बीती हुई
८०–ढँढोरा पिटवा दिया
८१–जैसा
८२–रक्षा करना

कहाणी संपदा कै डोरै की

एक राजा हो, एक राणी हो। बेटा-पोताँ की लहर ही। राणी की भायली एक सेठाणी ही। एक दिन सेठाणी राजा की राणी सैं मिलबा आई, जिकी थोड़ी-सी बार तो बैठी, पीछै बोली—भाण, मैं तो मेरै घराँ जाऊँगी; काम है। राणी कह्यो—इसो के काम है? जद सेठाणी बोली—मैं साँपदै को तागो ल्यूँगी। जणा रांणी कह्यो—तेरै घराँई के होगो? अठे लेले—पाछै चली जाये।

जणा उण सेठाणी उठेई तागो ले लियो। तागो लेयकर आपकै घराँ आयगी, सामग्री का थाळ भर ल्याई। जणा पाछै राजा नै सुपनू आयो। दाळद तो कही—मैं तेरे आऊँगो अर सम्पत् बोली—मैं तेरे घर जाऊँगी। जद राजा कही कै मैं तन्नै गई कय्याँ जाणूँगो? जद सम्पत बोली—तूँ सूत्यो उठैगो जद लोटो लेणू चावैगो तो माटी की हाँडी हाथ आवैगी अर कळसो मांगैगो तो ऊँनावड़ो मिलैगो; जद तूँ जाण ज्याये कै मैं तेरै सैं चली गई।

दूसरे दिन याई बात हुई। राजा देखीक दो परच्या तो मिलगा। भू पीराँ चली गई। बेटा चाकरी चला गया। बेटी सासरै चली गई। कोट को काँगरो ढहगो। 'हावड़ा हूत बावड़ा-भूत' लागगी। अन्न अर दाँताँ बैर पड़गो।

जद एक दिन राजा बोल्यो—राणी देखां तूँ तेरी भायली सेठाणी कैई जा, किमैं मिलज्याय तो पेट की आग बुझावाँ।

---

* सम्पादक—पं० झाबरमल्ल शर्मा 'मरू-भारती' वर्ष ३ अंक ४

जद राणी रथ जुड़ाय कर आपकी भायली सेठाणी कै गई। सेठाणी घणू आदर-भाव दरसायो। गादी-गींडवा बैठण नै दिया; हीरा-मोती परखण नै दिया, पण पेट की कोनी पूछी। जद राणी उठेसैं पाछी चली आई।

राजा-राणी नै पूछी—किमैं खाण नै बी ल्याई के ? राणी उदास होकर बोली—आव-भगत तो घणींई करी, पण खाण-पीण की पूछीई कोनी। जणा पछै राजा कही—तो इब अठे सैं आपानैं चालणू चाये। अठे निभाव कोन्या होवै।

यो विचार करके राजा राणी अर एक पोतो—तीनू जणा उठे सैं चाल पड्या। चालताँ-चालताँ आगै सी गया; जद एक गूजरी छाय-दही लियाँ मिली। राजा बोल्यो—गूजरी ! म्हे तिसाया मराँ हाँ, सो म्हानै तूँ थोड़ी-सी छाय घालदे। गूजरी आव देख्यो न ताव, भड़ाक सैं बोली—तेरै स्यारखा तीनसे साठ आँवै हैं, कैं-कैं छाय घालूँ ? राजा सांस भरकर बोल्यो—गूजरी या बात तूँ कोन्या कह रही, मेरो दिन कुहावै है। कह्म करै है दिन करै सो बैरी कोन्या करै।

जणा गूजरी मूंडो मोड़कर बोली—म्हे तो तन्नै सदा सैं इसोई देखाँ हाँ, कदै तेरै हाथी घूमता देख्या ना। तेरे साथ कदसीक नोलखो साथ चढ़तो।

राजा-राणी आपको सो मूंडो लेकर आगै नै चाल पड्या। एक जोहड़ की पाळ पर आया। राजा तीतर मारकर ल्यायो—अर आपकी राणी ने बोल्यो, तूँ तीतर भूँनले, मैं न्हायकर आऊ हूं। आपका पोता नै बी राजा साथ न्हावणनै ले गयो। जोहड़ में बड़ताँई पोतो हो, जिको गार में रूपकर डूबगो। उठीनै राणी तीतर भूँनण लागी तो तीतर भर्रर देबी सी उड्या।

राजा जोहड़ में पोता के डूब ज्याण कै दुःख अर भूख को मारयो आयो। आताँ पराँत राणी ने बोल्यो—ल्याव तीतर, मैं भूखो मरूँ हूँ। राणी बोली के ल्याऊँ! तीतर तो मैं खा लिया। थें लख्या अर मैं भख्या। राजा कही—चालो अठे सैं बी चालो। जणा पाछै उठे सैं वी चाल पड्या।

चालताँ—चालताँ राजा की भाण की नगरी में पहुँच्या। जद लोगां जायकर कही—भाण, भाण! तेरो भाई आवै है। भाण बोली—किसैक भेषां आवै है? जणा लोगां कही—ले लाठी भाग्यो आवै है। जद भाण बोली—उतारद्यो मेरे खोखरे पीपळ कै नीचे। नइँ तो मेरी द्योराणी—जिठाणी बोल बोलेंगी। राजा-राणी—उतरगा।

पछै भाण हीरा—मोतियाँ को थाळ भरकर ल्याई, सो भाणनै तो धन दीखै अर राजा—राणी नै कोयला दीखै। जणा राजा—राणी खाडो खोदकर कोयला था, जिकाँनै गाड़ दिया अर आगैनै चाल पड्या। आगै सी गया, जद राजा कै भायलै खाती को गाँव आगयौ। जणा खाती नै जायकर लोगां कही—खाती! खाती!! तेरो भायलो आवै है। खाती पूछी किसैक भेषाँ? जद कही—ले लाठी भाग्यो आवै है। खाती बोल्यो—मेरी पुरांणती खतोड़ में उतारद्यो।

सो खाती कै आदमियाँ राजा—राणी नै खाती की पुरानी खतोड़ में उतार दिया। उठे खाती का ऐरण—बसोला पड्या हा जिकाँ नैं धरती निगळगी। जद राणी—राजा नै कही—महाराज, अठे वी कळङ्क लागै है सो अठे सैं बी चालो। जद पाछै उठे सैं चालकर एक साहूकार कै आया, वो साहूकार बी राजा को भायलो हो। ऊँनै बी अगाऊ जायकर लोगां कही—साहूकार, तेरो भायलो आवै है! साहूकार पूछी किसैक भेषाँ आवै है।

जद कही—ले लाठी भाग्यो आवै है। साहूकार बोल्यो, पुराणियाँ महल में डेरो दिवाद्यो।

जणा राजा-राणी नै साहूकार का पुराणा महल में उतार दिया। उठे एक किरोड़ को हार खूँटी कै टँग रह्यो हो, जिको काठ की मोरड़ी हार नै गिट गई। जद राणी बोली—आपणैं तो अठै सैं बी चालो। जणा राजा-राणी उठे सैं बी चाल पड्या। चालताँ-चालताँ एक नगरी में पहुँच्या जठे बारा बरस सैं एक बाग सूको पड्यो हो, ऊँ बाग में जायकर राजा-राणी हार्‌या थक्या सोगया।

वो सूको बाग गरणादे हर्‌यो हो गयो। चाणचक सूका बाग नै हर्‌यो देखकर माळी-माळण नै बड़ो अचंबो हुयो! दोन्यूँ आदमी बाग में ढूँढ़ण लागगा—देखाँ कुण इसो भागवान सखी मरद आगयो, जैंका पवास सैं यो बारा बरस को बाग हर्‌यो होगयो।

ढूँढ़ताँ-ढूँढ़ताँ देखै तो दो मिनख एक मोट्यार अर एक लुगाई सूत्या पड़्या है। मालण-माळी कै पगाँ का खुड़काँ सै दोन्यूँ जागकर बैठ्या होगया। माळी बोल्यो—भई थे कुण हो? कोई देव होक मान्खी? जद राजा बोल्यो—भाई म्हे तो भिखायती हाँ। माळी बोल्यो, कोई राखै तो रह ज्यावोगा के? राजा कही—रहाँ क्यूँ ना? राजी-राजी रह ज्यावाँगा। म्हानैं तो म्हारा बिखा का दिन बोळणा है। जणा माळी बोल्यो—या मेरी धरम की भाण, तूँ मेरो धरम को भाई! दोजणा म्हे हाँ, दो जणा थे हो—अपां च्यार जणा होज्यावांगा।

एक जणू बारा ले लेगो, एक जणू कीली हाँक लेगो। लुगायाँ में सैं एक जणी घर को काम कर लेगी; दूसरी है—जिकी चो लियो बेच्यावेगी राजा-राणी रहवा लागगा।

अयाँ रहतां–सहतां राजा–राणी नै बारा महना पूरा होगया, जद एक दिन राजा कै औजूं दाळद अर सम्पत सुपनै आया। सम्पत्त बोली—मैं तेरै आऊँगी। दाळद कही—मैं तेरै सैं जाऊँगो। जद सम्पत् ने राजा बोल्यो—तूँ तेरी जठे है उठेई रहै। मैं तो निठ्यां सी रोटियां रळ्यो हूं। जद–जद सम्पत् बोली—मैं कै करूँ, तेरी लुगाई सेठाणी नै देदी। जद राजा कही—चोखो, इब मैं तन्नै कुन्यां आई जाणूगो? सम्पत् बोली—दिन उगतांई तूँ बारो लेगो जद सूत को फड़कलो, हळ्दी की गांठ, जोवां की बाळ निकलेगी, सो तेरी लुगाई तागो लेयकर चोलियो बेचण चळी जायगी।

अय्याँ राणी तागो (डोरो) लेयकर पीसण लागी तो चाकी की चूल आटा की भरगी—चोलियो बेचण गई तो चोलियो भो जिको सातूँ नाजां को भरगो। जद राणी सम्पत् ने बोली—इब तो माता तूँ मेरे ठोड ठिकाणे टूठिये। नईं तो मालण–माळी के यो बहम हो ज्यायगो क नाज या बीच में राख लिया करती।

जणा पछै एक राजा की बाई व्यावण सावै हो रही थी, जेंकै ताँईं घर–वर ढूँढ़ रह्या था। जद राजा माळी नै बोल्यो—एक टुकड़ो सावण को ल्यादे तो मैं बी मेरा कपड़ा धोल्यूँ अर राजा की बाई कै सुयंवर का तमाशा देख्याऊँ। साबण तो मैं ल्याद्यूँ हूँ, पण तन्नै–म्हानै कुण तमाशा में जाण दे है? राजा कही—भई, मैं तो जाऊँगो, कोई रोकैगो तो देखी जायगी।

या विचार कर माळी को धरम भाई बी राजा की बाई के सुयंवर का दरबार में जायकर बैठगो—जठे देश–परदेश का राजा लोग भेळा होरियाथा। वो जाणै मैं माळा पहरूँ, वो जाणै मैं वरमाला पहरूँ। पण वा राजा की बाई सबकै बीच सैं चीरती–

चीरती आगा नै जायकर माळी कै रहतो जिका कै गळै में माळा घालदी ।

जणा सगळा बोल्या—बाई को भाग फूट्योड़ो है । फेरूँ ऊँ माळी-वाळा आदमी नै धकेल कर परैसी कर दियो तो ओजूँ ऊँई केई माळा जा घाली । घणा पाछै ऊँ आदमी नै—जो हो तो एक राजा, पण आपकै बिखै का दिन बोळा रिह्यो थो—ऊपळाँ कै बटोड़ा में चिणवा दियो अर राजा की बाई कै हाथ में तीसरी बार फेरूँ बर-माळा दे दीनी ।

वा बाई फेरूँ सगळा राजा-महाराजावाँ ने छोड़कर बटोड़ा कै माळा घालदी । जद बाई कै बाप राजा आप कै मनमें घणू पछतावो करतो, अर कही—बाई की तो अक्कल मारी गई ! पाछै आपका स्याणा भोळा सैं बतला कर या बात ठहराई कै अै आदमी नै इब आपणा बाग में केसरी—सिंघ नै पकड़णनै भेजद्यो; सो वो नार आपैई मार गेरैगो ।

या मन में ध्यार-विचार कै ऊँनै बोल्यो—इब जाओ देखां ! केसरी सिंघ नै पकड़ो, जद मेरी बाई थानै परणाई जायगी । या सुणकर वो राजा की बाई नै बोल्यो—तेरो बाप मन्नै तो केसरी सिंघ पकड़बा नै भेजै है । जद बाई भोत उदास हुई । बोली—ओ हो ! ऊँ केसरी सिंघ तो मेरा बाप की सारी परगै खपादी, इब थानै के जीवता छोडेगा ? जद बिखायती राजा बोल्यो—तूँ चिन्ता मतना करै, रामजी चाया तो तेरा भाग सैं जीवता ई आवांगा । या कहकर वो बाग में जायकर केसरीसिंघ का मूँडै आगै खड़्यो होगो अर नार नै बोल्यो—जै मेरै बाप-दादाँ सिंघ मारया होंय तो तूँ बी मेरै आगै सिर निवादे । जद केसरीसिंघ सिर झुका दियो अर आपकी जीब सैंचाटण लागगो । जद उण ऊँ नार कै कानां की अर पूँछ की लोर कतर कर आपका गोज्या

मैं घालली भर आप नार नैं आपका पग का गूँठा कै बाँद कर सोयगो।

भोत देर होयगी, जद बाई कै बाप राजा आपकै आदमियाँ नै हुकम दियो कै देखाँ, बाग में जायकर देखो तो सरी, वो आदमी मरै हैकू जीवै है? जद आदमियां जायकर दूर सैं देखैं तो सिकार तो खाँडी कर राखी है अर आप चादर ताण्याँ सूत्यो है। केसरीसिंघ गूँठै कै बँद रिह्यो है। आदमियाँ पाछा आयकर राजा नै कही, जद राजा बोल्यो—इबकै ऊँनै खड़्या आँगळी सैं कठखाणू घोड़ो दिखाकर कह्यो कै अैं घोड़े पर चढ़कर गाँव कै बाहर च्यारूँ-मेर फेरे कर ल्यावैगो, जणा राजी की बाई परणाई जायगी।

जद राजा का आदमियाँ हेलो मार कर राजा को हुकम सुणाया अर आंगळी सैं कठखाणू घोड़ो बता दियो। जद विखायती राजा घोड़ा की पीठ पर हाथ फेरकर बोल्यो—जै मेरा बाप-दादा घोड़ाँ पर चढ़्या होय तो तूँ बी मेरे आगे नाड़ सीदी करदे। घोड़ै झटदे नाड़ पसार दी।

विखायती राजा सवार होकर घोड़ा नै गाँव कै च्यारु-मेर फेर कर पाछो लियायो अर राजानै जुहार करी। जणा राजा देखी, योबी कोई तपधारी राजाई है। अर घणा आनँद उछाव सैं आपकी बड़ कँवार बेटी परणा दई। नीचैं रिहास सुसरा की अर ऊपर जँवाई की। यूँ रहताँ-सहताँ घणेरा दिन होयगा, जद बाई की भाबियाँ बोल-बोलण लागगी कू ब्यादी-ब्यादी, पराये घर की करदी—तोबी अठे म्हारीई छाती पर रही। भाण बेटी को तो योइ होय है के देदें सो लेयकर आपके घराँ जाय। पण म्हारली बाई कै घर को ठिकाणू होय जद जाय! राजा की बाई भाबियां का बोल सुणकर कानाढोळी मारती रही।

संजोग की बात, राजा की बाई कै आसा रहकर नवैं महीनै एक कुँवर हो गयो। एक दिन राजा को जँवाई आपका कुँवर नै खिलावै हो—आकाश में बिजळी चिमकी। जद बोल्यो—म्हारै देश कानी बीजळी चिमकै है। जणा राणी बोली—थारै बी देश है के? जद राजा को जँवाई बोल्यो—देश क्यूँ ना? तेरा बाप कै तो पाँच सै खेड़ा हैं अर मैं साढ़े सात सै खेड़ा को धणी हूँ। जद राणी बोली—जणा इब आपांनै बी आपणै देश चालणू चाये। राजा कही, ठीक है; तेरा बाप सैं सीख मांगले।

जद राजा की बाई आपका बाप नै बोली—बाप जी, म्हानै इब सीख दिरावो। म्हें म्हारै देश जावांगा। जद राजा घणू राजी हुयो अर बोल्यो—बाई, धन-भाग, धन-घड़ी, सोना को सूरज ऊग्यो—थे थारै घरां जावो, आनन्द सैं खावो-पीवो, सुख पावो।

जणा पाछै शुभ दिन देखकर घणू धन, लाव-लश्कर देकर बाई नै विदा करदी। राजा आपकी पहलड़ी राणी अर नई राणी—दोन्युवां नै लेयकर देश नै चाल पड़्यो। जैं मालण—माळी कैं इतना दिन सुख-संतोष सैं बिखै का दिन काड्या था, उणनै भोतसो धन देकर उणीता हुया।

चालतां-चालतां पाछो राजा आपकै भायलै साहूकार के शहर में पूंच्यो। लोगां जाकर कही—साहूकार, तेरो भायलो आवै है। साहूकार पूछी, किसैक भेषा? कही—गिगना लाग्यो आवै है। साहूकार बोल्यो—मेरा नया महल में उतार द्यो। जद राजा कही—ना भाई, म्हे तो पुराणा महल मेंई उतरांगा।

जणा पुराणा महल में उतार दिया। पहला जाती बखत काठ की मोरड़ी साहूकार को नो किरोड़ को हार निगलगी थी।

सो इब उण मोरड़ीई पाछो हार उगल दियो। जद राजा साहूकार नै बोल्यो—देख भायला, तूँ तेरा मन में समझ राखी थी कै मेरो नो-किरोड़ को हार राजा ले गयो। इब तूँ तेरी आंख्या देखले। पण कोई बात ना। यो एक हार तो तेरो राख अर दूसरो हार मेरा कानी को ले।

पछै साहूकार सैं सीख मांगकर खाती कै आया। लोगां कही, खाती! खाती!! तेरो भायलो आवै है। जद खाती पूछी किसैक भेषां आवै है? कही घणू लाव-लश्कर साथ लियां गिगना लाग्यो आवै है। जद खाती बोल्यो—जातो हुयो तो मेरा घणाई ऐरण-वसोला ले गयो थो; पण इब तो मेरली नयोड़ी खातोड़ में उतार द्यो। जद राजा कही—भई, म्हें तो पुराणली खतोड़ मेंई उतरांगा।

जणा कही आछी बात है, जद पुराणती खतोड़ में राजा नै उतार दियो। उठे वी सवामण की कड़ाई करके राजा बळदई। जद धरती माता सगळा ऐरण-बसोला उगळ दिया। जणा राजा बोल्यो—देख ले भायला! तूँ म्हारै सिर लगावै हो!! इब तेरा राछ-पोछ, ऐरण-बसोला सब संभाळ ले अर म्हारै कानी का और ले ले।

अब खातीका सैं बी उणीता होकर आगा नै चाल पड्या। पाछै भाण कै पहुँच्या। लोगां जायकर कही—भाण! भाण!! तेरो भाई आवै है। भाण पूछी, किसैक भेषाँ? जद कही-गिगना लाग्यो आवै है। जद भाण बोली—मेरा घणाईं मोती-हीरा जाताँ लेगो थो, जिको धन करकै ल्यायो है सो मेरै घराई उतार द्यो। जद राजा बोल्यो—ना बाई! म्हें तो पहलां उतरया जेठई उतरांगा। सो पीपल का खोखरा कै नीचे उतरया।

जद राजा बोल्यो—बाई, तू जिमावै है या बोल सुणावै है ? तेरा हीरा-मोती था, जठेई संभाळ्ले । जणा पाछै धरती खोदकर दोयथाळ हीरा-मोतियाँ का निकाळ कर दे दिया अर दोय आपका कनासैं देकर भाण सैं बी उणीता होगया । पाछै उठे सैं चालकर ऊँ जोड़ा की पाळ पर आया । जद राजा को पोतो आयकर खड्यो हो गयो अर बोल्यो—बाबा ! मुन्नै बी नुहा, बोळी बार हो गई बाट देखताँ ।

उणीनै सैं तीतराँ बोलणू सरु करयो—'सुभान तेरी कुदरत, सुभान तेरी कुदरत' । जद राजा बोल्यो—एक तो वो दिन थो, जिको रान्योडा तीतर उड़गा था । अर एक दिन आज को है जिको तीतर अपणै आप आयकर सूण देवैं हैं । आगै सी ;गया जद गूजरी मिली । छाय-दही की हाँडी भर राखी थी । बोली—ल्योजी ! दही पी ज्यावो । जद राजा कही—आज तो तूँ दही प्यावै है, पण ऊँ दिन छाय नै बी नटगी थी । जणा गूजरी बोली—राज मैं के करूँ ! तेरो वो दिन इसोई हो ।

राजा आपकी नगरी में पहुँचकर आपको राज-पाट संभाळ लियो-राजा राज, पिरजा चैन होगयो । नगरी में उच्छव मनायो गयो । घणा! राग-रंग हुआ । भूवाँ पीराँ सैं आयगी—बेटा चाकरी सैं आयगा ।

कोट को काँगरो सीदो होगयो । जणा राजा आपकी नगरी में हेलो फिरादियोक संपदा नै सब मानियो । छारंडी कै दिन डोरो लियो अर तीसरे पखवाड़े खोल दियो ।

हे संपदै की राणी भवानी ! पहला टूठी जिसी कहीनैं बी मत टूठिये । पछै टूठी जिसी सबनैं टूठिये । कहतानै, सुणतानै, हुँकारा का भरतानै ।

आस माता

एक हो साहूकार जिकेरै सात बेटा हा। छ तो हा सपूत, कमावता-कजावता था अर एक कपूत हो। छओं भायों कयौ—भाजो, म्हानै न्यारा कर दो। ओ तो कई कमावै कोयनी, बैठो-बैठो खावे है। जणै बाप सगळों नै न्यारा कर दिया।

हमें वो जिको कपूत हो, वे संगळो ही धन उड़ाय, बरबाद कर नौखियौ। वेरी बऊ देराणियां जेठाणियां रा बासण मोंजै, चौका करै।

एक बखत आस माता आई देरांणियां जेठांणियां तो लाडू बीजा कर आस माता पूजण बैठ्यौं। वादेराणी सगळियौई जेठाणियां री घटी झाटक अर आटो लाई। लायपरी देरांणियां जेठांणियां खनै गुळ-घी मांग'र लाई। वेई आसमाता री चार पींडोळियां कर्यौ।

हमें सातै सार्यों आस माता पूजण नै बैठ्यौ! छ जणियौ तो आपरै खोळै में बेटा लेलिया अर खोपरै में दीओ जगाय लियो, मोतियांरा आखा लेलिया। कचे डोरै में एक हार पोय'र गळे में घालळियो। हमें आस माता री पूजा करण बैठियौ—हे आस माता, म्होंरी मनोकामना पूरण करियै।

जितैई वा देरांणी क्यौ-ईयैरी पूरण करै जिसी म्हारी करै। देरांणियां जेठांणियां त चोका दिया-धणी तो कपूत है अर म्होरै जिसा मंगै है। वा बापड़ी चुपकर बैठ गई। जितै वोरै बेटों लात री मारी, हार टूट गयो, कचे सूत रो हो। खमा-खमा सगळियौ कैवण लाग गयौ। वा बेचारी मूंडो उतार बैठगई। मन में कवण लागी-हे आस माता, म्हारी मनोकामना तूं पूरण करै।

वा पूजर घरै आई–धणी नै कयौ, भाग भरिया ! बाप री कमाई तो सैन उड़ाय दी। हमें तूं कमावरण तो जा कठैई ! कठै जाऊँ, मनै तो कठै जावरणरोई सूझै कोयनी ! तो जा तो सरी–आस माता आफैई देसी। तो कै ठीक है–जाईस भाई।

जणै वे एक कोड़ी–एक लखो टीयो, एक बींटी एक मोळी में बांध'र वेरी चोटी में बांध दी सैनांणी।

हमें वो घर सूं गयौ। गयौ–थकगयौ, अर रसते में सूयगयौ। आस माता री किरपा सूं उजैण नगरी रै खनै नींद में आसमाता पौंचाय दियौ। वेरी उठै आंख खुली–वेनै चार लुगायां दीसियौं। वे हाथ जोडिया–हाथ जो डर वो बैवण लाग–ग्यौ।

हमें चारे जणियां लड़ण लाग ग्यौ–नींद तो कवै, मनै हाथ जोड़िया। तिस कवै–मनै हाथ जोड़िया। भूख कवै–मनै जोड़िया। आस माता कवै–मनै हाथ जोड़िया।

आस माता कयौ–बाई, लडौ क्यों ? अपां बैवतै बटाऊ नै पूछलौं–वे केनै हाथ जोड़िया। जणै वौं कयौ, तो चालौ।

अरे बैवता बटाऊ ! तैं केनै, हाथ जोड़िया ! भाई तूं कुण है ? हूं भूख हूं। मैं तो भूख नै हाथ जोड़िया कोयनी। भूखरो मारियौ तो हूं घर सूं निकळियौहूं।

जितैई नींद पूछियौ–कै भाई थैं केनै जोड़िया ! तूं, कूंण है ? हूं नींद हूं। नींद नै जोड़िया कोयनी। नींद आयजावै तो म्हारो कोई गळोई कतर जावै तो ठाई पड़ै कोयनी।

जितै तीसरी पूछियो—भाई थैं केनै हाथ जोड़िया ? तूं कूंण है ? हूं तिस हूं। तिस नै म्हैं जोड़िया कोयनी। हये रिंद–रोई में तिसौं मरतो मरजाऊं, तो कोई पांणो पावै कोयनी !

जितैई चौथी पूछियौ—भाई थैं केनै जोड़िया ? तूं कूंण है ? तोकै हूं आस । आस माता नै सौ–बार नमस्कार ! सात पीढ़ी नै नमस्कार ! आसा बंधौ हूं घर सूं निकळियौ–थूं म्हारी आसा मनसा पूरै ।

तोकै तूं जा ! थारी आसा मनसा पूरी होसी । उजैण नगरी रो राजा मरियो है, थनै राज मिळसी ।

वे चार जिणियौं तो उठैई अलोप होयगयौ–वो उजैण नगरी में गयौ । उठै रो राजा मरियोड़ो थो; धूम–धाम ही उजैण में राजगद्दी री । वे जांणियौ–बात तो साची है, राजा मरियोडौ है । वो एकै–पासी चुप–चाप जाय'र ऊभौ हुयग्यौ ।

रजवाड़ै में एक हथणी नै सिणगारी । हथणी नै एक माळा दीवी । हथणी घूमती–घूमती एक खूंणै में जाय ऊवै नै माळा पैराई ।

हमें रजवाड़े रा लोग कैवण लागग्या—हथणी भूली ! हथणी भूली ।

दूसर हथणी नै सजाई । वेनैं धका–मार निरो आघौ काढ़ दियौ । हथणी–घूमती–घूमती फेर वेरैईज गळै में जयमाळा पैराई । रजवाड़ै रा लोग फेर कैवण लागग्या–हथीणी भूली ! हथणी भूली !!

हमें तिसरकी–वार वेनै सात ताळां में ढक दियौ; हथणी नै फेर सजाई । हथणी फेर घूमती–घूमती सातैई ताळा तोड़'र जयमाला वेरैई गळै में जाय पैराई ।

कै हथणी फेर भूली ! राज तो इयैरेज लिखीयोडौ दीसै है-तीजै लोक पतीजै, चौथै चावळ सीजै। हमें जिको चौथी फेर पैरासी वेनैईज राज मिळसी।

वेनै एक रंद-रोई में खाडो खोद'र बूर दियौ; अर हथणी नै फेर सजाई। हथणी घूमती-घूमती ठेठ रंद-रोई में गई। जाय'र पगसूं जमी खोद'र खाडै मांय सूं काढ ऊवै नै, वेरै गळै में जयमाळा पैरादी।

रजवाड़ै रै लोकां कयौ-राज तो ईयैरैईज लिखयोडौ है। नैवाय-धुवाय ऊवैनै राज तिलक देदियौ। वो राज करण लागग्यौ।

वरै मां-बापां रै घर रै मांय नै अर भायौं-भोजाईयौं रै नादारी आय गई। ओ तो घणा पईसा देवै-थोड़ो कांम करावै ! मां-बापां नै ठा-पड़ी; भाई-भोजाइयौं नै ठा-पड़ी। उजैण नगरी में एक नवो राजा हुवो है—थोड़ो तो काम करावै, घणा पईसा देवै, अपां उठैई हालो नौकरी करलेसौं।

हमें छः भाई, छः भोजायां, मां-बाप अर वा आपरी बऊवांरै साथै ! वे मोल में बैठोड़ै आपरै कुटम्ब नै ओळख लियौ। मोल सू नीचो उतरियौ, नौकरांनै कयौ-जाओ वे बेंवता बटाऊ जावै ऊवांनै बुलाय लावौ। नौकर गया अर बुलाय लाया।

राजा कयौ-भाई, थे नौकरी करसौ। हां इंदाता ! म्हैं नौकरी करणनैईज आया हौं। वे आपरै सिगळांनैई नौकरी राख लिया।

छः भायां नैं तो घोडों माथै राख लिया, बापनै चौकीदार राख दियौ, मांनै बिलोणौ करणनै राख दी, छः भोजायांनै घर रा सगळा कांम-काज करण नै राख दियौं। आपरी बऊ नै नेवावण री जागा राख दी-मनै तूं संपाड़ो कराया कर। बऊ रै जीमें

दुख आयौ–कै देखौ, धणी तो परदेस कमावण गयौ है अर मनै जिको पराए आदमी नै नेवावणौ पड़सी !

हमें वा एक दिन जिको वेनै नेवावण बैठी। वेरै माथै में जिका सैनांणी वे बऊ बांध'र भेजी, वा दीसगई। ओ देखर वा रोवण लाग गई। ऊंनो–ऊंनो आंसूं रो छांटौ राजा री पीठ माथै पडियौ, राजा सामौ जोयौ।

क्या बात है—तूं रोई ? वा डरण लाग गई। नहीं अंदाता, मनै ईयोई रोज आय गयौ। नहीं, तूं डर मती–तनै सातैई गुना माफ है; हे जिसी बात बताय दै।

जणै वे कयौ–म्है म्हारै धणी रै इसोई छलो बांध'र बईर करियौ, उसोई देखँर रोज आय गयौ। धणी उठ'र कयौ–तूं म्हारी लुगाई है, हूँ थारो धणी हूं। आसमाता तुष्टमान हुई मनै-ओ राज मिळियौ।

वेनै नेवाय–धुवाय रांणी बणायली राजा। वे दिन सूं वेनै अवधान होय गयौ। पाछी बारै मई नै आस माता आई, जिते वेरै बेटो होय गयौ।

वे हमें मोतियां रो थाळ भर, कचे तोतण में हार पोयौ। हमें सिगळियोंई देरांणियां, जेठांणियां नै लेयपरी, बटैनै लेय'र आस माता पूजण बैठी। पूजते–पूजते बेटे लात री मारी, हार टूट गयौ। देरांणियां, जेठाणियां उठ'र खमा–खमा महारांणी जी नै कैवण नै लाग ग्यौं। वे कयौ–मनै खमा–खमा मती केवौ ! खमा आस माता नै–मनै कैवतियों तो जदैई कैंव देवतियौ।

हे आसमाता ! वेरी मनसा पूरण करी उसी सगळां री करै।

बछ बारस री कथा

एक ही डोकरी अर एक ही बऊ। डोकरी एक दिन बार गई। जाँवती बऊनै कैअ'र गई–म्हारै गवलियौ रौंध राखै।

हमें बऊ बापड़ी पूछियो तो कोइनी सासू नै! वेरै पीरै में गवलियौ कैंवताहा बछड़ै नै। वे आपरी डरतै-डरतै बछड़ै नै बाढ'र हांडी में रौंधलियौ।

हमें सिंजारी सासू आई अर उठी नै सूं आई गाय जंगळ सूं चर'र। सासू बऊ नै कयौ–बींनणी, बाछडियौ छोड़। गाय दूँ वूँ!

हमें बऊ हाथ-मोडै, पग मोडै बाछड़ियौ तो रौंधलियौ; हमें क्या छोडूँ?

भगवान सूँ अरदास कीवी–हे भगवान! म्हारी परतंगिया अबै तूँ ही राखै। जितैही हांडी फूट'र, हांडीरो घौंघौ गळै में घालोडौ, बाफ्यां निकळतौ बाछड़ियौ आय'र गाय रै हांचळों में पड्यौ।

सासू पूछ्यो–बऊ, ओ क्या? बाछडियौ रैगळै में घोंघो अर बाफ्यां निकळै है। बऊ कयौ–सासूजी, म्हारै तो पीरै में गवलियौ–बाघड़ै नै कवै है। थे ठानी गवलियौ कैनै कवौ हौ? म्हारी तो परतंग्या भगवान राखी।

सासू कयौ–आजरै दिन नातो कोई गेवूँ खावै, ना कोई गाय री खीर खावै, ना गायरो दूध-दही खावै-पीवै। भैंसरो घी खावै, भैंसरो दूध-दही खावै-पीवै। चाकूरो कतरीयोड़ो नहीं खावै। बाजरी खावै बेटे री मां बछड़ै री गाय नै पूजै।

हे गऊ माता, वेरी पिरतंग्या राखी जिसी सकळ री राखै।

गणगौर की कहानी

एक राजा थो, एक माली थो। राजा [1]बाया जो चणा अर अर माळी [2]बायी दूब। राजा का जो चणा [3]बधता जायँ, माळी की दूब घटती जाय। माळी राजा नै कही—महाराज या के बात ! मेरी दूब घटती जाय अर [4]थारा जो—चणा बधता जायँ ? राजा बोल्यो—तेरी दूब [5]छोरियां तोड़ कर ले ज्यायँ है।

जद माली [6]मुँह-अँधेरे [7]भाख पाटती कै साथ गाड़ी का पैया के [8]तलै [9]ल्हुककर [10]बैठगयो छोरियां [11]भेली होकर [12]रोजीना की नाईं दूब [13]लीवनै आई। जद माळी गाड़ी का तळा सैं [14]चाणचक निकलकर कोई को हार [13]का खोस लियो, कोई को डोरो खोस लियो, कोई को [15]गाबो खोसलियो अर बोल्यो थे [16]सासती मेरी दूब [17]कटयाँ तोड़कर ले ज्यावो हो ? जद छोरियां कही—म्हारा हार, डोरा, अर गाबा दे दे। म्हें सोळा[18] दिना ताईं[19] गणगोर पूजा[20] हाँ। सोळवें दिन गणगौर पूजकर तन्नै[21] फळ[22]—लापसी दे ज्यास्याँ[23]। माळी छोरियां ने उण[24] का हार, डोरा अर गाबा खोस्या था, जिका पाछा देदिया।

सोळवैं दिन गणगौर माता नै पूज्यां[25] पाछै फळ-लापसी लेकर छोरियां माळी की मां कै कन्नै[26] आई अर बोली-बूढीमाई

(१) बोये (२) बोये (३) बढ़ते (४) आपका (५) लड़कियाँ (६) प्रत्यूष (७) पौ फटते ही (८) नीचे (९) छिपकर (१०) बैठ गया (११) इकट्ठी (१२) प्रतिदिन की भाँति (१३) लेने (१४) अचानक (१४ क) छीन लिया (१५) कपड़ा (१६) शाश्वत, सदा (१७) कैसे (१८) सोलह (१९, दिनों तक (२०) हैं (२१) तुम्हें (२२) पूजा के लिए प्रस्तुत नैवेद्य (२३) दे जायेंगी (२४) उनके (२५) पूजने के पश्चात्

यो चढावो[२७] ले। जद् माळी की मां कह्यो–मेरी ओबरी[२८] में मेलद्यो[२९] छोरियां फळ–लापसी ल्यायी थी, जिकी मालण की ओबरी में धर कर आप आपके घरां चलीगी। जणा पाछै अँवारीसी[३०] माळी को आयो अर आपकी मांनै बोल्यो–मां, मैं तो भूखो मरू हूँ कि मैं[३१] खाबानै दे। जद् ऊँकी[३३] मां कह्यो बेटा, आज बी भूखो क्यूँ मरै? गाँव की छोरियाँ घणीई फळ–लापसी देकर गई हैं, तूं धापकर[३४] खाले, ओबरी में पड़ी है। जद माळो ओबरी खोलकर देखैं तो हीरा मोती जग मगाहट कर रह्या है। अणमेदा[३५] को धन ईं धन पड्यो है।

हे गणगौर माता, माळी नै टूटी जिसी सबनैं टूठिये। कहता नै सुणतानै हुंकारा का भरता नै, सुहाग–भाग घणू दिये माता।

---

(२६) पास (२७) देवता के चढ़ी हुई भेंट (२८) कोटड़ी (२९) रखदो (३०) जरा देर से (३१) कुछ (३२) खाने के लिए (३३) उसकी (३४) तृप्त होकर (३५) अपरिमित।

गवर री कांणी

एक हो सेठ—वेरै सात बेटा अर एक बेटी ही। होळी आई जणै छोरियां गवर पूजण लाग्यौं। जणै वे कयो—हूंई गवर पूजसूं। भायां घणौई ना कयो, पिण वे तो जिद कर पूजणी सुरू करही वीवा। दिन ऊगतैई उठ'र गवर पूजण जावती—फूल लावती, कूडेला चितरती, ढकणी चितरती, ओटली चणै, कांणी कैवती, सवा-पौर रो दिन चड़ जावतो।

जणै भायां पूछियो मां नै—मां, म्हौरी आ बेन थकी क्यों जावै है! मां कयो—गवर पूजै जिकै सूं थकै है। दिनूगै री उठै, सिनांन करै, फूल लावै, कूंडला चितरै, ढकणी चितरै, ओटली चणै, कांणी कवै; जितै सवापौर रो दिन चड़ जावै। पछै आ रोटी जीमै, जिकैसूं कर थकै!

बैन गई ही फूल लेवण नै। लारै सूं भाई जायरे गवर नै गिड़ काय आया। वा पाछी फूल लेय'र आई, गवर पूजण लागी। देखै तो गवर नहीं! मां नै पूछियो—मां म्हारी गवर कठै? बेटी, थारै छोटेडै भाई नै पूछ। छोटेडै भाई नै पूछियो। वे कयो, हूं तो वेनै आकूड़ी ऊपर फैंकी आयो!

जणै वा रोवती-रोवती आकूड़ी ऊपर सूं गवर पाछी ले आई। पाछी लाय'र गवर री पूजा करी। गवर माता अबै वेरै माथै अरूठ हुय गई। अबै वेनै घर मिलै तो बर नहीं मिळै अर जै बर मिळै तो घर नहीं मिळै। जणै मां छोटेडै बेटे नै कयो—अबै तूई जा; जोयला ईयेरै खातर कोई चोखौसो वर!

जणै वो पांणी रो लोटो भर'र, चूरमेरो कटोरो भर'र जाय बैठो पिरोळ में। वे मन में सोचियो—जिको अठैसूं बैसी, वेनै म्हारी आ बेन परणाय देसूं।

पेली-पांत आयो एक भाठै रो गडो। वे देख्यो—गडे नै क्यां परणाऊँ! जितै दूजी बार आयो—एक सांप। भाई नै फिक़र होयो—भला सांप नै म्हारी बैन कीकर परणाऊं! वो उठैई बैठो रह्यो। जितै तो तीजी बार एक कोडीयो आयो। कोड़ीयै नै तो हूं म्हारी बेन कोइनी परणाऊँ! तीजे चावळ सीजै, चौथे लोक पतीजैं। अबकी बार जिको आयी वेनै हूं म्हारी बेन परणाय देसूं। जितै तो एक लूलो उठे सूं निकळियो। जणै वे लूलै नैई आपरी बेन परणाय दी। परणाय'र वे आपरी बेन नैं कयो—हमें घरै चालो। वा कैवण लगी, हूं तो अबै ईयैरै सागै जासूं—घरै को हालूंनी।

वा परणीज गई जणै वेरी सासू वेनै बधावण नै आई। सोने रो थाळ, अर मोतियां रा आखा, हाथी लेय'र बधावण नै आई। जणै वो हाथी हो वो तो पींडारो हुयग्यो गोबर रो। सोने रा थाळ अर मोतियां री आखा हा जिकै सगळा ही कठै ही जांवता रह्या। सासू-सुसरां रै वा पगै लागी, जणै वे आँधा हुयग्या। भरीयै में हाथ घालै तो खाली हुय जावै; जै खाली में हाथ घालै तो फूट जावै।

जणै मां-बापां बेटे ने कयो—बेटा, इयै बऊ नै घर सूं बारै काढ़ी आ! लूलो गयो जिको एक बाग में वेनै छोड़'र आयो।

बाग में रोजी नै तो सोने रा फूल उतरचा करता। वे दिन वो बाग समूळो सूक गयो। माळी बोलियो—

कयो अभागियो मांणस आयो, काढोरे, बाढोरे।

वे कयो—नारे बीरा, आजोकी, कालो की,
सुवारै म्हारै घरै जाईस।

जणै गइ वा कुंभार रै उठै। कातो वेरै सोने-चांदी री न्याई उतरती ही ! वे दिन ठीकरी कोनी उतरी।

जणै कुंभार कयो—कयो अभागियो मांणस आयो,
काढ़ोरे, बाढ़ोरे।

वे कयो—ना रे बीरी, आजोकी, कालो की,
सुवारै म्हारै घरै जाईस।

चालती-चालती उठै सूं वा एक वेस्या रै गई। वेस्या रै खूंटै हार टंग्योडो हो अर पींघै में एक बाळक हो। वे दोनोंई कठैई गुम हुय गया। जणै वेस्या कयो—

'कयो अभागियो मांणस आयो, काढोरे, बाढ़ोरे।'

वे कयो—ना रे बीरा, आजोकी, कालो की,
सुवारै म्हारै घरै जाईस।

अबै वा अठै सूं हाली। अठै सूं बारै कासां ऊपर एक सिंघ गाजतो हो। वे सोच्यो—सिंघ रै खनै जाऊं! खा-लेसी तो गेलई छूटती। सिंघ रै हाथ लगावतेई, वो भाठै रो एक गडो हुयग्यो।

सिंघ कयो—कियो अभागियो मांणस आयो, काढोरे, बाढ़ोरे।

वे कयो—ना रे बीरा, आजो की, कालो की,
सुवारै म्हारै घरै जाईस !

अबै वा आगे चली। एक समुदर हो। वे सोच्यो–समुंदर में डूब मरणोई ठीक है। वे समुन्दर में डूबण खातिर पग घात्यो—समुंदर सगळोई सूकगयो।

समुंदर बोल्यो—कियो अभागियो मांणस आयो, काढ़ोरे, बाढ़ौरे।

वे कयो—ना रे बीरा, आजो की, कालो की,
सुवारै म्हारै घरै जाईस।

अबै वा आगे चाली। चालती–चालती वेनै एक बाबेजी री मठ दीसी। वे सोच्यो—आ ठीक है–मठ रै ऊपर सूं कूद'र मर जासूं।

जितै में वा मठ रै मांय जाय पड़ गई। वे दिन बाबेजी नै भिख्या मिळी कोयनी; कुत्ते नारो खायो। जणै वो पाछो दौड़तो-दौड़तो आयो। आगे देखै तो मठ में, मांय सूं कूंटो ढकियोड़ो! जणै वे कयो—म्हारी मठ में कूंण है! भूत है, पळीत है, मिनख है, कै मानवी है!

वे कयो, 'हूं तो मिनख हूं।' तो कयो बारडों खोल—बारडों खोलूं कोयनी! बचन दे।

वे कयो—बचन बाचा, जै बचन चूकूं,
तो धोबीरी कूंड में सूकूं।

जणै वे बारडों खोल्यो। 'तूं म्हारी धरम री बेटी है' बाबे जी कयो।

आवै बाबे जी कयो—बेटी, कूंडो तो ला। वा कूंडो लाई। देखै तो वेमें बिछू! बाबे जी कयो--बेटी, घोटो तो ले आव! वा घोटो ले आई; घोटे में देखे तो सांप लपटीज गयो है। जणै बाबे जी कयो-बेटी, पांणी तो ले आव! वा पांणी ले आई। बाबो जी देखै तो पांणी में जीव ई जीव। जणै बाबाजी कयो--बेटी, तनै तो गवर मात अरूठ होवोड़ी है। होळी आवै जणै भर-भोळिया बणाय'र, म्हारै माथै अर म्हारी डांग माथै घोळै! दिन ऊगै गवर री पूजा करै।

वे सोळै दिन, दिन ऊगै उठ'र गवर री पूजा करी, जणै गवर माता वेनै तुष्टमांन हुय गई।

हमें वेरै धणीरै मन में विचार आयो कै देख तो आऊँ जाय बऊ नै। वे आठ लाडू बणाया--चार मीठा अर चार खारा। वो चालतो-चालतो तळाव रै किनारै आयो। वठै पनिहारियां पांणी भरतियौं ही। ओ उठै बैठ'र लाडू खावण लागो। खारा-खारा तो आप खावै अर मीठा-मीठा चिड़ियां नै नोखै। पणि-हारियां देख्यो--टांग हिलावै लाडू खावै। है तो होसलदे रोईज भरतार।

जणै वे बाबेजी नै कयो—बाबाजी, बाबाजी, मनै अबै छुटी देवो। हूं म्हारै घरै जासूं। बाबे जी घणो सारो दत्त-दायजो देय'र वेनै खानै करी। वे जावता-जावती बाबाजी नै पूछियो--बाबाजी थे जै मरजावो तो मनै कीकर ठापड़ै। बाबेजी कयो--बेटी, ओ घड़ो लेती जा। घड़ो जद फूट जावै तो समझले कि बाबाजी आज मरग्या है।

अबे वा बाबेजी सूं सीख लेय'र आपरै घर खानी बईर हुई। आगे जावतै-जावतै दो रास्ता मिळिया। धणी कैवण लगो

अठी नै सूं हालसां । वा कवै नहीं । अठी नै सूं नहीं, इणगी सूं हालसां । भौड़ करता-करता वो घड़ो फूट गयो । जणै वा रोवण लाग गई—कैवण लागी, म्हारा बाबाजी मर गया ! हूं तो पाछी मठ ऊपर जासूं ।

अबै वा रोवती-रोवती धणी नै सागै लेय'र पाछी मठ ऊपर आई । आगै देखै तो बाबोजी तो जीवता-जागता बैठा है । वे कयो—बाबाजी, थां कयोहोक कै ओ घड़ो फूट जावै तो समझ ले हूं मरगयो । बाबेजी हँस अर कयो—बेटी, हूं थारी परीख्या लेंवतो हो । ले, आ म्हारी डोंग ले जाव । आ डोंग जद फूट जावै तो समझ लिए हूं मर गयो ।

पाछी जावती-जावती वे समुंदर में पग घालियो । इतैई समुंदर पांणी सूं भरीज गयो । वे कयो—कयो सभागियो मांणस आयो, आवरे, बैठ रे !

वे कयो—ना रे बीरा, राखण रै दिन तो राखी कोयनी, अबै म्हारै घरै जासूं ।

जणै जावती-जावती आगे जाय'र गडे रै हाथ लगायो । हाथ लगावतेई गडे रो सिंघ बण गयो; सिंघ बारे कोसां में गूंजण लागग्यो । वे कयो—कयो सभागियो मांणस आयो, आव रे, बैठ रे ।

वे कयो—ना रे बीरा, राखण रै दिन तो राखी कोयनी, अबै म्हारै घरै जासूं ।

उठै सूं सीधी वागई वेस्या रे घरै । वेस्या रै पींघैं में बाळ रोवण लागग्यो अर खूंटी ऊपर हार लाध गयो । वेस्या बोली—कयो सभागियो मांणस आयो, आवरे, बैठरे ।

वे कयो—ना रे बीरा, राखण रै दिन तो राखी कोयनी, अबै म्हारै घरै जासूं ।

अबै वा अठै सूं सीधी गई कुंभार रै उठै। कुंभार रै सोने री न्याई उतरन लाग गई। कुंभार बोल्यो—कयो सभागियो मांणस आयो, आव रे, बैठ रे।

वे कयो—ना रे बीरा, राखण रै दिन तो राखी कोयनी, अबै म्हारै घरै जासूं।

अबै वा बाग में गई। बाग हरीयो टोंच हुय गयो। माळी ओ देख'र कैवण लागो--कयो सभागियो मांणस आयो, आवरै बैठ रे।

वे कयो—ना रे बीरा, राखण रै दिन तो राखी कोयनी, अबै म्हारै घरै जासूं।

आगे घरै आई। सोने रा हार, सोने रा थाळ अर मोत्यां रा आखा पाछा हुयग्या। पींडा रे सूं हाथी हुय गयो। सासू-सुसरां रै पगै लागी—कै वोनै दीसण लाग गयो। खाली में हाथ घालै तो भरीज जावै—भरियै में हाथ घालै तो ढुलण लाग जावै।

सासू उठ'र वऊ रै पगै लागी—बऊ कळ जांणै, कांमण जांणै! हूं तो कळ जांणू ना कांमण जांणू। मां-बापो रै जाई, सासू-सुसरां रै आई। म्हारै माथै तो गवर माता अरूठ हुय गई ही।

हे गवर माता, वेरै माथै अरूठ हुई जिसी केनै मती अरूठीयै; वेनै सरूठी जिसी सकळ नै सरूठीयै।

महिलाव्रत–सोमवती अमावस्या की कहानी

एक साहूकार थो। ऊँकै सात बेटा था अर एक थी बेटी। साहूकार कै घरां एक जोगीर [1]सासतो [2]भिच्छा लेण नै आव तो। वो जोगी साहूकार कै बेटां की भू–भिच्छा दीणनै आती जद तो कहतो "ल्याव [3]सुहागण भिच्छा अर साहूकार की बेटी भिच्छा घालती जद कहतो "ल्याव [4]दुहागण भिच्छा"। एक दिन साहूकार की बेटी आपकी मा नै बोली, मा, आपणै जोगी आवै है जिको मन्नै तो "दुहागण" अर भावियां नै 'सुहागण' क्यूं कहवै ?

बेटी की बात सुण कै माकै चिन्त्या लागगी। दूसरै दिन जोगी आयो जद साहूकारणी हाथ जोड़कर बोली, म्हाराज ! थे बाई नै 'दुहागण' कहकर भीख मांगो सो के बात है ? जद जोगी बोल्यो, [5]मन्नै तो दीखै जिसी कहदूयू हूँ। या बाई फेरा मेंई विधवा हो जायगी। साहूकारणी बोली—म्हराज, [6]कँह तरह बाई को सुहाग वण्यो रहै, इसो थे उपाय बतावो। जद जोगी बोल्यो—उपाय तो एक है। समदर पार एक सोमा धोवण रहवै है, जे उँनै ल्याय कर औं बाई का ब्याह में फेरा होती बखत बढादी जाय तो वा [7]मागर हुयोड़ा [8]बींदनें [9]फेरु [10]सरजीवण कर सकै है।

साहूकारणी आपका [11]धणी नै कही। जद साहूकार छऊँ बेटानै पूछी पण कोई सोबी समदर पार जायकर सोमा धोबण नै

---

(१) शाश्वत–हमेशा (२) भिक्षा (३) सौभाग्यवती (४) दुर्भाग्यवती (५) मुझे (६) किसी प्रकार (७) मृतक (८) वर को (९) पुनः (१०) संजीवित (११) स्वामी को।

ल्याण की [१२]हांमल कोनी [१३]भरी। सातवां बेटा नै कही जद वो बोल्यो--बापूजी, ये सोच मतां करो। मैं बाई नै साथ लेकर सोम धोबण नै ल्यावण नै चल्यो जास्यूँ। जणा पाछै दोन्यू भाण भाई घर सैं चाल पड़या। चालतां-चाळतां समदर कै किनारै पहूंच्या। उठे एक पुराणू पीपळ को [१४]घेरघुमेर [१५]रूँख [१६]ऊबो थो जिका मैं एक गीध [१७]घूँसलो [१८]घालकर बचियाँ कै साथ रह्या करतो। एक वड़ो काळो सांप घूँसला मैं हील[१९] थो जिको गैल सैं[२०] गीध के बचियां नै मार कर खाज्याया करतो। जिकै दिन बी गीध चुग्गो पाणी करण नै चल्यो गयो थो अर बै दोन्यू भाण भाई ऊँई पीपळ कै पेड कै नीचै ठहरगा। भाण की तो आँख झपगी[२१] पण भाई जागतो आडो[२२] हो रह्यो थो। देखै तो पीपळ पर सांप चढ़ण लाग रह्यो है, जिका की फूँकार नै सुणतांई गीध कै बचियां चूँचा[२३] मचादी। साहूकार कोबे टो बचियां की चूँचां सुणकर पीपळ पर चढ़गो अर सांप नै सैल की अणी सैं मार गेरयो। सांप के मरताई गीध का बचियां कै जी में जी आयगो[२४]। साहूकार को बेटो पीपळ मांसूँ नीचै उतर कर सांप नै आपकी ढाल कै तळै[२५] दाबकर सोयगो[२६]। थोड़ी देर है गीध चुग्गो-पाणी करकै आपकै घूँसला में पाछो आयो। आगै देखै तो दो माणस[२७] पीपल कै तळै सूत्या पड्या है। गीध मन मैं विचारी हो न हो येई हूं जो बचियां नै मार ज्याया करैं है सो आज बदलौ लेलेणू[२८]। बाप नै आयो देख बचियां

(१२) स्वीकृति (१३) दी (१४) छतरीदार (१५) वृक्ष (१६) खड़ा (१७) घोंसला (१८) डालकर (१९) आकर्षण के आने की आदत थी (२०) पीछे से (२१) सोगई (२२) लेटा हुआ (२३) अनुकरण शब्द चिल्लाहट (२४) आगया (२५) नीचे (२६) सो गया (२७) आदमी (२८) ले लेना चाहिये।

कही—म्हानै नो आज जीवदान दीणवाळो यो माणस है। अँका उपगार नै म्हें तो कदेई कोन्यां भूलाँ। पहलां अण नै खाणू–दाणू करावोगा जद म्हें चुग्गो–पाणी करस्यां। जणा गीध साहूकार के बेटा नै कह्यो—पहलां थे खाणू-दाणू करल्यो, पाछै बात करोंगा। जद दोई भाई भैण खाय-पीयकर नचीता[29] होयगा अर[30] गीध व बचियां बी चुग्गो पाणी कर लियो। जद गीध बोल्यो—साहूकार का बेटा, इब बताय तूं के चावै है। तूं मेरा बचियां नै जीव दान दियो हैं। मैं तू कहै सो करण नै तैयार हूं। जद साहूकार कै बेटे कही—म्हानै समदर पार सोमा धोबण कै घर आगै पहुंचादे। जद गीध भाण अर भाई नै आपकी पांखां पर बैठाकर उड़ग्यो। सो समदर कै परलै पार सोमा धोबण कै घर कै आगै एक बड़ थो जैंके मांय लेज्याय कर उतार दिया। दोन्यू भाण भाई बड़ कै मांयई रहबा लागगा। सोमा धोबण कै सात बेटा, सात बेटां की भू अर सातई बेटियाँ। धणी बेटा, अन्न–धन्न सब बातां का ठाठ लाग रह्या।

साहूकार की बेटी के काम करैक[31] दिन ऊंग्या पहल्यां मुँह अँधेरे उठकर सोमा धोबण को आंगण लीप्यावै। भारी–झाड़ी दियावै अर पाछी बड़ में आयकर आपकी जगा बैठ ज्याय। घण-घणेरा दिन होयगा, जद सोमा धोबण आपकी भू–बेटियां नै पूछियो के आपणै इतिनी सुदियां[32] कुण भारी–झारी[33] अर लीपा–पोती[34] को काम कर ज्याय है। जद सगळीजणी नगी बोली म्हानै तो बेरो कोनी। म्हे तो सूता उठां जणा यो सगळो काम हुयोड़ो[35] त्यार पावै। सोमा धोबण बोली—देखां–बरोतो

---

(२९) निश्चित (३०) और (३१) क्या काम करती कि (३२) सवेरे (३३) बुहारना–झाड़ना (३४) लिपाई–पुताई (३५) पूरा हुआ

पाड़नू चाये–यो काम धन्धो कुण आयकर कर ज्याय है। एक दिन सोमा आप तड़काऊ[३६] उठकर बैठगी—देखै तो साहूकार की बेटी बड़ मांय सैं उतर कर बोल वाली[३७] आयकर भारो भारो करण लाग रही है। जद सोमा बोली—बिरा[३८], तन्ने इसी मेरी के चाय[३९] है जिको तूं रोजीना[४०] दिन ऊग्यां पहलां मेरा घर को धंधो कर ज्याय है ? जद साहूकार की बेटी बोली—तू मन्नै वाचा[४१] देदे जणा मैं मेरे मन की बात बताऊं। जद सोमा वाचा दे दिया। जणा साहूकार की बेटी बोली—मेरा भाग में दुहाग[४२] लिख्यो है जिको तू मेरा व्याह में चली चाले तो मेरा पति की रिच्छा[४३] हो जाय। मन्ने तो सुहाग तेरो दियोडो मिलैगो। मैं तो तेरी शरण आयगी। जद सोमा बोली—"तू सोच मतां करै, मैं थारै सागै चली चालस्यूँ तू मन्नै पहलांई कहदी होती, जिको मैं थारै सागै चली चालती। मेरो धोबी के घरां जलम[४४] है। इतना दिना सेवा करकै मन्नै पाप की भागण क्यूँ वणाई ? साहूकार की बेटी कह्यो—श्रैं बात को तूं बिचार मतां करै। चाय को के मोल होय है। मन्नै तेरी चाय थी जद आई हूँ अर या सेवा तेरी नहीं, तेरा गुण की है।" जणा पाछै सोमा, दोन्यू भाण–भायां के सागै चाल पड़ी। चालवां लागी जद आपका बेटां नै बोली—थांरो बाप मागर[४५] हो ज्याय जद तेल का कूंपा में धर दियो। वालियो मतना। बेटा बोल्या—आछी बात है।

सोमा धोबण—साहूकार का बेटा बेटी कै सागै साहूकार कै घरां आ पहुँची। साहूकार–साहूकारणी राजी होयगा। बेटी को

---

(३६) प्रात:काल (३७) चुप चाप (३८) भाई (३६) चाह (४०) रोज (४१) वचन (४२) वैधव्य (४३) रक्षा (४४) जन्म (४५) मृतक।

चोखो सावो दिखाकर व्याह पक्को मांड[४६] दियो। धूम-धाम सैं बरातआई सुहेलो[४७] अर ढुकाव[४८] होकर फेरां के बींद-बींदणी[४९] बैठगा। ऊँ बखत सोभा धोबण बोली—कुम्हार कैं से एक करवो ल्यावो, एक काचा सूत की आटी[५०] ल्यावो अर एक न्यातणू[५१] ल्यावो। ये तीनू चीजां आपकै कन्नै लेकर सोमा बी माडै तळै[५२] बैठगी। जोशी पण्डित आपकी पोथी वांचण लाग्या। तीन फेरा हो चुका जद बींद नाड़ गेरदी मागर होकर जा पड्यो। माडै तळै रोवणू-पीटणू माचगो। ऊँ वखत सोमा धोबण आपकी मींडी मायसूं[५३] तो मैण काठ्यो[५४]। कोयां मापसै काजळ काढ्यो, टीका मायसैं[५५] रोली काड्डी, नूवां मायसैं मेंहदी काड्डी अर आपकी चिटळी सैं[५६] साहूकार का जवाईं (बींद) कै छांटो देकर बोली—पाचली सोमोती मावसां का फळ तो ऑै साहूकार का जवाई नैं लह्यो[५७] अर आगे को फळ मेरा धणी-बेटां नै लह्यो। इतनी कहतां परांत[५८] मागर हुयोडो बींद बैठ्यो होयगो। साहूकार की बेटी को व्याह आनन्द उछावसैं होयगो जनेत-बींदणी बिदा होयगी। जद सोमा धोबण बीं साहूकार सैं सीख मांगकर आपकै घरां जाण कै ताईं चाल पड़ी। उठीनैं जैं बखत साहूकार को जवाई सरजीवण हुयो ऊंई बखत सोमा को धणी मागर होकर जा पड्यो थो सो ऊँका बेटां तेल का कूंपा में मेल दियो थो। सोमा आपकै घरां आवण लाग रही थी जद गैलां[५९]

---

(४६) निश्चित कर दिया (४७) वरात के स्वागतार्थ ढुकाव के पहले का रस्म (४८) लड़की की ओर से वर माला पहनाने और लड़के की ओर से तोरण पर छड़ी मारने की रस्म (४९) वर-वधू (५०) अटेरन पर से उतारा सूत (५१) कपड़े का टुकड़ा (५२) मण्डप के नीचे (५३) लटाओं में से (५४) निकाला (५५) तिलक (५६) कनिष्ठिका (५७) प्राप्त हो (५८) कहने के साथ ही (५९) मार्ग में।

सौमोती मावस आई सो सोमां पीपळ कै तळै बैठकर १०८ माटी की ठेकरियां धरकर कहाणी कही अर पाछै ठेकरियां नै भेळी[६०] करकै पीपळ कै तळै गाडदी अर आपका घरां कानी चाल पड़ी। घर पर आय कर देखै तो धणी मागर हुयौड़ो तेल का कूंपा में पड्यो है। जद ऊंनै बी उंईतरा[६१] चिटली सें छांटो अर सोमोती मास को आपको फळ देकर सरजीवण कर लियो। सोमोती मावस की दिछणा जोशी आयकर मांगी जद सोमा बोली—गैलां में किसी थैली धरी थी। जो उठे कांकरी ठेकरी पाई जिकी भेली करकै मैं तो पीपळ कै तळै गाड्याई थी, जिको खोदकर लियायो। जणा जोशी जायकर ऊं जगा नै खोदकर देखै तो मोहर ही मोहर मिली सो सोमा धोबण नै आसीस[६२] देतो देतो जोशी आपकै घरां आयगो। जोशणबी[६३] राजी होयगी। हे सोमोती माता! ऊंनै टूठी[६४] जिसी सब नै टूठियै। कहतानै, सुणतानै, हुंकारा भरतानै।

---

(६०) इकट्ठी (६१) उसी प्रकार (६२) आशीर्वाद (६३) जोशी की स्त्री भी (६४) प्रसन्न हुई।

सूरज रोटो

एक बार दो मां–बेटयां ही। दोयोंई रै लारलो आदीतवार आयो, जणै मां तो गई बार अर बेटी नै कैय गई, थूं लारै दो रोटा कर रखिये। बेटी एक रोटो कर'र दूसरो रोटो करीयोई हो—जितै में एक साधु आयो अर कैवण लागो—माई भिख्या घाल! मांरो रोटो तो करियोड़ो हो अर आपरो हो तवै माथै। जणै वे साधु नै कह्यो—रोटो तौ मां रो है; म्हारो तो म्हैं हाल-ताईं कड़ियो कोयनी। जणै साधु बोलियो—मांरो देदे! वे आपरी मांरै रोटे रो टुकड़ो तोड़'र साधु ने देयियो।

जिते में मां आई। कयो—बेटी खांडो रोटो कैरो अर साजो करो! जणै वे कयो—खांडो मांरो अर साजो म्हारो। जणै बेटी सूं मां लड़न लागी अर कयो—

'घी कोर मोटी कोर सागी रोटे री कोर ला।'

बेटी कयो—मां, सागी रोटे री कोर कठै सूं लावूँ। थूं म्हारो रोटो लेले। थारो मनै देदे। मां तो मांनी कोयनी। वे सागी बात कई—

घी कोर मोटी कोर सागी रोटे री कोर।

बेटी उफतगी—वे आपरै रोटे रो चूरमौ कर लियो। पांणी रो लोटो भर, घर सूं निकळगी अर एक दरखत रै ऊपर जाय बैठगी। नीचे एक राजा री असवारी उतरी।

राजा री असवारी तिसौं मरती, भूखौं मरती ही। वे ऊपर बैठी-बैठी पांणी पियो। जद पांणी रोट बको पडियो, जिकै सूं

एक तळाव भरीजग्यो । चूरमो खायो—चूरमे रो भूको पडियो । वठै चूरमैरा बड़ा-बड़ा ढिग हुयग्या । राजरी असवारी खूब चूरमो खाय लियो । पांणी पी'र खूब पेट भर लियो ।

राजा कांमदारां नै कयो कै ऊपर जाय'र देखो ! इसो कुण बैठ्यो है जिकै रै एक भौरै सूं ढिग लाग ग्या अर एक टिबकै सूं पांणी रौ तळाव भरीजग्यो ।

अबै कोमदार ऊपर गया । कोमदार ने ऊपर कई कोनी दीसियोनी । वे कयो—महाराज, ऊपर तो कई कोयनी । राजा बोल्यो—हूं आप जाईस ।

राजा गयो देखणनै । जणै राजा नै दो पांनां में अर दो फूलां रै बीच में एक छोरी बैठी दीसी । राजा पूछयो—तूं भूत है कि प्रेत ! हे कुण ! वे कयो—हूं भूत हूं ना प्रेत । हूं तो साहूकार री बेटी हूं । राजा पूछयो—तूं कुंवारी या परनोड़ी । जणै वे कयो—हूं कुंवारी हूं ।

जणै राजा वेनै नीची उतार अर चार धूड़ री ढिगळियां कर'र वे सूं परनीज गयो । परनीज वेने वो घरै लेग्यो ।

अबै होळी रै लारलो फेर आदीतवार आयो । जणै वे सवामण रो रोटो करियो; सूरज जी री पूजा करी । दूसरियां रांणियां राजा नै कयो—राजा, रांणी लायो—कांमण गारी लायो । सवा—सवा मणरा रोटा करै आतो ।

राजा रांणी कनै आयो । रांणी राजा सूं डरती-डरती रोटो आपरै गोडे नीचे दबाय लियो । राजा रांणी नै कयो—रांणीजो,

गोडे नीचे क्या है ? रांणी डरती-डरती गोडो ऊँचो करियो। वे रोटे रो सोने रो चक्कर होयग्यो।

राजा कयो—ओ क्या है ? तो कयो—ओ म्हारै दूबळे पीरै सूं भेंट आई है।

हमें एक दिन वा गोखे में बैठी ही, जितेई वेरी मां लकड़ियां री भारी लेय'र आई। बेटी ने बैठोडी वेरी मां ओळखली। लकड़ियां नै उठै ही पकट'र वा कैवण लागी—

धी कोर, मोटी कोर, म्हारै सागी रोटे री कोर ला।

बेटी मन में जांण्यो—पीछो छोडाय'र आई ही; पण आतो लारैई आय गई। वे उठ'र मांनै मार'र सात ओरां में ढ़कदी अर कूंचियां आप लेय'र बैठगी।

रांणियां फेर दोडियौं राजा कनै अर कयो—महाराज, इता दिन तो वा रोटा करती ही ! आज तो मिनख नै मार'र ढ़क दियो है।

अबै राजा आयो रांणी कनै-मनै सात ओरांरी कूंचियां दे ! हमें वा मनई मन में डरन लागी कै म्हैं तो ईयै मांय म्हारी मां नै मार'र ढकी है। अर ओ सात ओरां री चाबियां मांगै है !

वे सूरज भगवांन नै अरदास कप'र कूंचयां राजा नै दे दियौं। राजा ६ वौं ओरा खोल अर सातवौं ओरो खोल्यो। वेरै मांय नै मरियोड़ी मां रो सरीर तो सोने रो होय गयो। लोई-रसी रा हीरा-पन्ना, मांणक-मोती बणगया। राजा पूछयो—रांणी जी, ओ क्या है ? रांणी जी कयो—म्हारै दूबले पीरै सूं भेंट आई है।

कै हमें थांरो इसो दूबळो पीरो है, जणै आपां हालसां थांरै दूबळै पीरै नै देखण नै !

हमें वा मांय-री-मांय सोच करै—हमें म्हारो पीरो किसो है जिको राजा देखण नै जासी ! न्हाय-धोय, माथो धोय'र सूरज भगवान सूं अरदास कीवी—हे सूरज भाईड़ा, म्हारी लाज तूं राखै।

सूरज भगवान दरसन दिया। कयो—सवा पौर रो पीर-वासो हूं दीस। सवा-पौर होवतेई तूं उठै सूं आजाये।

हमें राजा असवारी लेय'र, घोड़ा, रथ, पालकी लेय'र सासरै गयो। उठै हमें कोई कवै—बैन आई। कोई कवै मासी आई। कोई कवै मासड़जी आया। कोई कवै बैनोई जी आया। उठै नवी नगरी बणियोडी; कठैई रसोई हुवै तो कठैई गीत गाई जै। हमें सवा-पोर रो दिन चडियो, रांणी कयो—राजा जी घरै हालो। जणै राजा कयो—रांणी जी इसो फूठरो सासरो अर इत्ती ताळ में ही हालण री बात ! अपां तो अठै छ-सात दिन रैसां।

जितेई रांणी आपरै छोरे रै दूगौं में एक भुरट घाल दियो। अबै छोरो रोवण लागग्यो। रांणी कयो—राजाजी, लारलां देवतावां दोसाऊ कर दियो—बेगा हालो।

हमें राजाजी राजधाणी नै रवाने हुय गया। जावता-जावता एक ढाळ अर एक ताजणौं उठैई भूल गया। आधी दूर गया, अर याद आई ! ताजणो अर ढाल तो उठै ही भूल आया ! नौकरां नै कयो—जावो भई, म्हारी ढाल अर ताजणौं तो लेता आवो।

नौकर अबै लेवण नै गया। उठै तो भूत-भूतणियां नाचै, लोई-रसी री नदियां बेवै। एक बोरटी माथै ताजणो अर ढाल पड़िया। नौकर डरता-डरता ताजणो अर ढाल लेय'र दौड़ता-दौड़ता आय'र राजानै कयो—महाराज, उठै तो नवी नगरी बसियोड़ी ही ! अबार तो उठै भूत-भूतणी नाचै है। लोई-रसी री नदियां बवै है !

राजा उठ'रे रांणी कनै गयो। कह्यो—कळ जांणौ, कांमण जांणौ ! रांणी कयो—महाराज, कळ-जोणू ना कांमण जांणू। मां-बापां रै जाई, सासू सुसरां रै आई म्हारै पी'र-वासो किसो हो ! म्हारै तो एक मां थी, जिकै नै म्हैं मार'र ओरै में ढकली। म्हारै तो सवा-पोर रो पीरवासो दे'र सूरज भगवान परतंग्या राखी।

हे सूरज भगवांन, वेनै पीरवासो बतायो जिसो सकळ नै बताये।

अथ चतुर्थी री कथा लिख्यते

एक समै रै विषै राजा कृतवीर्य जी श्री पूछै है—ब्रह्मन ! गणेश चतुर्थी रो व्रत कै कीयौ ? इयै पृथ्वी रै विषै कै प्रकाश कीयो ? तिकै रो पुन्य कांसु ? फल कांसु ? थे दयाकर कहो। तद श्री ब्रह्माजी राजा सूं कृपाकर प्रसन हुय कहै छे। हे राजन् ! पुरा पूर्व स्वांमी कार्त्तिका जी गया थका महादेव जी रै वचन पार्वती मास च्यार व्रत कीयो। तद पुत्र प्रीत हुई। पंचमै मास स्वांम कार्त्तिक जी श्री सहित आया। फेर राजा अगस्तजी रै समुद्र पीवण री वांछा हुई। तद रिषां री आग्या सूं अगस्तजी व्रत कीयो। तिकै सूं समुद्र पीगया। फेर नल दमयंती नैं विखो पड़ीयो। तद नल दमयंती रो वियोग हुवो। तद नल दमयंती व्रत कीयो। तद राजा नल आय मिल्यौ। मास च्यार पूर्वे श्री कृष्ण रो पोतरो अनुरुध प्रद्युतम्न रो पुत्र चित्र लेखा ले गई। तद श्री रुक्मणी जी और सर्व जादव चिंतातुर हुवा। अनेक प्रकारां रा जतन कीया। पिण खबर कांइ नहीं। तद रुक्मणीजी कयो—हमांरो पिण पुत्र नुं दिन दसां मांहि सर्व ले गयो थो तद हूं पिण शोकाकृति हुई थी। लोकां रा बालक देख कहती—इसो पुत्र हमारो थो। इयै तरै चिंतातुर थकी लोक करावी। तिकै समै लोमशजी आया। घणी श्रुश्रुषा कीवी। आपरी करुणा कही। तद लोमशजी कह्यो—रुक्मणी जी तो तनै उपदेस कहुं, तिको तूं कर, थारा सर्व मनोरथ पूर्ण होसी। पुत्र री पिण प्राप्त होसी। तद कयो—संकट चोथ रो व्रत कर। चंद्रोदय व्यापनी व्रत करै। चंद्रोदय रै समै गणेशजी री पूजा कीजै, चंद्रमां नै अर्ग दीजै व्रत कीजै। पूनम सूं व्रत कीजै। कूड़ै, पापी, पाखंडी सूं मित्रां-पणा न कीजै। तद गणेशजी री आग्या सूं माहा वदि चोथ रो मास बारै व्रत कीयो। तद व्रत रै प्रताप गणेशजी रा प्रसाद सूं

दैत्य संबर मार रति स्त्री परणी जी। प्रद्युम्न तले आयो। तद रुक्मणी जी रै कह्यो—प्रद्युम्न जी ! पण ज्युं लोमशजी, तिको विधांन पूजा व्रत कीयो थौ, विधांन सूं कीयो। तद वांणासुर रै बंध मांहि पुत्र री खबर पाई। तद वुधकर ले आया। औ व्रत गणेशजी रै संतोषि रो करणहार छै। सिध बुध दैण हार छै अनेक संकट रै नासरो करणहार छै। इयै व्रत रै प्रताप सूं प्रद्युम्न अनुरुधजी नूं उषा वाणासुर रो बेटी सहित पायो। फेर ब्रह्माजी कहै—हे राजन् कृतवीज ! मैं पिण सृष्ट रचण समर्थ वास्तै व्रत कीयौ तैसुं सृष्ट री सामर्थ्या पाई और पिण रिषीस्वर, देवता, मनुष्यां विघ्न शांतरै वास्तै व्रत कीयो। और पिण दानवा यक्षां, किन्नरी, सर्पां, रीक्षसां आपदा रै विषै शांत रै वास्तै कीयौ।

इयै व्रत समांन इह लोक रै विषै सर्व सिध रो करता और नहीं। बीजो तपस्या, दांन, यज्ञ, तीर्थ, मंत्र-विद्या नहीं। सारां सूं श्रेष्ट छै। हे राजा ! इयै कथा सुणी, उठै भोजन कर हृदै गणेशजी रै ध्यांन करै। ब्रह्मा नूं भोजन कराया पछै आप कुटंब सहित भोजन इयै तरै थोड़ा महिनां मांह करै। मनोरथ सिध हुवै। हे राजन् ! घणो कासुंण कहुं। ततकाल सिध रो करण-हार छै। औ व्रत अभक्त नूं, नास्तक नूं, ठगो नूं उपदेश न कीजै। परमेस्वर रो भक्त हुवै। आपरै सेवक नूं, पुत्र नूं, साध नूं, उपदेश दीजै। ब्रह्माजी कहै—राजा तूं हमारो भक्त छै, धर्म श्रेष्ट छै। खेत्रीयां रै विषै श्रेष्ट छै। लोकां रो कार्य रो कर्त्ता छै। एसु मैं व्रत उपदेस कीयो छै। सितकै वास्तै यहि संसार विषै करण योग छै। तिकै सूं सारा कार्य सिध हुवै। हारै पुत्र नूं अहीज मन वंछत। अवर नर नारी रो कार्य रो उद्यम हुवै तद और व्रत करै। ततकाल सिध हुवै। सर्व विघ्न मिट जावै।

आहीज कथा ब्रह्म पौराणै शौनकादिक नूं कही छै। ऐसो वचन सुण राजा कृतवीर्ज व्रत कीया। तिकै प्रताप सूं अखल पुत्र संपत्र संपत राजा भोग भोगवीयो। अन्त समै परम पद पायो और पिण नर-नारी और व्रत करै, गणेशजी री पूजो करै तो सारा मनोरथ रा फळ पावै। बीजौ इयैं माहातम नै आपरी प्राप्त कर सुणै, तिको सारां व्रतां रो फळ पावै। इति गणेशजी री चतुर्थी व्रत कथा सम्पूर्णं। लिखतं केवलचंद, सवाई मध्ये० लि०॥

पत्र २ वृहद्-ज्ञान-भण्डार, अबीर संग्रह, पोथी नं० १६, प्रति नं० २२६, बीकानेर।



सादूल राजस्थानी रिसर्च इंस्टीट्यूट के प्रकाशन

राजस्थान भारती (उच्चकोटि की शोध पत्रिका)

भाग १ और ३	मूल्य ८) प्रति भाग
" ४ से ७	" ६) प्रति भाग
भाग २ [केवल एक अङ्क] २),	टेसीटोरी विशेषांक ५) रु०
पृथ्वीराज राठोड़ जयन्ती विशेषांक	मूल्य ५) रु०

प्रकाशित ग्रन्थ

१-क्लायरण[ऋतुकाव्य]मू. ३।), २-बरसगांठ[राजस्थानी कहानियाँ]मू.१॥)
३-आभै पटकी [राजस्थानी उपन्यास] मूल्य २)५०

नये प्रकाशन

१. राजस्थानी व्याकरण
२. राजस्थानी गद्य का विकास
३. अचलदास खीची री वचनिका
४. हमीरायण
५. पद्मिनीचरित चौपाई
६. दलपत विलास
७. डिंगल गीत
८. परमार वंश दर्पण
९. हरिरस
१०. पीरदान लालस ग्रन्थावली
११. महादेव–पार्वती बेल
१२. सीताराम चौपाई
१३. सदयवत्स वीर प्रबन्ध
१४. जिनराजसूरि कृति कुसुमांजली
१५. विनयचन्द्र कृति कुसुमांजली
१६. जिनहर्ष ग्रन्थावली
१७. धर्मवर्द्धन ग्रन्थावली
१८. राजस्थानी दूहा
१९. राजस्थानी वीर दूहा
२०. राजस्थानी नीति दूहा
२१. राजस्थानी व्रत कथायें
२२. राजस्थानी प्रेम कथायें
२३. चन्द्रायण
२४. दम्पति विनोद
२५. समयसुन्दर रास पंचक

पता —

सादूल राजस्थानी रिसर्च इंस्टीट्यूट, बीकानेर (राजस्थान)